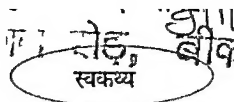
दीये

आदर्श साहित्य संघ, चूरू (राज०)

दीये से दीया जले

गुरुदेव तुलसी





स्वकथ्य

मनुष्य के भीतर विश्वास की अकूत सम्पदा है पर वह उसका उपयोग नहीं कर रहा है। उसके भीतर अपरिसीम आनन्द है, पर वह उसका अनुभव नहीं कर रहा है। उसके भीतर अन्तहीन शक्तियों का खजाना है पर वह उसे खोज नहीं पाया है। उसके भीतर अपरिमित आलोक है, पर उसकी आंख उसे देख नहीं पाई है। वह अंधेरे में खड़ा है। उसके चारों ओर सन्देह, भय, अभाव, कष्ट और नामदी की कटीली झाड़ियां घिरी हुई हैं। वह भ्रान्तियों के घेरे में खड़ा है, इसलिए अस्थिरता का जीवन जी रहा है। किसी व्यक्ति के प्रति क्या, विचार के प्रति भी उसका मन आश्वस्त नहीं है। इसी कारण वह अत्राण और अशरण बन रहा है।

अविश्वास के इस युग में भी मैंने अपने विश्वास को बद्धमूल रूप में सुरक्षित रखा है। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि काल और क्षेत्र की सीमाएं तथा परिस्थितियों का दबाव अध्यात्म एवं मानवीय मूल्यों की मूल्यवत्ता को कम नहीं कर सकता। जब तक अध्यात्म और मानवीय मूल्य जीवित हैं तब तक ही जीवन है। इनके अभाव में जीने वाले मनुष्यता की लाश को ढो सकते हैं, उसे जी नहीं सकते।

इस संसार में जीवित व्यक्ति अधिक हैं या मृत? इस प्रश्न का सीधा उत्तर दिया जा सकता है, पर मैं देना नहीं चाहता। जीवित व्यक्ति वे हैं, जो आध्यात्मिक और नैतिक मूल्यों को जीते हैं। जिनके जीवन में इन मूल्यों का स्थान नहीं है, वे जीते हुए भी मृत हैं। कवि ने लिखा है—

> यस्य धर्मविहीनानि, दिनान्यायान्ति यान्ति च।
> स लोहकारभस्त्रेव श्वसन्नपि न जीवति॥

जीवन के दिन अंजुरी में भरे जल या मुट्ठी में भरी रेत की तरह फिसलते

रहते हे। इन दिना मे धम की आराधना करने वाला अपने जीवन को साथक वना लेता हे। जिस व्यक्ति के जीवन के पल धमशून्य होते हे, वह लुहार की धाकनी की तरह श्वास लेता हुआ भी जीवित नही हे।

विश्वास या आत्मविश्वास से व्यक्तित्व का निमाण हाता ह। जिसका विश्वास चुक जाता ह, उसका व्यक्तित्व धुधला जाता हे। यह किसी शास्त्र की नही, अनुभव की वाणी हे। यह अनुभव जन-जन का अनुभव वने, एसा मुझे अभीप्ट हे। इस दृप्टि से मे अपने प्रवचनो, लेखा ओर सवादा म आत्म-विश्वास को सुरक्षित रखन पर वल देता रहा हू। विश्वास की ज्योति पर आइ राख का हटाकर उसे पुन प्रज्वलित करने मे साहित्य की भूमिका वहुत महत्त्वपूण हो सकती हे। आज रेडियो, टी वी, वी सी आर आदि श्रव्य ओर दृश्य माध्यमो न साहित्य के आकपण को कम किया हे। फिर भी उसके दीघकालीन प्रभाव का अस्वीकार नही किया जा सकता।

वतमान पत्र-पत्रिकाआ की भीड म नेतिक चतना का सवाहक एक पाक्षिक पत्र ह अणुव्रत। यह नेतिक मूल्या की प्रतिप्ठा म सतत जागरूक ह। इसके माध्यम से म अपने विचारा को हजारा पाठका तक पहुचा रहा हू। उन विचारा को सकलित कर साध्वी-प्रमुखा कनकप्रभा ने एक पुस्तक तेयार की—'वेसाखिया विश्वास की।' पाठका न उस पुस्तक को पढा तो उन्ह अपन डोलत हुए विश्वास को स्थिर करने मे एक सशक्त आलम्वन मिला।

विश्वास की वसाखिया क सहारे चलने वाले व्यक्ति अपन पथ म अधरा देखकर एक वार सहम जात ह। एस लोगा के लिए एक ऐस दीये की अपेक्षा ह जा उनके पथ को आलाकित कर सके। एक दीया हजार दीय जला सकता हे। इस प्ररणा स अभिप्ररित हा साध्वी-प्रमुखा ने मेरे विश्वास स नि सृत विचारा के उच्छ्वासा को सकलित कर 'दीये स दीया जल' पुस्तक सम्पादित कर दी। अध्यात्म ओर नेतिकता म रुचि रखने वाले पाठक इस पटकर अपन वुझाए हुए विश्वास का दीया जलाएग आर अपने जीवन का पथ आलाकित करग, एसा विश्वास ह।

जन विश्व भारती लाडनू ३४१ ३०६ —गणाधिपति तुलसी
२१ जून १९९५

सम्पादकीय

अनुयागद्वार सूत्र का अध्ययन करते समय एक वाक्य पर ध्यान केन्द्रित हुआ—दीवसमा आयरिया—आचार्य दीपक के समान होते हैं। मैंने सोचा—आचार्य का स्थान बहुत ऊंचा होता है। उनको सूर्य और चन्द्रमा की उपमा दी जा सकती है। समुद्र और धरती की उपमा दी जा सकती है। यह दीपक की क्या उपमा? दीपक तो कोई भी बन सकता है। फिर सोचा—आगम का एक भी अक्षर निरर्थक नहीं हो सकता। आगमकार विशिष्ट ज्ञानी थे। अंग-आगमों की रचना तीर्थंकरों की देशना के आधार पर होती है। उनका वचन स्वतः प्रमाण होता है। उपांगों के रचनाकार स्थविर और आचार्य होते हैं। अनुयोगद्वार का स्थान मूल आगम में है। इसमें आचार्य आर्यरक्षित का कर्तृत्व है। वे पूर्वधर आचार्य थे। उन्होंने जो लिखा है, उसका निश्चित रूप से गंभीर अर्थ होना चाहिए। इस विचार यात्रा में मैंने पूरे सन्दर्भ को पढ़ा—

> जह दीवा दीवसयं पइप्पए, सो य दिप्पए दीवो।
> दीवसमा आयरिया, दिप्पंति परं च दीवेंति॥

एक दीपक से सैकड़ों दीपक जल उठते हैं। इतने दीपकों को प्रज्वलित करने पर भी उस दीपक का तेज मन्द नहीं होता। वह पूरी तरह से दीप्त रहता है। आचार्य दीपक के समान स्वयं दीप्तिमान रहते हैं और दूसरों को भी दीपित करते रहते हैं।

दीपक जलकर प्रकाश फैलाता है, यह काम सरल नहीं है। पर अपने तेज से दीपकों की एक लम्बी कतार को दीप्तिमान् बना देना बहुत महत्त्वपूर्ण काम है। आचार्य के पास ज्ञान, दर्शन और चारित्र की जो विलक्षण दीप्ति होती है, उसे वे सैकड़ों की सीमा से पार लाखों-करोड़ों व्यक्तियों में संप्रेषित

कर देने हे, इसलिए उनके लिए इस उपमा का वशिष्ट्य ह।

सूरज प्रकाश का पुञ्ज ह। वह अन्धकार को दूर कर चमकता हे। पर उसकी अपनी सीमाए ह। वह सीमित समय तक चमकता ह। समय की सीमा पूण हाते ही वह अस्ताचल की आट म चला जाता हे ओर धरती पर पु अन्धकार का साम्राज्य छा जाता हे। अस्ताचल की ओर जाते समय सूय एक प्रश्नचिह्न छाडता हे आर अपनी अनुपस्थिति मे किसी सबल व्यक्ति को प्रकाश फेलाने का दायित्व देना चाहता हे। किन्तु चारा ओर एक सपाट मोन फेल जाता हे। काइ भी इतना साहस नहीं जुटा पाता। उस समय नन्हा-सा दीपक खडा होकर आत्मविश्वास के साथ कहना हे— आप निश्चिन्त होकर जाइए। मे रात भर जागृत रहूगा। अपने सामर्थ्य के अनुसार अन्धकार से लड़ूगा ओर ससार मे प्रकाश के अस्तित्व को बचाकर रखूगा।

समय बदला, लोगो की जीवन-शेली बदली, मकान बदले, उपकरण बदले ओर प्रकाश के साधन भी बदल गए। अब दीये का प्रकाश साहित्य की परिधि म सिमट कर रह गया। घर-घर मे बल्बो ओर ट्यूबलाइटो की जगमगाहट आ गइ हे। दीये की मद्धिम रोशनी दखने के लिए आखे तरस कर रह जाती ह। दीपमालिका के अवसर पर कुछ घरा की मुडेरो पर माटी के दीया की कतारे अवश्य जगमगाती ह, पर वे भी डेलाइट्स की चकाचाध मे फीकी होकर रह जाती हे। अब न ता चाद-तारा म वह चमक दिखाइ देती ह आर न दीया मे वह राशनी। ऐस समय म दीयो की बात करना भी पिछडेपन का पतीक माना जा सकता ह। किन्तु जिस देश क ऋषि-मुनि भारतीय सस्कृति के मूल से जुडे हुए ह वे अपने गोरवमय अतीत की विस्मृति नहीं कर सकते।

आज हम जिस युग म जी रह ह माटी क दीये की बात ही क्या, मनुष्य के विश्वास का दीया भी बुझ रहा ह। एक समय था, जब भारतीय चिन्तन-धारा का प्रवाह इस रूप म बहता था—

> वृत्त यत्नेन सरक्षेत् वित्तमायाति याति च।
> अक्षीणो वित्तत क्षीण , वृत्ततस्तु हता हत॥

पुरुषाथ का प्रयोग कर वृत्त—चरित्र की सुरक्षा करा। वित्त—धन आना जाना रहता हे। उसकी चिन्ता छाडा। धन स क्षीण व्यक्ति कभी क्षीण

नहीं होता। किन्तु जिसका चरित्रबल समाप्त हो जाता है वह पूर्ण रूप से समाप्त हो जाता है।

इस आस्था को प्रज्वलित रखने वाला दीपक आज कहां है? मनुष्य सोचता है कि इस युग में नीति और चरित्र के बल पर जीवन जीना दुष्कर है। उसके विश्वास की जड़ हिल गई है। इस समय में अणुव्रत अनुशास्ता गुरुदेव श्री तुलसी ने विश्वास का दीया जलाने का वज्र संकल्प अभिव्यक्त किया।

दीये से दीया जले—उनके संकल्पों के हिमालय से प्रवाहित एसी चिन्तन धारा है जो युग की ऊष्मा से संतप्त मानव मन को शीतलता प्रदान कर सकती है।

दीये से दीया जले—उनके आत्मविश्वास की दीप्ति से उछले हुए ऐसे स्फुलिंग हैं जो अविश्वास के अंधेरे में भटके हुए लोगों को पथ दिखा सकते हैं।

दीये से दीया जले—उनके विचारों की वह सम्पदा है, जो वैचारिक दरिद्रता के युग में मनुष्य को नई सोच की धरती दे सकती है।

व्यक्ति-व्यक्ति के मन में विश्वास का दीया जलाने की अभिप्रेरणा से भरा हुआ यह उपक्रम प्रत्येक पाठक के मन को आलोकित करे और उन तक पहुंचा हुआ आलोक आगे-से-आगे फैलता रहे यही इस कृति के सृजन व सम्पादन की सार्थकता है।

ऋषभ द्वार —साध्वीप्रमुखा कनकप्रभा

लाडनूं ३४१ ३०६

२१ जून १९९५

अनुक्रम



दीये से दीया जले

गुरुदेव तुलसी

१ सकल्प विश्वास की सुरक्षा का

अणुव्रत पाक्षिक का एक स्तम्भ है— 'मेरा विश्वास है। सन् १६८४ से इस स्तम्भ के अन्तगत मैं अपने विचार दे रहा हू। राजनीतिक, सामाजिक, पारिवारिक, शैक्षणिक आदि विभिन्न सन्दर्भों में मैंने सकारात्मक दृष्टि से सोचा और ऐसा विश्वास व्यक्त किया, जो लोकजीवन को विश्वास के धागे में आवद्ध कर सके। किन्तु एक दशक की विचारयात्रा का विश्लेषण करता हू तो पाता हू कि विश्वास का धरातल ठोस नहीं है। ऊपर-ऊपर से हर व्यक्ति दूसरों को अपने विश्वास में लेना चाहता है। पर भीतर-ही-भीतर सन्देह की नागफनी सिर उठाए खडी रहती है। जब व्यक्ति स्वय किसी का विश्वास नहीं करता तो दूसरे उसका विश्वास कैसे कर पाएगे। अविश्वास की पटरी पर जीवन की गाडी चल रही है। कहा नहीं जा सकता, कब कहा दुर्घटना घटित हो जाए।

डॉक्टर रोगी की चिकित्सा करता है। पर रोगी को यह विश्वास नहीं होता कि उसकी चिकित्सा सही हो रही है। क्योंकि वह जानता है कि उसके डॉक्टर का कई लोगों के साथ अनुबंध है। दवा निर्माता और दवा-विक्रेता के साथ उसका अनुबंध है। एक्सरे मशीन वाले के साथ अनुबंध है। ब्लड, यूरिन आदि टेस्ट करने वाले के साथ अनुबंध है, और भी कई लोगों के साथ अनुबंध है। उसके हाथ से लिखी पर्ची देखकर सम्बन्धित व्यक्ति डॉक्टर के खाते में एक निश्चित राशि जमा कर देता है। जहा आर्थिक बुनियाद पर चिकित्सा होती है, वहा रोगी डॉक्टर के प्रति विश्वस्त कैसे रह सकता है ?

नेता चुनाव में प्रत्याशी बनते हैं उस समय जनता से सीधा सम्पर्क करते हैं। उसके सुख-दुःख को सुनते हैं। उसे दुःख-दुविधा दूर करने का आश्वासन देते हैं। चुनाव घोषणापत्रों में बड-बडे वादे करते हैं। किन्तु चुनाव

जीतने के बाद, वोटों के गलियारे से सत्ता के सिंहासन तक पहुंचने के बाद क्या सम्पर्क सूत्र बने रहते हैं? क्या दिए हुए आश्वासनों के आधार पर लक्ष्य की दिशा में गति होती है? क्या वादे पूरे किए जाते हैं? यदि ऐसा कुछ भी नहीं होता तो वह विश्वास जीवित कैसे रहेगा, जिसके बल पर जनता अपने मत देती है?

छोटा राज्यकर्मचारी हो या बडा अफसर, नि स्वार्थ भाव से दायित्व निर्वाह की मानसिकता पगु बनती जा रही है। पत्र-पुष्प या चाय पानी की व्यवस्था हुए बिना किसी भी वर्ग में काम नहीं होता। ऊपर से नीचे तक एक ही क्रम चलता हो तो कौन किसे कहे? जितना बडा काम, उतनी बडी रकम। उसमें सबकी भागीदारी तयशुदा रहती है। ऐसी स्थिति में कोई व्यक्ति ईमानदारी की बात करता है तो उसे स्थानान्तरण की समस्या से जूझना पडता है। विश्वास और कर्तव्यनिष्ठा के सिद्धान्तों की जैसी नृशंस हत्या हो रही है, क्या उन्हें किसी का सरक्षण मिल सकेगा?

स्वार्थ-सिद्धि का यह नाटक बडे लोग ही खेल रहे हैं, यह बात नहीं है। एक वास्तुशिल्पी हो या बढईगिरी करने वाला, उसके भी दुकानदारों के साथ अनुबंध रहते हैं। बढिया मारबल, बढिया काठ या अन्य किसी भी माल के विक्रय प्रसग में सम्बन्धित व्यक्ति विक्रेता के साथ जाकर आमने सामने हो जाता है। दुकानदार उसकी दलाली का पैसा उसके खाते में जमा कर देता है। यह किसी व्यक्ति विशेष या वर्गविशेष की बात नहीं है। आम आदमी ऐसा करता है और आम आदमी को उसका दुष्परिणाम भोगना पडता है। चीनी-घोटाले प्रतिभूति घोटाले जैसे घोटालों पर ससद में अच्छा खासा हगामा देखा जा सकता है, पर इनके मूल में खडे अविश्वास की कहीं कोई चिकित्सा नहीं होती। आज, जबकि जन-जन का विश्वास चुक रहा है और विश्वास शब्द की विश्वसनीयता क्षीण हो रही है, ऐसी स्थिति में विश्वास शब्द का उपयोग करना चाहिए या नहीं? इस प्रश्न का सीधा-सा समाधान यही है कि जो व्यक्ति विश्वास खो चुके हैं वे इसका उपयोग भले ही न करें। किन्तु जिनका विश्वास जीवित है उनका दायित्व है कि वे टूटते हुए विश्वास को सहारा दें।

सन् १९९४ का पूरा वर्ष सत्तादल और प्रतिपक्षी दलों के बीच अविश्वास

की खाइ को गहरान वाला सिद्ध हुआ हे। इसी प्रकार छाट स्तरो पर भी विश्वास की दीवार हिली है। सन् १९९५ के प्रवेशद्वार पर अविश्वास ही दस्तक देता रहेगा तो आने वाला एक वर्ष फिर इसी के नाम लिखा जाएगा। यदि इस स्थिति को बदलना ह तो सब लाग एक दूसर का विश्वास करन आर उस विश्वास की सुरक्षा करन का सकल्प स्वीकार कर। यदि ऐसा हुआ तो मनुष्य की जीवनशली और काम करने की शली म दीखता अन्तर आएगा, एसा विश्वास ह।

२ स्वस्थ समाज का स्वरूप

समाज के दा रूप हे—रुग्ण समाज आर स्वस्थ समाज। रुग्णता किसी को काम्य नही ह। हर व्यक्ति स्वास्थ्य चाहता ह। स्वास्थ्य पान के लिए वह स्वस्थ समाज की खोज करता ह। पर उसके सामने कठिनाई एक ही हे कि वह स्वस्थता ओर रुग्णता के मानदण्डो मे उलझ जाता ह। जिस समाज म काइ गरीब न हा, काइ बेरोजगार न हो, काइ सुख-सुविधा के साधनो स वचित न हा ओर प्राकृतिक आपदाओ से प्रताडित न हो, वह समाज स्वस्थ हे। यह एक मानदण्ड ह। दूसरा मानदण्ड शेक्षणिक विकास की परिक्रमा करता ह। जिस समाज मे अधिक-से-अधिक शिक्षा सस्थान हो गावो आर ढाणिया मे भी पढन की सुविधा हो ओर जहा कोइ निरक्षर न हो, वह समाज स्वस्थ हे। कुछ लोगो की दृष्टि म स्वस्थता या उच्चता का मानक ह विलासिता की साधन सामग्री। जिस समाज मे हर व्यक्ति के पास अपनी कार हो, फ्रिज हा, कूलर हा टी वी हा, कम्प्यूटर हा कलक्युलेटर हा तथा इसी प्रकार की नई नइ आविष्कृत होने वाली सब वस्तुए हा, वह समाज स्वस्थ हाता हे।

हर व्यक्ति का अपना चिन्तन आर अपना दृष्टिकाण ह। दूसरो का चिन्तन गलत हे ओर मेरा चिन्तन सही ह, ऐसा आग्रह म क्या करू? मुझे भगवान महावीर का अनेकान्त दर्शन प्राप्त हे। इसके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति के चिन्तन म सत्य का अश हा सकता ह। समस्या वहा पेदा हाती हे, जहा सत्य क एक अश का सपूर्ण सत्य मान लिया जाता ह। समस्या का दूसरा रूप ह अपने चिन्तन का सत्य मानकर दूसरा के चिन्तन का असत्य प्रमाणित करने का प्रयास करना। म अपने चिन्तन का न तो सपूर्ण सत्य मानता हू आर न दूसरा के चिन्तन का नितान्त असत्य स्वीकार करता हू। मेरे अभिमत से स्वस्थ समाज का स्वरूप यह हो सकता हे—

- जिस समाज म कोई किसी निरपराध प्राणी की हत्या नहीं करता।
- जिस समाज म काइ किसी पर आक्रमण की पहल नहीं करता।
- जिस समाज म कोइ हिसात्मक ताडफाड नहीं करता।
- जिम समाज म कोइ किसी का अछूत नहीं मानता।
- जिस समाज म साम्पदायिक उन्माद नहीं होता।
- जिस समाज म व्यावसायिक अनैतिकता नहीं होती और उसे प्रतिष्ठा भी नहीं मिलती।
- जिस समाज म लोकतत्र की धज्जिया नहीं उडती, चुनाव के प्रसग मे अनतिक आचरण नहा हाता।
- जिस समाज पर सामाजिक कुरूटियो का शिकजा कसा हुआ नही रहता।
- जिस समाज म मादक व नशीले पदार्थों का उपयोग नहा हाता।
- जिस समाज मे सग्रह ओर भोग को अनियत्रित नहीं रखा जाता।
- जिस समाज म पयावरण की उपक्षा नहीं होती।

इस प्रकार की आर भी कुछ वान हा सकती है। ये ऐसी बात हे जा किसी एक व्यक्ति, समाज या राष्ट्र के लिए ही उपयोगी नही ह। इनके द्वारा पूरे विश्व की चेतना को प्रभावित या जागृत किया जा सकता ह। विस्तार को समटा जाये नो इसे एक शब्द म प्रस्तुति दी जा सकती हे। यह शब्द हे—अणुव्रत। अणुव्रत स्वस्थ समाज सरचना की बुनियाद हे। जा लोग अपने समाज को स्वस्थ बनाना चाहते ह, वे व्यक्ति-व्यक्ति के जीवन को अणुव्रत आचार-संहिता के साचे म ढालन का पयत्न करे। यह एक सामूहिक अनुष्टान ह। इसम जनशक्ति का सम्यक् नियोजन हा पाया ता समाज की रुग्णता का सरलता से दूर किया जा सकता ह।

३ सत्पुरुष बनाने का उपक्रम

इस सृष्टि का एक महत्त्वपूण प्राणी हे मनुष्य। इस धरती पर पहला मनुष्य कब आया, यह कहना कठिन हे। किन्तु आज वह पाच अरब से भी अधिक सख्या मे अपनी अस्मिता की लडाइ लड रहा हे। मनुष्य जाति एक ओर अविभाज्य हे, पर सब मनुष्यों का स्वभाव एक जेसा नहीं होता। राजर्षि भर्तृहरि ने चार प्रकार के मनुष्यों की चचा की हे—सत्पुरुप, साधारण पुरुप, राक्षस पुरुप ओर अनाम पुरुप। सत्पुरुप वे होते ह, जो अपने स्वार्थ को गाण कर परहित का सम्पादन करते हे। जो लोग अपना स्वाथ साधते हुए परहित-साधन क लिए तत्पर रहत ह, व साधारण पुरुप होते ह। जो व्यक्ति अपना स्वाथ सिद्ध करने के लिए परहित को कुचल देते हे, वे राक्षस पुरुप होते ह। जा लोग विना किसी प्रयोजन परहित को विघटित करते हे, वे कौन पुरुप हे? उनके लिए कोई विशेपण ही उपलब्ध नही हे। इसलिए उन्हे अनाम पुरुप कहा जा सकता ह।

अणुव्रत का उद्देश्य हे कि मनुष्य सत्पुरुप बने। म अपनी प्रवचन-सभाओ म बहुत बार कहता हू कि आप जेन बने या नही, गुडमेन अवश्य बने। गुडमेन बन, अच्छे आदमी बन, सत्पुरुप बने। मनुष्य जीवन की साथकता किसी के हिता को कुचलन म नही हे। ससार म जितने आतकवादी ह, वे क्या कर रह हे? दूसरा के हितो का विघटित करना ही उनके जीवन का लक्ष्य बन गया हे। अन्यथा वे निरपराध व्यक्तियो का अपहरण क्या करत ह? फिरोती मे लाखों करोडो रुपया की माग क्यो करते ह? मासूम बच्चो का अपहरण क्यो करत ह? रुपये न मिलने पर उनको मात के घाट क्या उतार देते हे? ये कुछ एसे प्रश्न ह, जिनके उत्तर किसी गहरी खामोशी म खो गए ह।

आतकवादी प्रत्यक्ष हिसक ह। इस ससार म परोक्ष हिसक भी कम नहीं

ह। जहर की गोली को सुगरकोटेड कर दो से क्या उसका जहर समाप्त हो जाता है? हिंसा के मनोभावों की दिशा बदलने मात्र से क्या वे अहिंसा का रूप पा सकते हैं? जातीयता की धरती हिंसा के बीज अंकुरित करने के लिए सब प्रकार से उर्वर है। साम्प्रदायिकता की विषबेल पर आने वाले फलों का परिणाम हिंसा के रूप में प्रकट होता है। छुआछूत की भावना मनुष्य के मन में पनप रही हिंसा की अभिव्यक्ति नहीं है तो और क्या है? नशे की संस्कृति हिंसा के अतिरिक्त अन्य भयंकर अपराधों की भी जननी है। चुनावी हिंसा का बुखार तो लाइलाज बनता जा रहा है। घरबारी लोगों के लिए अर्थहिंसा से बचना संभव नहीं है किन्तु प्रकृति का अतिमात्र दोहन क्या अनर्थ हिंसा नहीं है? आर्थिक भ्रष्टाचार से कौन-सी अहिंसा फलित होती है? हिंसा के ये नए-नए चेहरे इतने खौफनाक हैं कि इनके कारण देश में असुरक्षा और अनिश्चिन्तता की भावना दिनोंदिन अधिक पुष्ट होती जा रही है।

हिंसा के इस गहरे अन्धकार में लोग भयभीत हैं। प्रातःकाल घर से बाहर जाते समय उनके मन में यह आशंका रहती है कि सांझ तक सही सलामत घर लौट पाएंगे या नहीं। इस अंधेरे में कोई प्रकाशदीप है तो वह है संकल्प की चेतना, व्रत की चेतना। व्रत भारतीय संस्कृति का प्राणतत्त्व है। व्रत और कानून में अन्तर है। कानून आरोपित होता है, व्रत स्वीकृत होता है। कानून टूटता है तो व्यक्ति को ग्लानि नहीं होती। कानून तोड़ने से यदि कोई डरता है तो उसके परिणाम से डरता है, दण्ड से डरता है। व्रत या संकल्प टूटता है तो व्यक्ति का मन ग्लानि से भर जाता है। जब तक वह उसका प्रायश्चित्त स्वीकार नहीं कर लेता, शान्ति से नहीं जी सकता। इसी कारण मैंने व्रत शब्द को अपने मिशन के साथ जोड़ा। लोक कल्याणकारी यह मिशन 'अणुव्रत' और कुछ नहीं, मनुष्य को अच्छा मनुष्य—सत्पुरुष बनाने का उपक्रम है।

४ प्रासगिकता सयम की

अणुव्रत जोवन का दशन हे, समाज का दशन ह, मानवीय मूल्या का दर्शन ह आर चरित्र का दशन ह। साइन्स ओर टेक्नालॉजी से उसका काइ विरोध नही ह। उसका विरोध हे असयम से। जिस राष्ट्र के जीवन दर्शन म असयम घुला हो वह राष्ट्र सयम, चरित्र या मानवीय मूल्यो को प्रतिष्ठित करने का पयास क्या करगा? जिस राष्ट्र की धमनिया म असयम का रक्त प्रवाहित हो रहा हो, वहा सयम का आदश क्या माना जाएगा? त्याग ओर भोग की दिशाए सवथा भिन्न हे। जिस प्रकार पूव आर पश्चिम के रास्ते अलग-अलग होत हे, उसी प्रकार सयम आर असयम के रास्ते भिन्न भिन्न ह। अणुव्रत सयम का रास्ता ह।

काइ भी सदी क्या न हो, पाचवी सदी हो या पचीसवी, सयम कभी अप्रासगिक नही हो सकता। जब तक सयम की प्रासगिकता ह, अणुव्रत कभी अप्रासगिक नही बन पाएगा। अणुव्रत व्यक्ति को सन्यासी बनाने की बात नही करता। वह जीवन को परिष्कृत या सशोधित करने का निर्देश दता ह। उसकी न कोइ जाति ह आर न काइ सम्प्रदाय। वह किसी वग विशप के लिए ह, यह बात भी नही हे। क्षेत्रीय सीमाए उसकी गति को बाधित नही करती। मानव मात्र का सयम की दिशा म प्रेरित करने वाली आचार सहिता का नाम हे—अणुव्रत।

अणुव्रत न स्वग की चचा करता ह ओर न मोक्ष की। वतमान जीवन की शली केसी हो? उसका एक मॉडल प्रस्तुत करता ह—अणुव्रत। इस सदी का मनुष्य हिसा, आतक युद्ध वमनस्य, घृणा आदि समस्याआ से आक्रान्त ह। साम्प्रदायिक उन्माद की घटनाए बढती जा रही ह। धर्म के नाम पर राजनीति खेली जा रही ह। व्यवसाय की पतिस्पधा स नीति नामक तत्त्व का

गोण किया जा रहा ह। नशे की सस्कृति युवापीढी को गुमराह बना रही हे। चुनाव की धाधली ने लोकतत्र की पवित्रता क आगे प्रश्नचिह्न खडा कर दिया हे। पयावरण का सकट गहराता जा रहा ह। अणुव्रत इस प्रकार की सब समस्याओ का समाहित करने की दिशा पशस्त कर सकता ह, बशर्ते कि मनुष्य गहरी आस्था के साथ व्रतो का अनुशीलन करे।

अणुव्रत का दशन मुख्यत सयम का दशन ह। सग्रह आर व्यक्तिगत भोग की सीमा का सिद्धान्त आथिक दृष्टि से पनपन वाली बुराइयो की जड पर कुठाराघात करता हे। पृथ्वी, पानी, वनस्पति आदि का सयम पयावरण को प्रदूषित होने से रोक सकता हे। इस बात का सिद्धान्तत स्वीकार करने पर भी जीवन-व्यवहार म सयम का यथेष्ट अभ्यास नही हो पा रहा हे। यह मानवीय दुबलता हे कि मनुष्य जिस जीवन शेली को समाधानकारक ओर उन्नत मान रहा हे, उस भी स्वीकार नही कर पा रहा हे। इसका मूलभूत कारण हे प्रतिरोधात्मक शक्ति अथवा प्रतिस्रोत म बहन की क्षमता का अभाव।

शिक्षा म अणुव्रत दर्शन का प्रवेश एक उपाय ह सस्कार-परिवतन की दिशा म नई सभावनाओ क द्वार खोलने का। विद्यार्थी जीवन म अणुव्रत की शिक्षा का अभ्यास हा जाए ता सयम की साधना दुष्कर नही रहती। इक्कीसवी सदी म प्रवेश करने का समय सामने हे। सात वर्षो का समय बहुत लम्बा समय नही हाता। उस समय तक अणुव्रत जसे व्यापक जीवन दर्शन का आत्मसात् किया जा सके ता अगली सदी का प्रवेश पूरी भव्यता ओर दिव्यता के साथ हो सकेगा। मेरा यह निश्चित विश्वास हे कि अणुव्रत दशन आगामी सदी को उजालन म अपनी महत्त्वपूण भूमिका निभा सकेगा।

५ शान्ति का उत्स है सयम

धम अमृत ह। अमृत जब जहर का काम करन लग तो उसे पीना कान चाहेगा? धर्म शान्ति एव सद्भावना का प्रतीक है। उसके नाम पर साम्प्रदायिक उन्माद वढेगा, तो धर्म को महत्त्व कोन देगा? धर्म ओर मजहव—ये दो भिन्न तत्त्व ह। दोना को एक मान लिया गया, समस्या की जड यही हे। मजहव के विना भी धम हो सकता ह क्या? इस प्रश्न का सीधा-सा समाधान ह अणुव्रत।

अणुव्रत धम हे, पर सम्प्रदाय नही हे। अणुव्रत धर्म है, पर उसकी कोइ उपासना-विधि नही हे। परलोक सुधारने के लिए धर्म की आराधना, यह अणुव्रत की आस्था नही हे। अणुव्रत का दशन वतमान की स्वस्थता पर आधारित है। इसका विश्वास मानवीय मूल्या मे है। कठिनाइ यह हे कि मूल्य जीवन से फिसलत जा रहे हे। जीवन के साथ मूल्यो का जोडने का एक छोटा-सा उपक्रम हे अणुव्रत।

अणु ओर व्रत—इन दो शव्दा के योग मे अणुव्रत वना हे। अणु सूक्ष्मता का वाचक ह ओर व्रत की चेतना सकल्प-शक्ति की प्रतीक ह। जाति, दश, धम, रग, लिग आदि भेदरेखाओ को पार कर इन्सान को इन्सानियत की प्रेरणा दना अणुव्रत का लक्ष्य ह। मदिर आर मस्जिद के विवादा से दूर रहकर ऊचा जीवन जीने की दिशा का प्रशस्तीकरण अणुव्रत का फलित हे। धामिक कहलान स पहल नतिक वनने की दृष्टि देकर अणुव्रत ने नेतिकताशून्य धर्म क आगे प्रश्नचिह्न खडा कर दिया।

वतमान युग की सवसे वडी त्रासदी ह—कथनी आर करनी म विरोध। व्यक्ति कहता कुछ ह आर करता कुछ ह। यह स्थिति राजनीति ओर व्यवसाय मात्र तक ही सीमित नही ह। धम के मच से भी जव ऐसी विसगतिया का

आविर्भाव होता है तो मनुष्य के हाथ से आस्था का सूत्र छूट जाता है। अणुव्रत उस सूत्र को पुनः हस्तगत करने की दिशा मे उठा हुआ एक नन्हा-सा कदम है। जिन विषम परिस्थितियों में यह कदम उठा है और बढ़ा है, इसी क्रम से बढता रहा तो मनुष्य की आस्था को नया आधार देने मे सफल हो सकेगा।

अणुव्रत हृदय-परिवर्तन की प्रेरणा है। व्यक्ति का सुधार इसे काम्य है। पर यह व्यक्ति तक पहुचकर रुकता नही है। व्यक्ति के माध्यम से समाज, राष्ट्र और विश्व सुधार की दिशा मे गति का आश्वासन यही दे सकता है। 'सयम खलु जीवनम्'--सयम ही जीवन है, इस घोष के सहारे अणुव्रत ने जन-जन की चेतना को झकृत किया है। मनुष्य की भोगवादी और सुविधावादी मनोभूमि सुख-शान्ति की फसल उगा सके, यह असभव है। जिस माटी मे सयम की सोधी गन्ध होगी, उसी मे सुख शान्ति का अकुरण सभव है--इस आस्था का जागरण और प्रसारण आज की सबसे बडी अपेक्षा है।

६ लोकतन्त्र का मन्दिर

लोकतन्त्र का मन्दिर सबके लिए खुला है। वहा कोइ भी जा सकता ह पूजा कर सकता ह आग स्वय को लाकतत्र का पुजारी मान सकता ह। पुजारी मानन आर बनन म जो अन्तर है, वह जब तक नही मिटेगा, लोकतन्त्र की सही पूजा नही हा सकेगी। पूजा की गलत पक्रिया उन सबके लिए कष्टकर हो जाती है जो लोकतत्र के भक्त है। वे ऐसे पुजारियो को वाहर ही रोकना चाहत है, किंतु उनकी घुसपठ रुकनी नही है। जिनको मुख्य द्वार से प्रवेश नही मिलता है, वे पीछ स घुस जाते ह आर लाकतत्र के मन्दिर को अपवित्र बनाने से वाज नही आते।

यह राजनीति ह। इसमे जनहित गाण रहता ह ओर वोटहित पमुख वन जाता ह। केसा विचित्र खेल ह। इस खल म सम्मिलित होने वाल खिलाडी जनता क वोट बटोरते ह। वे जनता की समस्या का समाधान करग आग सब कुछ गोण करक जनहित क लिए काम करगे, इस आश्वासन पर उन्ह वाट मिलत ह। सब कुछ गोण होता है, उसमे जनता का हित भी गाण हा जाता ह। इसका ताजा उदाहरण है ससद का त्तमान गतिरोध।

जहा ससद ह वहा पार्टिया हाती ह। पार्टिया हे तो उनम पक्ष आर प्रतिपक्ष भी होते हे अन्यथा समद का स्वरूप नही वन सकता। किंतु जहा पक्ष-प्रतिपक्ष के स्थान पर पक्ष विपक्ष हो जाते ह, वहा कोइ भी काम सद्भावना से नहीं हा सकता। आपसी सद्भावना का लाप अनक समस्याआ को उभरन का मोका दता ह।

गत वप हम लाडनू थ। भाजपा नेता लालकृष्ण आडवाणी वहा आए। पक्ष विपक्ष की चर्चा चली। हमन उनस कहा—' विपक्ष शब्द ही गलत ह। विपक्ष का अथ होता ह विरोधी पक्ष। विरोधी दृष्टिकोण से वमनस्य आर

शत्रुता का बटावा मिलता है। शासन का काम है जनता की सुरक्षा, जनहित की सुरक्षा और राष्ट्र का विकास। इस काम में सत्तारूढ पक्ष की जितनी जिम्मेदारी है, उतनी ही जिम्मेदारी प्रतिपक्ष की है। सत्तारूढ दल की कमजोरी पर प्रतिपक्ष को अगुली उठाने का अधिकार है। किन्तु पक्ष-विपक्ष में जनहित की विस्मृति और अपने एव अपनी पार्टी के हिता की स्मृति रहती है।' आडवाणीजी बोले— प्रतिपक्ष शब्द अच्छा है।'

वर्तमान स्थिति की समीक्षा की जाए तो ऐसा प्रतीत होता है कि आज प्रतिपक्ष के सिंहासन पर विपक्ष बैठा हुआ है। ससद के गतिरोध का मूल कारण यही है। बात तो इतनी-सी है कि प्रतिभूति घोटाले के सबध में ससदीय समिति की जो रिपोर्ट ससद में रखी गई, उस पर पक्ष प्रतिपक्ष दोनों अड़े हुए है। प्रतिपक्ष की माग है कि रिपोर्ट वापस लो, उसके अनुसार कार्यवाही करने के बाद उस सदन के पटल पर प्रस्तुत करो। सरकार उस रिपोर्ट को वापस लेने के लिए तैयार नहीं है। दोनों के अपने-अपने राजनीतिक हित है। प्रतिपक्ष ने ससद का बहिष्कार कर दिया और सरकार ससद चलाने के लिए सकल्पित है। पक्ष प्रतिपक्ष दोनों की उपस्थिति बिना ससद कैसे चलेगी? दोनों की खींचातानी में राष्ट्र का कितना अहित हो रहा है इस ओर किसी का ध्यान नहीं है।

हम न सरकार से कुछ लेना है और न प्रतिपक्ष को कुछ देना है। राष्ट्रीय चरित्र निर्माण के लिए हमने यह यात्रा की। चरित्र निर्माण का अभियान चल रहा है। ऐसे समय में अपना दायित्व समझकर हमने एक प्रयत्न शुरू किया है। सरकार और प्रतिपक्ष—सबको एक विशेष सदेश दिया है। इस आशा के साथ सदेश दिया है कि वे पूर्वाग्रहो और प्रतिष्ठा के प्रश्न को एक ओर रखकर गतिरोध को दूर करे। ऐसा नही हुआ तो, 'घर मे हानि और लोक म हसी' वाली कहावत चरितार्थ होगी। जो परिस्थिति से समझौता करना जानता है, वह सफल होता है। समझौते की भाषा में नहीं सोचने वाला पिछड़ जाता है। निष्फल हो जाता है। मुझे विश्वास है कि गतिरोध दूर होगा और भारतीय ससद की गरिमा सुरक्षित रहेगी।

७. नशे की संस्कृति

महानगरों, नगरों, कस्बों, गांवों और देहातों में समान रूप से प्रभावी बनने वाली संस्कृति की पहचान 'नशे की संस्कृति' के रूप में हो रही है। इस संस्कृति के सूत्रकार कौन हैं? इसका प्रथम प्रयोग कब हुआ? इसको विस्तार किसने दिया? इसके परिणामों के बारे में सबसे पहले कब किसने सोचा? और इसे नियंत्रित कैसे किया जा सकता है? इत्यादि कुछ ऐसे प्रश्न हैं, जो समाधान की प्रतीक्षा में उद्ग्रीव होकर खड़े हैं। इस सन्दर्भ में गंभीर शोध और व्यापक बहस की अपेक्षा है। अन्यथा यह नशे की नागिन अपने शीघ्र प्रभावी जहर से मानव जाति के अस्तित्व के लिए संकट पैदा कर सकती है।

नशे की आदत कैसे लगती है? इस प्रश्न पर विचारकों के अलग-अलग अभिमत हैं। कुछ व्यक्ति चिन्ता, थकान और परेशानी से छुटकारा पाने की चाह से नशे के क्षेत्र में प्रवेश करते हैं। कुछ व्यक्ति संघर्षों से जूझने के लिए नशा करते हैं। कुछ व्यक्ति चुस्त, दुरुस्त और आधुनिक कहलाने के लोभ में नशे के चंगुल में फंसते हैं। कुछ व्यक्ति ऐसे भी हैं, जो दूसरे लोगों को धूम्रपान या मदिरापान करते हुए देखते हैं तो उनके मन में एक उत्सुकता जागती है और उनके कदम बहक जाते हैं। कुछ व्यावसायिक ऐसी आकर्षक वस्तुओं का निर्माण करते हैं कि उपभोक्ता उनका प्रयोग किए बिना रह नहीं सकता।

कुछ व्यक्ति साथियों के लिहाज या दबाव के कारण नशे के शिकार होते हैं और भी अनेक कारण हो सकते हैं। कारण कुछ भी हो, एक बार नशे की लत लग जाने के बाद मनुष्य विवश हो जाता है। फिर तो वह प्रयत्न करने पर भी उससे मुक्त होने में कठिनाई का अनुभव करता है।

प्राचीनकाल मे लोग सोमरस तथा हुक्का पीते थे। आधुनिक युग म इसी वात को आधार वनाकर कहा जाता हे कि नशे की सस्कृति आदिम काल से जुडी हुई हे। गिरते व्यक्ति को थोडा-सा धक्का ही काफी हे। जिन लोगो का मन दुर्वल हे, उनके लिए इतनी-सी वात वहुत वडा आलम्वन हे। किन्तु ऐसा कहने मात्र स नशे के दुष्परिणामो से वचा नहीं जा सकता। वेयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक ओर राष्ट्रीय जीवन म घुल रही अनेक विकृतियो के मूल मे एक वडा कारण नशे की प्रवृत्ति हे। इससे आर्थिक, शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक स्तर पर मनुष्य का जितना अहित होता है, उसे आकडो मे प्रस्तुति दी जाए तो उसकी आखे खुल सकती हे।

क्या मद्यपान को रोका जा सकता हे? क्या धूम्रपान का नियंत्रित किया जा सकता हे? इस प्रकार की सदिग्ध मनोवृत्ति से कभी सफलता नही मिलती। सफलता का पहला सूत्र हे दृढसकल्प ओर दूसरा सूत्र हे सकल्प की पूर्ति के लिए कारगर उपायो की खोज। कुछ लोग मादक व नशीले पदार्थो के उत्पादन ओर सेवन पर रोक लगाने की माग करते हे। कुछ लोग चाहते ह कि पाठ्यक्रम म ऐसे पाठ जोडे जाए, जो मादक एव नशीले पदार्थो के सेवन से हाने वाले दुष्परिणामो को प्रभावी ढग से प्रस्तुत करते हो। कुछ लोग इलक्ट्रॉनिक्स प्रचार माध्यमा से वातावरण या मानसिकता वदलन की वात करते ह। कुछ लोगा का चिन्तन हे कि तम्वाकू की खेती आर वीडी उद्योग कामगारो क सामने नया विकल्प प्रस्तुत किया जाए। मुझे ऐसा प्रतीत होता हे कि चिन्तन के कोण अलग-अलग हे, पर लक्ष्य सवका एक हे। एसी स्थिति मे क्या यह सभव हो सकता ह कि उक्त विचारधारा वाले सभी व्यक्ति आर सगठन मिलकर एकसूत्रीय कार्यक्रम वनाए ओर 'विश्व स्वास्थ्य सगठन' को भी इसके लिए सहमत किया जाए। यदि ऐसा हो सका तो मेरा विश्वास ह कि नशे की सस्कृति के जमते हुए पावो को उखाडने मे अधिक सुविधा रहेगी।

८ भ्रूण हत्या · एक प्रश्नचिह्न

हिंसा बढ रही है। आतंकवाद फल रहा है। अपहरण की संस्कृति अपनी जडे जमा रही है। चोरी और लूटमार की घटनाए थमी नहीं है। हत्याओ और आत्महत्याओ का सिलसिला चल रहा है। समाचार पत्रो मे ये संवाद सुर्खिया मे प्रकाशित होते है। हिंसा से जुडी ऐसी घटनाओ की स्थान स्थान पर भर्त्सना होती है। कोई भी संवेदनशील व्यक्ति इनको उचित नहीं मानता। जिस युग मे मानवाधिकार की चर्चा वैश्विक स्तर पर चलती हो, उस युग मे असुरक्षा और आतंक का वातावरण बहुत बडी चुनौती बनकर खडा है। जिस समय मजदूरो का बन्धक बनाने और बालश्रम की प्रवृत्तियो के औचित्य पर प्रश्नचिह्न खडे हो रहे हो उस समय बिना ही किसी अपराध के मनुष्य को गोलियो से भून देना किस मनोवृत्ति का परिचायक है?

हर मनुष्य को जीने का अधिकार है। मनुष्य ही क्यो, प्राणीमात्र जीने का अधिकारी है। किसी भी प्राणी के प्राणो का बलात् लूट लेना हिंसा है। हिंसा के दो रूप है— अपरिहार्य और परिहार्य। एक गृहस्थ को जीवनयापन के लिए जो हिंसा करनी पडती है, उससे बचना संभव नहीं है। अपरिहार्य या आवश्यक हिंसा को रोका नहीं जा सकता। किन्तु जिस हिंसा से बचा जा सकता है, जिसके बिना जीवन चल सकता है, वैसी हिंसा होती है तो लगता है कि मनुष्य क्रूर बन रहा है। ऐसी हिंसा को रोकना आवश्यक है। किन्तु जिस देश या समाज मे अर्थहिंसा की तरह अनर्थहिंसा को भी वैध मान लिया जाता है कानून के संरक्षण मे निश्चिन्त होकर आदमी सरेआम हत्या करता हो उस देश या समाज मे संवेदनशीलता कहा रहेगी?

संसार मे मात्स्य न्याय चलता है। बडी मछली छोटी मछली को खाती है। शक्तिशाली पशु दुर्बल पशुओ को मार कर पेट भरते है। कुछ पशु

आदमखार भी हात है। ऐस पशुआ का समाप्न करन का अभियान चलाया जाता ह। पर मनुष्य तो पशु नहीं है। वह अकारण ही किसी जीव की हत्या कर, दुवल और वजुवा प्राणिया का प्राणवियाजन करे, इसम उसकी क्या महत्ता है? मनुष्य स्वभावत हन्याग नहीं ह। मनुष्य जाति क दा वग ह– पुरुप आर स्त्री। स्त्री का करुणा की मूनि माना जाता ह। पर जव उसका नाम हन्या क साथ जुडता है ता आश्चय होना है। हत्या भी किसकी? पशु-पक्षिया की नही। आक्रान्ता मनुष्य की नही। अपराधी मनुष्य की नही। अपने ही खून की हत्या। कितनी नृशसता ! कितनी क्रूरता ! एक स्त्री इतनी नृशस आर क्रूर क्यो हा जाती ह? शाच का विपय ह।

जिस हत्या की मै चचा कर रहा हू, वह है भ्रूणहत्या। एक मा अपनी अपाहिन सतान का पालन-पापण करती ह उस समय वह एक दवी प्रतीत हानी है। नि स्वार्थ भाव से अपनी सुख सुविधाओ का वलिदान करने वाली वह मा अपने अजन्मे शिशु को मारन की स्वीकृनि कसे दे दती ह? इस विपय म कानून क्या कहना ह, मुझ उसम नहीं उलझना ह। मानवीय अधिकार की दृष्टि से यह अनुचित है। क्या उस शिशु का जीन का अधिकार नही ह? निरपराध हत्या की दृष्टि स भी यह गलत ह। वचारे उस शिशु ने किसका क्या अपराध किया? जनसख्या का नियन्त्रित करन के लिए गभपात को वध मानना माता पिता की गलती का प्रायश्चित्त उसकी सन्तान को दना ह। कमशास्त्रीय दृष्टि स इसका महापाप माना गया है। आचार्य भिक्षु ने लिखा है–

सर्पिणी इडा गिल आपरा अस्त्री मारे निज भरतार,
वल चाकर मार ठाकर भणी, गुरु नै शिष्य न्हाखे मार।
इम कर्म वधे महामोहणी॥

सर्पिणी अपन अण्डा का खाती है, स्त्री अपने पति की हत्या करती है नाकर अपने स्वामी का मारता है आर शिष्य अपन गुरु का प्राणान्त करता है तो महामाहनीय कम का वध होता है। उस युग मे सभवत भ्रूणहत्या नही हानी थी। अन्यथा उक्त पद्य म इसका भी समावेश हो जाता। भ्रूणहत्या एक जघन्य अपराध है। काइ भी धमशास्त्र इसकी अनुमति नही द सकता। यह अपराध नीतिशास्त्र सम्मत भी केसे हो सकता ह? राष्ट्रवाद या स्वाथवाद के

नाम पर जो नीति प्रवर्तित होती ह, उसकी वात अलग ह। क्योंकि वहा नीति पर स्वाथ हावी हो जाता ह।

भ्रूण परीक्षण की पद्धति अमानवीय वनती जा रही ह। क्रामासाम की विकृति ओर वशानुगत वीमारी की जाच के लिए परीक्षण की तकनीक विकसित हुई, किन्तु उसका उपयाग गभस्थ शिशु के लिग की पहचान क लिए अधिक हा रहा हे। यदि गर्भस्थ शिशु कन्या हुइ ता उसके अस्तित्व पर ही सकट आ जाता हे। वज्ञानिक युग मे भी लडके ओर लडकी का लेकर रूढ ओर भ्रान्त धारणाओ का नहीं तोडा गया तो फिर ये कव टूटेगी? लडका अपना भाग्य साथ लेकर आता हे तो क्या लडकी अपना भाग्य वेचकर आती हे? महावीर, वुद्ध और गाधी क दश मे हिसा का यह नया रूप भारतीय सस्कृति का उपहास ह। कुछ प्रान्तो मे गभ परीक्षण पर प्रतिवन्ध लगा हे। किन्तु जव तक मनुष्य की मनोवृत्ति नहीं वदलेगी, वह नए रास्ते खाजता रहेगा।

अणुव्रत नेतिक मूल्या का पक्षधर आन्दोलन हे। अणुव्रती वनने वाला व्यक्ति न ता निरपराध प्राणी का सकल्पपूर्वक वध करता हे, न आत्महत्या करता हे ओर न भ्रूणहत्या करता ह। यदि अणुव्रत का यह एक नियम प्रभावशील वन जाए तो आतकवाद के साथ-साथ भ्रूणहत्या जसी अमानवीय प्रवृत्ति अपने आप नियन्त्रित हो सकती हे।

६ प्राकृतिक आपदाओ का एक कारण

मनुष्य न प्रकृति विजता वनने का सपना दखा। उसने अपन स्वप्न को साकार करने क लिए पुरुपार्थ किया। आज वह दभ भरता ह कि उसन प्रकृति पर विजय प्राप्त कर ली ह। उसका दावा ह कि वह आकाश की बुलंदिया को छू सकना ह और पाताल मे पठ सकता ह। वह गम हवाआ को वर्फ सी ठडी वना सकता हे आर हिमानी राता म ऊष्मा भर सकता ह। वह विश्व क किसी भी भाग म रहने वाले लोगो से सीधा सपर्क स्थापित कर सकता ह, उन्ह दख सकना हे, उनक साथ वात कर सकना ह ओर न जाने क्या-क्या कर सकना हे। दूरदशन ओर दूरभाप की वात तो वहुत साधारण ह,दूर चिकित्सा की विधिया भी विकसित हो रही ह।

मुचे ऐसा प्रनीत हाता ह कि वहुत कुछ होने पर भी कुछ भी नही हुआ ह। प्रकृति का अपना सामाज्य ह। उस पर किसी का वश नही चलता। वह वार-वार मनुष्य के अह को ताड रही हे। कभी अतिवृष्टि, कभी अनावृष्टि। कभी वाढ, कभी भू स्खलन। कभी आधी, कभी तूफान। प्रकृति के ये भयावह हादसे ' मनुष्य हाथ म हाथ वाधे निरीह होकर खडा हे। वह इतना असहाय हो रहा हे कि कुछ भी कर नहीं पाता।

महाराप्ट्र के कुछ इलाको मे प्रकृति न जो कहर ढहाया हे, सुन-पढकर रोमाच हो जाता हे। प्रकृति की लीला विचित्र ह। पता नही, कव कहा क्या घटित हो जाए? कव कहा ज्वालामुखी सुलग जाए आर उसका लावा वहता हुआ धरती के नीचे उथल-पुथल मचान लगे। अतीत ऐसे हादसो का साक्षी रहा हे, वतमान इन्ह भोग रहा ह ओर भविष्य उनकी भयावहता से काप रहा ह। भविष्य म जिस प्रलय की सभावना है, उसका चित्र जेन आगमा मे हे। किन्तु वह समय काफी दूर हे। अठारह हजार वप स भी कुछ अधिक समय

अब तक शेष है। इस अवसर्पिणी युग के अंत में उस भयावह स्थिति से सामना करना होगा। पर उसके लक्षण अभी प्रकट होने लगे है, यह चिन्ता की बात है।

चिन्ता किसी भी समस्या का समाधान नहीं है। समस्या के मूलभूत कारणों की खोज के बाद ही समाधान का मार्ग प्रशस्त हो सकता है। प्राकृतिक आपदा का एक बड़ा कारण है—मनुष्य का असंयम। प्रकृति का अतिमात्रा में होने वाला दोहन असंयम की प्रेरणा बिना संभव ही नहीं है। यदि मनुष्य अपने जीवन में संयम का अभ्यास करे, तपस्या का प्रयोग करे तो बहुत संभव है कि वह प्राकृतिक आपदाओं को दूर धकेलने या टालने में सफल हो जाए।

पौराणिक घटना है। द्वारिका पर कोई असुर कुपित हुआ। दैवप्रकोप से उसके दहन का प्रसंग उपस्थित हो गया। वहां के नागरिक अर्हन अरिष्टनेमि की शरण में गए। उनके दिशादर्शन में द्वारिका के लोगों ने तप का सुरक्षाकवच तैयार कर लिया। असुर आता, उपद्रव करना चाहता, पर तपस्या के प्रभाव से उसकी शक्ति प्रतिहत हो जाती। एक एक कर कई वर्ष बीत गए। नागरिकों के मन का भय मिट गया। वे प्रमत्त होने लगे। एक दिन ऐसा आया जब द्वारिका में उपवास, आयम्बिल आदि कोई तप नहीं हुआ। असुर को मौका मिल गया। उसने अपनी शक्ति का प्रयोग किया। द्वारिका भस्मसात् हो गई।

तपस्या की शक्ति अपरिमित है। आत्मशान्ति और विश्वशान्ति के लिए निरंतर तपोयज्ञ का अनुष्ठान किया जाए तो वांछित लक्ष्य की प्राप्ति हो सकती है और प्रासंगिक रूप में प्राकृतिक एवं मानवीय आपदाओं से भी त्राण मिल सकता है।

१० विज्ञापन सस्कृति

शक्ति, समृद्धि आर बुद्धि की अधिष्ठात्री हे नारी। पोराणिक मिथका मे उजागर नारी का यह स्वरूप उस अभय, स्वावलम्बन ओर सृजन की प्रतिमा के रूप मे प्रतिष्ठित करता हे। किन्तु यथाथ के फलक पर भारतीय नारी भीरु, परावलम्बी ओर रूढता की बडिया म जकडी हुई दिखाइ देती हे। शक्तिहीन होने क कारण उसक साथ छेडछाड ओर बलात्कार जेसी घटनाए हा रही ह। कही-कही ता उस निवस्त्र करके सडक पर घुमाने जेसे हादसे हो रह ह। देवता आर गुरु क समान पूज्य नारी का यह अपमान भारतीय सस्कृति के मस्तक पर कलक का धब्बा ह।

आथिक परावलम्बन नारी जीवन की सबसे बडी त्रासदी हे। इसी के कारण वह पुरुप का सहारा खोजती ह। अपना जीवन अपने ढग से जीने की बात वह सोच ही नही सकती। मे यह नही कहता कि आथिक स्वावलम्बन के लिए उसके मन मे उद्योग के शिखर पर पहुचन की प्रतिस्पद्धा जागे। पर इस क्षेत्र मे भी वह इतनी पिछडी हुइ क्यो रहे कि स्वाभिमान से सिर उठाकर भी न चल सक। पुरुप की बुद्धि आर शक्ति का उपयोग अथाजन म होता हे ता क्या घर का सचालन विना बुद्धि आर शक्ति के होना सभव ह? एक नारी को पूरे दिन मे जितन निणय लेने पडते हे ओर काम निपटाने पडते ह, क्या किसी पुरुप के वश की बात हे?

नारी का व्यक्तित्व पूरे परिवार का व्यक्तित्व ह। उसके व्यक्तित्व-निमाण की पक्रिया तेज होनी चाहिए। वह स्वय व्यक्तित्व-शून्य रहकर अपनी भावी पीढी का निमाण केसे कर सकगी? यह बात नही ह कि आज की नारी अपन व्यक्तित्व के प्रति सचेत नही हे। एक समय था, जब नारी का अपने अस्तित्व की भी पहचान नही थी। पर वतमान युग मे वह कही अपनी अस्मिता बचाने

के लिए सघप कर रही ह, कही स्वतन्त्र पहचान बनाने के लिए प्रयत्नरत हे ओर कही व्यक्तित्व के शिखर पर आराहण कर रही हे। यह दूसरी बात ह कि उसके व्यक्तित्व की परिभापाए बदल गइ ह। इसका सबसे अधिक प्रभाव हुआ ह उसके पहनावे पर।

एक राजस्थानी कहावत ह—'लुगाइ ढकी दूमी पूठरी लाग'। वतमान परिप्रेश्य म स्त्री आर पुरुप क पहनावे को तुलनात्मक दृष्टि स दखा जाए तो पुरुप क अगापाग अधिक आवृत्त रहते ह। भारतीय नारी की वेपभूषा पर विचार किया जाए तो उसके कइ रूप सामने आते हे। एक आर मुस्लिम नारी के सामने बुर्के की बाध्यता ह। अब इस परपरा म भी बदलाव आ रहा हे। दूसरी आर हिन्दू समाज की महिलाए खुले अगा वाली वपभूषा म रुचि रखती ह। कुछ महिलाए, जो रूढिवादी हान पर भी आधुनिकता क प्रभाव से बच नही पाइ हे। वे अपने चेहरे को आवृत्त रखती ह पर पेट का अनावृत रखती ह। लगता हे, उनम आवरणीय आर अनावरणीय का विवेक कम ह। अन्यथा अन्य अगा का खुला रखकर मुह को ढकन की बात बुद्धिगम्य ही नही हाती।

विज्ञापन सस्कृति म नारी-दह का जिस रूप म दुरुपयाग किया जा रहा हे, उसक प्रतिराध म महिला सगठन सक्रिय बन, यह युग की अपक्षा ह। किन्तु इस अपक्षा स आखे मूदकर विज्ञापना, मॉडला आर फिल्मा की वपभूषा का मानक मानकर उस प्रचलित करना कहा की समझदारी है? महिलाआ की विकृत वेपभूपा को दखकर पुरुपा की वासना का उत्तेजना मिल आर व उनके साथ दुर्व्यवहार करने की चेप्टा करे, इसमे दोप किसका?

समाज या सरकार महिलाआ को क्या सुरक्षा देगी? सबस बडा सुरक्षा कवच ह उनका अपना विवक आर सयम। साहस भी आवश्यक ह। पर उससे पहले विवेक ओर सयम जरूरी हे। वेपभूपा के सन्दभ मे चालू प्रवाहपातिता का माड देन क लिए समाज की जागरूक महिलाए एक क्षण रुककर साच। उनका दायित्व ह कि वे आवश्यकता, शालीनता आर तथाकथित आधुनिकता क बीच रही भेदरखा का पूरी गभीरता स उभारकर महिला समाज का सही दिशा द।

११. पानी मे मीन पियासी

अणुव्रत का एक घोप ह--सयम ही जीवन ह। म वहुत वार सोचता हू कि यह घोप थ्योरीटिकल हे या प्रेक्टिकल? यदि इसे थ्योरीटिकल ही माना जाएगा, केवल सिद्धान्त के रूप मे स्वीकार किया जाएगा तो जीवन मे इसका कोई उपयोग नही हो पाएगा। सिद्धान्तो से शास्त्र भर पडे हे। मनुष्य उन्हे पढ लेता ह, समझ लता हे आर दूसरो को समझा देता ह, पर सिद्धान्त केवल इसीलिए नही होते। उनका प्रेक्टिकल रूप भी सामने आना चाहिए, प्रयोग करके दखना चाहिए। वेज्ञानिक युग मे प्रयोगशाला म सिद्ध हुए विना किसी भी तत्त्व को लोकसम्मत वनाना कठिन हो जाता ह। इस दृष्टि से धामिक ओर नेतिक सिद्धान्तो का भी प्रायोगिक रूप दने की अपेक्षा ह। प्रयोग की भूमि सामूहिक भी हो सकती हे किन्तु व्यक्तिगत प्रयोग व्यक्ति की निजी सम्पदा बन जाता ह।

महाराज जनक ने महपि याज्ञवल्क्य से पूछा—'महर्षे! मे दखना चाहता हू, केसे देखू?' महपि न कहा—'सूरज का प्रकाश हे, चाद की ज्योत्स्ना हे, तारे, ग्रह ओर नक्षत्र भी ह। इनकी ज्योति म तुम अपना पथ देखो।' महाराज जनक बोले—'महर्षे! अमावस्या की काली रात हो आर व्यक्ति मकान के भोहरे मे बेठा हो, वहा केसे दिखाइ देगा? चाद ग्रह, नक्षत्र ओर तारो का प्रकाश भोहरे तक पहुचेगा नही।' याज्ञवल्क्य ने कहा—'वहा शब्द की ज्योति से देखा जा सकता हे। जिस दिशा से आवाज आए, उस दिशा म आगे बढते रहना।' जनक का अगला प्रश्न था—'यदि वहा शब्द भी न हो तो?' याज्ञवल्क्य का उत्तर था—'जहा वाहर की ज्योति उपलब्ध न हो, वहा अपन भीतर की ज्योति—आत्मज्योति से दखना।' आत्म-ज्योति सवके पास होती ह, पर उसका उपयोग कोन करता हे?

कबीर का एक प्रसिद्ध गीत ह--'पानी मे मीन पियासी'। मछली पानी मे रहती हे ओर प्यास से तडपती ह। इस वात को सुनकर कबीर ही नहीं, कोई भी हस सकता ह। पर हसन से क्या हागा? यह इस ससार की विचित्रता ह। जब तक मनुष्य को आत्म-ज्ञान उपलब्ध नही होता, वह मथुरा ओर काशी मे भ्रमण करता रहता हे। मृग जगल में भटकता ह। क्या? कस्तूरी की गध स आकृष्ट होकर वह चारा आर दाडता ह। उसकी दोड अज्ञान-जनित हे। वह नहीं जानता कि कस्तूरी तो उसकी अपनी ही नाभि म हे।

हजारा-हजारो ऋषि-मुनि इस ससार म हे। व दिन-रात ध्यान करते ह। परमात्मा का जप करत ह। ध्यान आर जप की साधना के द्वारा वे वाहर-वाहर परमात्मा की खाज करते रहग ता उनका परमात्मा से साक्षात्कार कहा हागा? इस खोज मे कितने ही वष वीत जाए, लक्ष्य पूरा नही हो सकता। क्योंकि जिसकी खोज की जा रही हे, वह अविनाशी परमपुरुष परमेश्वर व्यक्ति क भीतर ही विराजमान ह।

मनुष्य सुख की अभिलाषा करता हे। सुख कहा हे? पदार्थ के भाग म सुख का आभास अवश्य हो सकता ह। पर वास्तविक सुख वहा नही हे। सुख हे त्याग म, सयम मे। सयम का प्रवाह वह रहा ह, सामन वह रहा ह, फिर भी आदमी दु खी हे। क्योकि वह सयम को गाण कर असयम का सहारा ले रहा हे। असयम मे दु ख ह, इस सचाइ को देखकर भी अनदेखा किया जा रहा हे। कीचड म फसा हुआ हाथी देखता हे कि सामने सूखी जमीन ह, फिर भी वह वहा तक पहुच नही पाता। वह कीचड से उठने की चेष्टा करता हे, पर उठ नहीं सकता। कीचड से वाहर निकले बिना सूखी जमीन तक पहुचन की कल्पना साकार केसे हा सकती ह?

हाथी पशु हे। उसम ज्ञान नही हे, विवेक नही हे, इसलिए वह कष्ट भोगता हे। मनुष्य ज्ञान सम्पन्न हे। उसकी विवेक चेतना जागृत ह। वह जानता ह कि सुख का माग क्या ह आर दु ख का माग क्या हे? यह सब जानता हुआ भी वह दु ख के माग पर आगे वढता हे। सयम को प्रायोगिक न वनाकर सद्धान्तिक रूप म ही उसका गुणगान करता हे। ऐसी स्थिति म कबीर की अनुभूति—'पानी मे मीन पियासी' शत-प्रतिशत सत्य पमाणित हो रही ह।

१२ वर्तमान को देखो

हमारी सस्कृति म आस्था ओर विश्वास के कुछ विशेप प्रतीक थे। उन प्रतीको म आत्मा, परमात्मा, धर्म, उपासना, स्वर्ग-नरक आदि को उपस्थित किया जा सकता हे। समय वदला। चिन्तन का कोण वदला ओर वदल गया जीवन का व्यवहार। वर्तमान युग मे आस्था के नये प्रतीक हे अन्तरिक्ष यात्राए, वेज्ञानिक आविप्कार, आधुनिक टेक्नोलॉजी, विद्युत-शक्ति के चमत्कार आदि। आत्मा, ईश्वर आदि मे होने वाला विश्वास चरित्र की परिक्रमा करता हे। स्वर्ग का आकर्पण ओर नरक की विभीपिका भी अपराध चेतना की दिशा को बदल सकती हे। किन्तु जहा चरित्र हाशिये पर चला जाता हे ओर अपराधी मनोवृत्ति पर किसी प्रकार का अकुश नहीं रहता, वहा समाज रसातल मे चला जाता हे।

मे अतीत ओर अनागत को अपने चिन्तन से ओझल नही करता। पर उन्ही को सब कुछ मान कर नही सोचता। अतीत व्यक्ति के वर्तमान का आधार वनता ह ओर भविष्य की कल्पनाओ के आधार पर वर्तमान को सवारा जाता हे। इस दृष्टि से वर्तमान अपने अतीत ओर अनागत का आभारी रहता हे। किन्तु वर्तमान को दूसरे स्थान पर रखते ही मनुष्य के आचार-विचार की दिशा बदल जाती ह। इसलिए जो लोग अच्छा ओर सच्चा जीवन जीना चाहते हे, उनको पूरा ध्यान वर्तमान पर केन्द्रित करना होगा।

मनुष्य क्रिया करता है। पर सामान्यत वह क्रिया नही, प्रतिक्रिया करता हे। किस व्यक्ति ने उसके साथ कैसा व्यवहार किया हे, इस कसोटी को वह अपने व्यवहार की तुला बनाता है। जब तक यह तुला सामने रहेगी, मनुष्य निरपेक्ष चितन ओर व्यवहार नही कर पायेगा। इस बात को मै जानता हू कि प्रतिक्रियाओ से बचना कोई सरल काम नही हे। पर प्रतिक्रियाओ मे ही

जीना जीवन की कोई उपलब्धि नहीं है। कर्तव्य की प्रेरणा और दायित्व का बोध मनुष्य को स्वतंत्र रूप से सोचने के लिए विवश करता है। कर्तव्य और दायित्व की चेतना का जागरण ही व्यक्ति को वर्तमान से प्रतिबद्ध करता है।

मनुष्य अपने जीवन को सही ढंग से जीना चाहता है तो वह वर्तमान को पहचाने, क्षण को समझे और उसका उपयोग करे। यह क्षण बहुत कीमती होता है। इसे खो दिया गया तो पश्चात्ताप के अतिरिक्त कुछ भी शेष नहीं रहेगा। प्रश्न हो सकता है कि क्षण का उपयोग कैसे किया जाय? तपस्या, ध्यान, स्वाध्याय, सेवा आदि अनेक उपक्रम हैं। पर ये अनुष्ठान सबके वश की बात नहीं है। ऐसी स्थिति में अणुव्रत कहता है कि मनुष्य और कुछ कर सके या नहीं, अपने आपको नैतिक बना ले, प्रामाणिक बना ले, उसका जीवन सफल हो जायगा।

कुछ लोग कहते हैं, देश में सुरक्षा का संकट है। कुछ लोग मानते हैं कि जातियों और पार्टियों को लेकर होने वाला बिखराव बड़ा संकट है। कुछ लोगों का चिन्तन है कि विकट संकट चरित्र का है। संकट के और भी अनेक रूप हो सकते हैं। उनसे त्राण देने वाला एक ही तत्त्व है। वह तत्त्व है नैतिकता। अणुव्रत नैतिकता की मशाल लेकर चल रहा है। जिस समाज या राष्ट्र के लोग इस मशाल को थाम कर चलेंगे, वहां असुरक्षा, बिखराव और चरित्रहीनता का अंधेरा टिक ही नहीं पायगा।

१३ अनुकरण की प्रवृत्ति विवेक की आख

अनुकरण मनुष्य की सहज वृत्ति हे। सामाजिकता का विकास इसी वृत्ति क आधार पर होता ह। एक नवजात शिशु परिवार मे सब लोगो का बोलते हुए दखता हे, वह बालना सीख लेता हे। उसी बच्च का वर्षो तक एकान्त मे रखा जाए, लागो के साथ उसके सपर्क सूत्रो को तोड दिया जाए, तो उसकी वाणी नही फूट सकती, वह गूगा हो जाता हे। बोलने की तरह ओर भी वहुत-सी प्रवृत्तिया ह, जिनको देखकर ही सीखा जा सकता ह। इस अथ म अनुकरण का अपना महत्त्व ह। आगे वढने के लिए इसकी नितान्त अपेक्षा हे। अनुकरण का यह सिलसिला वचपन के साथ समाप्त नही होता। वयस्क होने के वाद भी अनेक वातो म अनुकरण चलता हे।

कहा जाता हे कि वयस्क व्यक्तियो का सर्वे किया जाए तो अनुकरण की वृत्ति पुरुषो की अपेक्षा महिलाओ मे अधिक पाइ जाती ह। पुरुष अनुकरण नही करते, यह वात नही हे। पर उनके अनुकरण की सीमाए होती ह। अनुकरण का सिद्धान्त कई दृष्टियो से अच्छा हे, यदि उसके साथ विवेक की पुट रह। विवेकहीन अनुकरण अन्धानुकरण वन जाता ह। इसमे लाभ या विकास की सभावना नही रहती। कुछ प्रवृत्तिया तो ऐसी हे, जिनके अनुकरण से लाभ के स्थान पर नुकसान होता हे। ऐसे प्रसगो पर विवेक की आख को खुला रखा जाए, यह नितान्त अपक्षित हे।

मे परपरा का विरोधी नही हू। अच्छी परपराए एक पीढी स दूसरी पीढी म सक्रान्त होती रह, यह आवश्यक ह। जिस देश या समाज मे परम्परा को काच का बतन मानकर एक झटके से तोड दिया जाता हे, वह देश ओर समाज अपनी सास्कृतिक ओर सामाजिक विरासत को सुरक्षित नही रख सकता। किन्तु इसका यह अथ नही हे कि वाछित एव अवांछित—सभी

अच्छे आदमियों की कोई कमी नहीं है, पर उनमें दो कमियां अवश्य हैं। पहली कमी यह है कि वे संगठित नहीं हैं। संगठन में शक्ति होती है। बिखरे हुए तिनकों की महत्ता से बनी हुई बुहारी पूरे घर का कूड़ा करकट साफ कर देती है। अनेक लकड़ियों से बनी हुई भारी को कोई मजबूत आदमी भी नहीं तोड़ सकता। अलग-अलग बिखरी हुई लोहे की कड़ियां कुछ भी नहीं कर सकतीं। पर उनके संयोग से बनी हुई सांकल हाथी और सिंह को भी बांध देती है। यही स्थिति अच्छे लोगों की है। उनका संगठन सुदृढ़ हो जाय तो वे समाज की धरती पर पनपने वाले असामाजिक तत्वों को धराशायी कर सकते हैं। काश! आदमी अपनी इस क्षमता को समझ कर उसका सम्यक् उपयोग कर पाता।

अच्छे लोगों की दूसरी कमी है बुराई या बुरे लोगों के प्रति उपेक्षा का भाव। कोई व्यक्ति या समूह बुराई में प्रवृत्त होता है, उसकी जानकारी पाकर या उसे देखकर भी जो लोग हरकत में नहीं आते, चुपचाप बैठे रहते हैं, उन्हें क्या कहा जाये? बुराई करना पाप है, इसी प्रकार बुराई को सहन करना भी पाप है। ऐसा पाप आज बहुत लोग कर रहे हैं। वे सोचते होंगे कि बिना प्रयोजन झंझट में क्यों फंसे? ऐसे चिंतन पर मुझे तरस आता है। क्या आदमी का जीवन इतना व्यक्तिगत है? इकालॉजी के नियम को समझने वाले जानते हैं कि एक आदमी पर कोई आपदा आती है, उससे पूरी मानव जाति प्रभावित होती है। ऐसी स्थिति में कोई भी चिंतनशील आदमी उपेक्षा की संस्कृति का शिकार कैसे हो सकता है? अच्छे आदमियों का संगठन और बुराई के प्रतिकार की दिशा में उनकी जागरूकता— ये दो घटनाएं घटित हो जाएं तो विश्व के चित्रपट पर अच्छे आदमी उभर कर ऊपर आ सकते हैं।

१५ क्या खोया? क्या पाया?

इस ससार का सबसे श्रेष्ठ प्राणी हे मनुष्य। उसकी श्रेष्ठता क मापक विदु ह– विचार, विवेक ओर आचरण। मनुष्य क पास जेसा मस्तिष्क ह, अन्य किसी पाणी क पास नही हे। इस दृष्टि स उसकी विचार-प्रक्रिया विलक्षण ह। मनुष्य क पास हेय-उपादेय का जितना विवक ह, अन्य प्राणियो क पास नही ह। इस दृष्टि स वह विशिष्ट ह। मनुष्य का आचरण जितना उन्नत हो सकता ह, अन्य प्राणिया मे वेसी सभावना नही ह। इस दृष्टि स वह पूणता क शिखर पर पहुच सकता ह। इस विलक्षणता, विशिष्टता ओर पूणता की सभावना के बावजूद वह अशान्त ह, भान्त हे आर श्रान्त है। वज्ञानिक युग मे, इतनी उपलब्धियो के युग म उसकी अशान्ति दूर नही हुइ, भ्रान्तियो का घरा नही टूटा ओर श्रान्ति स राहत नही मिली। क्यो? यह यक्षप्रश्न आज भी अनुत्तरित ह।

मनुष्य की उपलब्धिया असीम ह। उनका सख्याकन होना कठिन हे। नया पाने, बटोरन आर उसका सुरक्षित रखन की चिन्ता म वह भूल ही गया कि उसने कुछ खोया भी ह। उसकी सवसे वडी सम्पदा 'आस्था' खो गइ। आज मनुष्य की न धम म आस्था हे, न भगवान् म आस्था हे न सिद्धाता म आस्था हे ओर न अपने आप मे आस्था हे। आस्था की डोर से बधा हुआ आदमी निलक्ष्य गति करके भी उत्पथ मे नही जाता। जहा आस्था की डोर ही टूट जाए या छूट जाए, वहा अशान्ति नही तो ओर क्या होगा? आस्था की धरती पर भ्रान्तिया का जगल नही उगता। आस्था की छाया म चलने वाले जीवन रथ के अश्व भी कभी नही थकते।

मनुष्य ने आस्था का स्थान अथासक्ति का दे दिया हे। अथ अनथ का मूल हे, यह कथन एकागी हे। अर्थ का भी निश्चित अर्थ होता हे। उसे

जीवन के लिए उपयोगी और आवश्यक माना गया है। पर वही सब कुछ है, यह चिंतन भी एकांगी है। आज का आदमी उसे ही सब कुछ मान रहा है। अय अट्ठे अय परमट्ठे सेस अणट्ठे--यही अर्थ है, यही परमार्थ है, शेष अनर्थ है। भगवान् महावीर के भक्तों ने यह बात निर्ग्रन्थ प्रवचन के सन्दर्भ में कही। किन्तु लोगों की दृष्टि इतनी अन्तर्मुखी नही है। उन्होंने उस कथन को अर्थ के साथ जोड दिया, ऐसा प्रतीत होता है। अर्थ को ही अर्थ और परमार्थ मानना अशान्ति को खुला आमन्त्रण देना है।

लोग कहते हैं कि वे जिस युग में जी रहे हैं, वह युग कलियुग है। कलियुग मे अशान्ति नहीं होगी तो और क्या होगा? कलियुग है, यह बात सही है। प्रश्न होता है--कलि कौन है? इसका उत्तर तैत्तिरीय उपनिषद देता है--

कलि शयानो भवति, सजिहानस्तु द्वापर।
उत्तिष्ठन् त्रेता भवति, कृत सपद्यते चरन्॥

जो सोता है, वह कलि होता है। जो निद्रा का त्याग करता है, वह द्वापर होता है। जो खडा होता है, वह त्रेता कहलाता है और जो चलता है, वह सत्य को प्राप्त करता है।

उपनिषद की भाषा प्रतीकात्मक है। युग का क्या सोना और क्या जागना। युग कभी किसी की प्रतीक्षा नही करता। वह आता है तो लोग सोचते हैं कि यह कुछ समय रुकेगा। किन्तु वह नदी के प्रवाह की तरह आगे बढ जाता है। लोग सजग होते हैं तब तक वह उनकी पकड से बाहर चला जाता है। चार युगों की व्याख्या उनमें जीने वाले मनुष्य के सन्दर्भ में की गई है। जिस युग के लोग गहरी सुषुप्ति में रहते हैं, वह कलियुग है। जिस युग के लोग नींद से अपना पल्ला छुडाकर अंगडाई लेते हैं, जाग जाते हैं वह द्वापर युग है। त्रेता युग का आदमी उठने का प्रयास करता है। उसका यह प्रयास ही उसे सतयुग में ले जाता है। सतयुग के लोग न सोते हैं और न हाथ पर हाथ देकर बैठते हैं। निरन्तर गतिशील रहते हैं। 'चरन् वै मधु विन्दते'--जो चलता है, वही लक्ष्यसिद्धि के रूप में मधु को प्राप्त करता है। इसलिए 'चरैवेति चरैवेति'--चलते चलो, सत्पुरुषार्थ करो। कलियुग भी तुम्हारे लिए सतयुग बन जाएगा।

हजारो वर्ष पहले हमारे ऋषियो की तप पूत वाणी ने जिस सत्य को उजागर किया, उसकी विस्मृति होती जा रही हे। मनुष्य ने अपना मस्तिष्क कम्प्यूटर को गिरवी रख दिया हे। शायद यही कारण हे कि वह स्मरणीय बातो को भूलता जा रहा हे। कम्प्यूटर का बहुत उपयोग हे, पर उसी के भरोसे रहने से कभी धोखा भी हो सकता हे। दूसरो का भरोसा करने से पहले अपने आप पर भरोसा करना जरूरी हे। स्वय पर भरोसा वही कर सकता हे, जिसकी आस्था जीवत हे। अणुव्रत का प्रयत्न आस्था को पुनर्जीवन देने का प्रयत्न हे। नेतिक मूल्यो के प्रति क्षीण हो रही आस्था जिस दिन जागेगी, वह युग सही अर्थ मे सतयुग होगा। उस युग मे जीने वाले लोग भ्रान्त धारणाओ के घेरे को तोडकर शान्त ओर सतुलित जीवन जी सकेगे।

१६. धर्म और सम्प्रदाय

मनुष्य की आस्था के अनेक केन्द्र होते हैं। उनमें एक शक्तिशाली केन्द्र है धर्म। सिख, इसाई, इस्लाम, जैन, बौद्ध, बहाइ, यहूदी, ताओ आदि बहुत धर्म हैं इस संसार में। एक-एक धर्म के अनुयायियों की संख्या लाखों-करोड़ों में है। उनकी अवधारणा में वह धर्म सर्वश्रेष्ठ है, जिससे वे जुड़े हुए हैं। अणुव्रत कहता है कि ये सब धर्म नहीं, सम्प्रदाय हैं। धर्म एक अविभक्त सत्य है। वह खण्डों में विभाजित नहीं होता। उसके साथ विशेषण जोडने की अपेक्षा ही क्या है ? निर्विशेषण धर्म ही जनधर्म या लोकधर्म के रूप में प्रतिष्ठित हो सकता है। यदि धर्म के साथ कोई विशेषण जोड़ना ही हो तो वह हो सकता है मानव धर्म, अहिंसा धर्म, सत्य धर्म या आचार धर्म। क्या कोई भी सम्प्रदाय धर्म के इस स्वरूप को अस्वीकार कर सकता है?

कुछ लोग पूछते हैं—'क्या सम्प्रदाय के बिना भी धर्म हो सकता है?' इस प्रश्न का उत्तर है अणुव्रत। अणुव्रत का सम्बन्ध किसी सम्प्रदाय विशेष के साथ नहीं है। एक जैन अणुव्रती बन सकता है तो एक मुसलमान भी अणुव्रती बन सकता है। अणुव्रत की स्वीकृति में जाति का भी कोई बन्धन नहीं है। हरिजन, महाजन या गिरिजन कोई भी हो, नैतिक मूल्यों के प्रति आस्था है तो अणुव्रती हो सकता है। भौगोलिक सीमाएं भी अणुव्रत को संकीर्ण नहीं बनाती है। भारतीय व्यक्ति को अणुव्रती बनने का जितना अधिकार है, उतना ही किसी जापानी, फ्रांसीसी, अमेरिकन ब्रिटिश आदि को है। इसमें काले और गोरे का भी कोई भेदभाव नहीं है। लिंगगत प्रतिबद्धता को भी यहां कोई स्थान नहीं है। पुरुष की तरह महिला को भी सम्मान और गौरव के साथ अणुव्रती बनाया जा सकता है। अणुव्रत एक ऐसा

मच हे, जिसका उपयोग अच्छा जीवन जीने की आकाक्षा रखने वाले लोग कर सकते हे।

कुछ लोग कहते हे—'भष्टाचार इतना वढ गया, नेतिक मूल्या का क्षरण हो गया, ऐसे समय म अणुव्रत क्या कर सकता ह?' नेतिक पतन की वात जो लोग कर रहे ह, वे गलत नही ह। जीवन के हर क्षेत्र मे सदाचार की कमी आइ हे। फिर भी मेरा यह दृढ विश्वास हे कि भारत की भूमि से सदाचार की जड नही उखड सकती। भारतीय जनता कभी चरित्रशून्य हो नही सकती। उतार-चढाव का जहा तक सवाल हे, वह हर युग मे आता रहता ह। महत्त्वपूण वात हे दृष्टिकोण की। व्यक्ति जिस दृष्टि से देखता हे, उसे ससार वसा ही दिखाइ देता ह।

दा मित्र वात कर रह थे। एक बोला—'केसा कलिकाल ह ' चारा ओर अधेरा-ही-अधरा ह। दो रात्रियो क वीच एक उजला दिन हाता हे।'

मित्र की वात सुनकर दूसरे व्यक्ति ने कहा—'मुझे तो चारो ओर प्रकाश-ही-प्रकाश दिखाइ देता हे। दो उजले दिनो के वीच म एक ही अधेरी रात होती ह।

एक ही सन्दभ मे दो व्यक्तियो के भिन्न विचार इस तथ्य को प्रमाणित करते ह कि दृष्टिकाण के भेद से एक ही बात, एक ही घटना और एक ही दृश्य को अनेक कोणा से देखा जा सकता हे आर उसके अलग-अलग अर्थ निकाल जा सकते ह। दृष्टिकोण विधायक हो तो आदमी को सव कुछ अच्छा दिखाई देता हे आर दृष्टिकाण यदि निपेधात्मक हाता ह ता प्रकाश भी अधकार बन जाता हे।

नेतिक मूल्यो के बारे म मेरा चिन्तन यह हे कि क्षरण के बावजूद भारतीय सस्कृति मूल्या से गुथी हुई हे। देश म आज भी अच्छाइ ओर सचाइ सुरक्षित हे। राख के नीचे अगारा की तरह वह दवी हुई हे। उसे उभारने की अपक्षा हे। अच्छाइया सामने रहगी तो बुराइया टिक नही पाएगी। बुराइया अकेली चल ही नही सकती। उन्ह गति के लिए आलम्वन की अपेक्षा रहती हे। व अच्छाइया के सिर पर पाव रखकर ही आगे बढ सकती ह। मनुष्य के जीवन मे अच्छाइया ओर बुराइया दोना होती हे। बुराइयो का पलडा भारी न हा, यह जागरूकता उसे अनेक बुराइयो से वचा सकती हे।

अणुव्रत कोई हवाई कल्पना नहीं है। बहुत ऊंचे आदर्शों को आत्मसात् करने की बात भी नहीं है। यह मानवीय मूल्यों की रक्षा का एक छोटा सा अभियान है। अच्छे जीवन की न्यूनतम आचार-संहिता है। उत्कृष्ट आचार के लिए इसमें पर्याप्त अवकाश है। फिर भी वह यथार्थ की धरती से दूर हटकर कोई बात नहीं करता है। अणुव्रत मनुष्य को देवता बनाने का उपक्रम नहीं है। इसका लक्ष्य है--मनुष्य को मनुष्य बनाना। मनुष्यता के मापक बिन्दु ये हो सकते हैं --

- प्राणी मात्र के प्रति संवेदनशीलता।
- मानवीय सम्बन्धों में उदार दृष्टिकोण।
- व्यक्तिगत चरित्र की उदात्तता।
- खानपान की शुद्धि और व्यसनमुक्ति।
- व्यक्तिगत हित या स्वार्थ के लिए किसी के हितों को विघटित न करना।

इसी प्रकार की कुछ और बातें जीवन के साथ जुड़ती रहें और मनुष्य मनुष्यता के शिखर पर आरोहण करता रहे,यही अणुव्रत है। यात्रापथ कितना ही लम्बा क्यों न हो, अणुव्रत का साथ है तो फिर भय की कोई बात नहीं है।

१७. वीमारी अनास्था की

जीवन अशाश्वत ह, क्षणभगुर ह, यह एक सावभोम सिद्धान्त हे। पूवजन्म म किसी का विश्वास हो या नही, पुनजन्म का कोइ मान या नहीं, किन्तु यह तथ्य निर्विवाद ह कि जो जीवन जीया जा रहा हे वह सदा नही रहगा। यह कव तक रहगा? इसका भी किसी को भरासा नही ह। फिर भी मनुष्य प्रमाद करता हे, असद् आचरण करता हे आर परिणाम की चिन्ता किए विना प्रवृत्ति करता ह।

किसी मनुष्य का आत्मा या परमात्मा म विश्वास हो या नही, उसकी सुख-शान्तिमय जीवन जीन की आकाक्षा सदा प्रवल रहती हे। वह जीवन की पविनता के प्रति आस्थाशील हो या नही पर दूसरे क गलत आचरण का सहन नही कर पाता। सत्य की खोज म उसकी शक्ति लगे या नही पर वह सत्य का समझन का दावा करता रहता हे। समाज ओर राष्ट्र के लिए उसन कुछ किया हा या नही, पर वह समाजद्रोही आर राष्ट्रद्रोही कहलाना नहीं चाहता। ऐसी स्थिति म मनुष्य का अपने जीवन की दिशा का निधारण करना चाहिए। उसे ऐसी दिशा मे प्रस्थान करना चाहिए, जा उसके जीवन को तनाव, कुठा, सत्रास ओर अस्थिरता की त्रासदी से वचा सक।

मनुष्य जानता हे कि जेसा वीज वोया जाता ह, वेसा ही फल मिलता हे। वह यह भी जानता हे कि उसके लिए करणीय क्या हे आर अकरणीय क्या हे? फिर भी वह करणीय को छोडकर अकरणीय म रस लेता हे। वह मोत से डरता हे, फिर भी जहर निगलता जा रहा हे। वह अशान्ति नही चाहता, फिर भी ऐसे काम करता हे, जिनसे अशान्ति को रोका नही जा सकता। वह जेल से डरता ह, फिर भी हत्या, डकेती आदि दुष्कृत्यो से विरत नही होता। क्या? वह कोन-सी अभिप्रेरणा ह, जो मनुष्य को गलत माग पर

चलने के लिए बाध्य करती है?

मन जान सब बात, जानत ही आगुन कर।
काहे की कुशलात, कर दीपक कुव पड ॥

मनुष्य इतना समझदार प्राणी है कि वह सही या गलत सब कुछ जानता है। जानने, समझने के बावजूद वह गलत दिशा ले रहा है। उसकी यह कौन सी बुद्धिमत्ता है जो हाथ में दीया होने पर भी कुए में जाकर गिर रहा है? अनजाने में होने वाला प्रमाद क्षम्य हो सकता है, पर जानते हुए जो प्रमाद हो, उसका प्रतिकार कैसे होगा?

आज पूरे विश्व के सामने कुछ समस्याएं सिर उठाए खड़ी हैं। विश्व के स्तर पर ही उनका समाधान खोजा जाए तो सभवत कोई समस्या ऐसी नहीं है, जो अपने अस्तित्व को बचाकर रख सके। पर समाधान कौन खोजे? इस दिशा में पहल कौन करे? इन प्रश्नों पर एक गहरी चुप्पी चादर डालकर सो रही है। कौन उस चादर को उतारे? कौन उन प्रश्नों की गहराई में झांके? और कौन विश्व मानव को उसकी गरिमा से परिचित कराए?

जिसके पैर न फटी बिवाइ, वो क्या जाने पीर पराइ?

जिन लोगों के सामने किसी प्रकार का अभाव नहीं है, वे अभावग्रस्त लोगों की पीडा कैसे पहचान पाएंगे? मनुष्य की मूलभूत आवश्यकताओं—भोजन, वस्त्र, मकान, शिक्षा, चिकित्सा आदि की पूर्ति भी जहा नहीं होती हो, वह कोई भी राष्ट्र हो, वहा अपराध बढेंगे। सयुक्त राष्ट्र सघ का दायित्व केवल आमने-सामने होने वाले युद्धों को रोकने तक ही सीमित क्यों हो? भीतर-ही-भीतर जो लडाइ लडी जा रही है, उसके कारणों की खोज और उसकी रोकथाम का प्रयत्न क्या आवश्यक नहीं है?

आज की मूलभूत समस्या है—जीवन मूल्यों के प्रति अनास्था। अनास्था की इस बीमारी का उपचार किसी के पास नहीं है। बीमारी असाध्य हो, उससे पहले ही सही निदान और उपचार की जरूरत है। इसके लिए आध्यात्मिक सामाजिक, साहित्यिक और राजनीतिक क्षेत्रों से एक समन्वित प्रयास हो। इस प्रयास से कोई नई दिशा निकलेगी, ऐसी सभावना की जा सकती है।

१८ स्वस्थ कौन?

मनुष्य अस्वस्थ है, इसलिए अशान्त है। स्वस्थ मनुष्य कभी अशान्त नहीं होता। स्वस्थ कौन होता है? जो शरीर से स्वस्थ है, वह स्वस्थ होता है? जो मन से स्वस्थ है, वह स्वस्थ होता है? शारीरिक दृष्टि से स्वस्थ व्यक्ति स्थूल रूप से स्वस्थ कहलाता है, पर यह स्वस्थता की अधूरी परिभाषा है। मानसिक स्वस्थता का स्तर कुछ ऊंचा है, पर वह भी अपने आप में पूर्ण नहीं है। सर्वोत्तम स्वास्थ्य है भावनात्मक स्वास्थ्य—इमोशनल हेल्थ। शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य की उपेक्षा नहीं की जा सकती, पर भावनात्मक स्वास्थ्य के अभाव में शरीर और मन भी स्वस्थ नहीं रह सकते।

आज का आदमी शरीर के प्रति जितना जागरूक है, मन के प्रति नहीं है। वह भोजन, वेषभूषा, स्नान, भ्रमण आदि पर पर्याप्त ध्यान देता है, किन्तु संगीत, साहित्य, काव्य, कला, प्राकृतिक सौन्दर्य आदि के प्रति पूरा जागरूक नहीं रहता। वह मन के प्रति जितना जागरूक है, भावों के प्रति नहीं है, आत्मा के प्रति नहीं है। वह रोजी-रोटी की चिन्ता से उपरत होकर सांस्कृतिक दृष्टि से कुछ सक्रिय हो जाता है, पर प्राणों की प्यास का अनुभव ही नहीं कर पाता। अस्वस्थता का अनुभव होने पर मनुष्य चिकित्सक के पास जाता है। वह शरीर की जांच कराता है, औषधि का सेवन करता है और स्वस्थ होना चाहता है। किन्तु न चिकित्सक स्वस्थ है और न औषधि स्वस्थ—शुद्ध है। अस्वस्थ से स्वास्थ्य की आशा करने से निराशा ही हाथ लगेगी।

स्वास्थ्य की समीचीन प्रक्रिया में सबसे पहले भावों पर ध्यान देना जरूरी है। भावों की स्वस्थता का अर्थ है भावों की पवित्रता। जो व्यक्ति अपने आवेगों और संवेगों पर नियन्त्रण रखता है, निषेधात्मक भावों से मुक्त रहता है, उसके भाव पवित्र हो सकते हैं। निराशा, घृणा आक्रोश, क्रूरता, छलना

आदि निषेधात्मक भाव है। जब तक व्यक्ति पर इन भावों की छाया रहेगी, वह स्वास्थ्य लाभ नहीं कर पायेगा।

स्वस्थ जीवन की आधारभूत भूमिका है स्वस्थ जीवनशैली। न जागने का समय निश्चित है और न सोने का। शयन और जागरण की अनिश्चितता से पूरा कार्यक्रम अस्तव्यस्त हो जाता है। इस दृष्टि से जीवनशैली पर ध्यान देना नितान्त आवश्यक है। यह एक ऐसा विषय है, जिसमें खानपान, रहन सहन, रीति-रिवाज, उत्सव, पर्व, त्योहार, पारस्परिक संबंध, व्यवसाय, धार्मिक आस्था आदि बहुत तत्वों का समावेश हो जाता है। साहित्य और संस्कृति का भी इसी के साथ संबंध है। इन बिन्दुओं पर विचार करते समय अणुव्रत, प्रेक्षाध्यान, जीवन विज्ञान स्मृति से ओझल नहीं होने चाहिए।

मनुष्य कैसा होना चाहिए? इसका सुन्दर मॉडल है अणुव्रत की आचार-संहिता। मनुष्य अपने आपको उस मॉडल में कैसे ढाले? इस प्रश्न का उत्तर है प्रेक्षाध्यान। अणुव्रत एक दर्शन है और प्रेक्षाध्यान एक प्रयोग है। अकेला दर्शन अधूरा होता है तो अकेला प्रयोग भी अधूरा होता है। इन दोनों को एक दूसरे का पूरक मानकर स्वस्थ जीवनशैली की कल्पना की जा सकती है। स्वस्थ जीवनशैली की प्राथमिक प्रक्रिया को शिक्षा के साथ जोड़ने का नाम है जीवन विज्ञान। विज्ञान में अध्यात्म और अध्यात्म में विज्ञान की सोच को निहित कर मनुष्य के संपूर्ण स्वास्थ्य अथवा स्वस्थ जीवन शैली के बारे में जागरूकता बढ़ने से ही भावात्मक स्वास्थ्य की उपलब्धि हो सकती है।

१६ राष्ट्रीय चरित्र और शिक्षा

राष्ट्रीय चरित्र को धूमिल या धवलिम करने में सबसे बड़ा हाथ होता है शिक्षा का। एक समय था, जब देश परतन्त्र था। उस स्थिति में इस पर एक प्रकार की शिक्षा थोपी गई। उसका चरित्र भारतीय संस्कृति और लोक जीवन के अनुकूल नहीं था। इस बात को समझने पर भी उस शिक्षा का अस्वीकार संभव नहीं था। क्योंकि पराधीन व्यक्ति और राष्ट्र को यह सब स्वीकार करना पड़ता है, जो सत्ता के सिंहासन से कराया जाता है।

सामान्यतः शिक्षा का सम्बन्ध जीविका के साथ जोड़ा जाता है, जब कि वह जीवन के लिए अनिवार्य तत्त्व है। जहां जीविका को ही प्रधानता मिलती है, वहां साइन्स और टेकनोलॉजी की शिक्षा का महत्त्व बढ़ता है और नैतिकता एवं चरित्र के तत्त्व गौण हो जाते हैं। उस बिन्दु पर जाकर शिक्षा कितनी दयनीय बन जाती है, जहां वह जीविका भी नहीं जुटा पाती। न जीवन और न जीविका। ऐसी शिक्षा राष्ट्र के लिए अभिशाप बन जाती है। जीवन मूल्यों से अपरिचित करोड़ों-करोड़ों ऐसे विद्यार्थी हैं, जो बेरोजगारी की राह पर खड़े जीवन की न्यूनतम आवश्यकताओं के लिए तरस रहे हैं। ऐसे समय में शिक्षानीति या शिक्षापद्धति की सार्थकता पर कुछ प्रश्न चिह्न खड़े हो जाते हैं, जो समाज की अपेक्षा और बुनावट पर ध्यान दिए बिना ही विद्यार्थी पर पुस्तक और डिग्रियों का भार लाद रही है।

विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों की लंबी कतार देश के शैक्षणिक स्तर को ऊंचा उठाने के लिए कटिबद्ध हैं। स्तर की परिभाषाएं अलग-अलग हैं। एक दृष्टि से आज का विद्यार्थी अतीत की अपेक्षा बहुत अधिक विषय पढ़ता है। वह देश विदेश की हर गतिविधि से परिचित रहता है। कई क्षेत्रों में उसने अपनी दक्षता बढ़ाई है। किन्तु कुछ ऐसी बातें भी हैं,

जो स्तर का उठाने की अपेक्षा नीचा करने वाली प्रमाणित हो रही ह। हिन्दी का शुद्ध लेखन ओर उच्चारण स्नातक ओर स्नातकात्तर विद्यार्थियो के लिए भी कठिन हो रहा ह। साहित्यिक स्तर की हिन्दी को समझन म तो उन्ह एडी से चोटी तक पसीना आ जाता हे। एक राष्ट्रभाषा अपने ही राष्ट्र म इतनी उपेक्षित हो जाए तो उसकी ओर ध्यान कोन दगा?

यह सच हे कि किसी भी देश क वातावरण का वदलन मे शिक्षा की भूमिका अहम होती हे। देश क लाखो-करोडा विद्यार्थी जस सस्कार पाएगे उन्ही के आधार पर दश बनेगा। इस दृष्टि स शिक्षा पद्धति को ठास वनाना जरूरी हे। वहुत लोगो का यह अभिमत हे कि हमारी शिक्षा पद्धति गलत ह। मेरा चिन्तन इससे भिन्न हे। मरी दृष्टि म शिक्षा पद्धति गलत नही, अधूरी हे। इससे बाद्धिक विकास हो रहा ह, शारीरिक विकास पर भी थोडा ध्यान दिया जा रहा हे, किन्तु मानसिक ओर भावनात्मक विकास शून्य की तरह हे। आश्चर्य तो इस बात का हे कि शिक्षा नीति म वदलाव के लिए कितने आयोग वने कितनी रिपोर्टे आइ, पर हुआ कुछ नही। इस स्थिति मे निराशा का वातावरण वन रहा हे।

नेतिक शिक्षा, धार्मिक शिक्षा आदि शब्द आज इतन घिसे-पिटे हा गए ह कि इनके प्रति कोइ आकर्षण नही रहा हे। नतिक शिक्षा पर एक आपत्ति यह भी आ रही हे कि जो शिक्षा दी जा रही ह, क्या वह अनेतिक हे? धार्मिक शिक्षा पर टिप्पणी यह ह कि धम-निरपेक्ष देश म किसी धम-सम्प्रदाय विशेष की शिक्षा केसे दी जा सकती हे? एसी स्थिति म शिक्षा का सवागीण वनाने के लिए गहराइ से चिन्तन किया गया। उस चिन्तन की निष्पत्ति ह जीवन विज्ञान। प्राथमिक कक्षाआ से लेकर स्नातकोत्तर स्तर तक जीवन विज्ञान का पाठ्यक्रम तयार हो चुका हे। इसम सिद्धान्त पक्ष के साथ प्रायोगिक पक्ष पर पयाप्त ध्यान दिया गया हे। लक्ष्य यह रहा हे कि विद्यार्थी के समग्र व्यक्तित्व का निर्माण हा। वह केवल वाद्धिक विकास पर रुके नहीं। उसम आवेगा और सवेगा पर नियन्त्रण पाने की क्षमता भी वढे। साइन्स आर टक्नोलॉजी के साथ-साथ उसे सहिष्णुता सन्तुलन, धृति करुणा सयम आदि जीवन मूल्यो का वाध-पाठ दिया जाए। शिक्षा के क्षेत्र मे जीवन विज्ञान का प्रवेश शिक्षा सवधी अनेक समस्याओ का स्थायी समाधान दे सकेगा ऐसा विश्वास हे।

२० आशा का दीप आस्था का उजास

यूनान का सम्राट् सिकन्दर भारत आया। भारतीय लोगो की जीवन-शैली कैसी है? उनके चिन्तन का स्तर कैसा है? उनका आचार-व्यवहार कैसा है? सिकन्दर के मन म ढेर-सार प्रश्न थ। देश की स्थिति का आकलन करने के लिए वह घूमता घूमता तक्षशिला पहुचा। शहर से बाहर खत म उसका पडाव हुआ। वहा किसाना की सभा हो रही थी। सभा मे कुछ लोग काफी गभीर चचा म उलझे हुए थे। सिकन्दर के मन मे कुतूहल पेदा हुआ। उसने एक व्यक्ति को अपने पास बुलाकर पूछा—'बात क्या है? ये लोग किस विषय म उलझे हुए ह?' उस व्यक्ति ने पूरे घटनाचक्र को विस्तार के साथ बताते हुए कहा—

'यहा कुछ समय पहले एक खेत की बिक्री हुई। खेत खरीदने वाले ने उसमे हल जुतवाए। हल चलाने वाले को वहा स्वणमुद्राआ से भरा कलश मिला। उसन जमीन के मालिक को सूचित किया। वह खेत पर आया। उसने स्वणमुद्राओ से भरा कलश देखकर कहा—'मन खेत खरीदा है। खेत पर मेरा अधिकार है। पर इस जमीन से जा खजाना निकला है, वह मेरा नही हो सकता। खेत क पूव मालिक को बुलाकर यह उसे सापना होगा।'

खेत का पूर्व मालिक आया। पूरी स्थिति की जानकारी पाकर वह बोला—'मेने खत बेच दिया। अब इस पर मेरा काइ अधिकार नही है। यह खजाना मने यहा गाडा नही। इस दृष्टि से भी इस पर मरे स्वामित्व का कोइ ओचित्य नही ह। जिनका खेत, उनका खजाना। मुझे बीच मे न घसीटे तो अच्छा रहेगा। खेत के पूव ओर वतमान—दोनो मालिक अपनी बात पर अड गए। दोना म स काइ भी वह स्वणमुद्राआ से भरा कलश अपने घर ल जान क लिए तयार नही हुआ। आखिर पचायन बुलाइ गई। पचा ने दानो व्यक्तियो

को समझाकर स्वणकलश लन की वात कही। पर उनका निणय अटल ह। अव दखने ह कि पच क्या फमला दत है ?

सिकन्दर क मन म भी पचायत का फसला सुनन की भावना तीव्र हा उठी। पचा न फसला सुनाया—'खेत म जो खजाना निकला ह, वह अव तक अज्ञात था। किस समय किस व्यक्ति न उस यहा गाडा, इस सम्बन्ध म किसी का काइ जानकारी नही ह। य दोना व्यक्ति इस अस्वीकार कर रह ह। वहुत समझाने क वावजूद ये इस स्वीकार करन के लिए तयार नही ह। ऐसी स्थिति म पचायत का निणय है कि सारा धन विश्वविद्यालय क उपयाग म लिया जाएगा।' सिकन्दर खत के दाना मालिका की निस्पृहता देखकर मन-ही-मन उनके प्रति प्रणत हा गया।

एक आर अर्थ के प्रति इतनी अनासक्ति ! इतनी निस्पृहता ! दूसरी ओर अथ क प्रति अतिरिक्त लगाव। इतना अधिक लगाव कि अथ क मामल म उजली छवि की वात कल्पनालोक जसी वात लगती ह। ऊपर स लकर नीचे तक प्राय सव लाग आथिक असदाचार म लिप्त पाए जाते ह। कभी कभी तो ऐसा प्रतीत होता ह कि अथ ही जीवन वन गया ह। उसके लिए ओचित्य और अनोचित्य की सारी सामाए टूट गइ ह। यही कारण ह कि कोइ व्यक्ति किसी के वार मे कुछ भी कह सकता हे। क्या भारत के वे दिन फिर कभी लाटग, जव आथिक शुचिता के आधार पर व्यक्ति का मूल्याकन होगा? अणुव्रत ही एक आशादीप हे, जो सिकन्दर जेसे विदेशी शासका के मन मे भारतीय आस्था का उजास पहुचा सकता हे।

२१ मानव जाति का आधार

धारा नगरी के राजा भाज ओर सस्कृत क महाकवि कालिदास क वार मे अनक कथाए, दन्तकथाए, आर घटनाए प्रसिद्ध हे। किसी विवादास्पद प्रसग मे कोई विद्वान कुछ भी कह दे, राजा भोज को सतोप नही होता। महाकवि कालिदास ही राजा का सतुष्टि दे सकता था। एक वार राजा भोज क मन म एक नइ वात पेदा हुइ। राजा न कालिदास से कहा—'महाकवे ! मेरी मृत्यु के वाद आप जो मरसिया पढग, उसे म आज अपने कानो से सुनना चाहता हू।' भोज ऐसी वात कह सकता था, पर कालिदास जेसा विवकशील ओर विद्वान व्यक्ति उसे स्वीकार केस करता? वह वोला—'मे आपकी दीघजीविता की कामना करता हू। इस सम्वन्ध मे कविता सुनना चाहे तो सुना सकता हू।

राजा भाज जिस वात को पकड लेता, वह झटपट उसस छूटती नही थी। उसने आग्रह किया। कालिदास वोला—'आप ओर काई आदेश दे, मे अविलम्व उसकी क्रियान्विति करूगा, पर ऐसी कविता नही सुनाऊगा।' राजा के आग्रह ने आक्रोश का रूप ले लिया ओर महाकवि कालिदास को देश से निर्वासित कर दिया। कालिदास चला गया। राजा भोज का मन नही लगा। वह वेश वदलकर कालिदास की खोज मे निकल पडा। कुछ महीना वाद एक गाव के वाहर तालाव के किनारे कालिदास वेठा था। सन्यासी के वेश म राजा वहा पहुच गया। कालिदास न पूछा—'महात्मन् ! कहा से आ रह ह?' सन्यासी वोला—'धारा नगरी से।' कालिदास क स्मृति पटल पर राजा भोज ओर धारा की अनक स्मृतिया उभर आइ। उसने उत्सुक होकर पूछा—'महाराज ठीक हे न?' सन्यासी कालिदास को पहचान रहा था। वह व्यथित हाकर वोला—'महाराजा के सम्वन्ध म कुछ मत पूछो। कहने की वात नही हे।'

कालिदास आतुरता के साथ वाला—'हुआ क्या?' सन्यासी वाला—'महाप्रतापी महाराज भाज को क्रूर काल न उठा लिया। इसी कारण म धारा छाड़कर आया हू।'

कालिदास न भाज की मृत्यु का सवाद सुना और उनका कविहृदय मुखर हा उठा—

अद्य धारा निराधारा, निरालम्बा सरस्वती।
पडिता खडिता सर्वे, भाजराज दिवगत॥

राजा भाज के दिवगत हा जान से नगरी धारा निराधार हो गइ। सरस्वती का सहारा छूट गया और विद्वान टूट गए।

सन्यासी क वश म राजा भाज यह बात सुनकर मुस्करा उठा। उसकी मुस्कान देखते ही कालिदास का भान हा गया कि वह ठगा गया। उसन तत्काल उक्त श्लोक को बदलकर कहा—

अद्य धारा सदाधारा, सदालम्बा सरस्वती।
पडिता मडिता सर्वे, भोजराज भुवगते॥

बिछुडे हुए दा मित्र मिल गए। भोज राजा कालिदास का साथ लेकर धारा लौट गए।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य म महाकवि कालिदास का उक्त पद्य मुझ याद आ रहा ह। म राजा भोज के स्थान पर सयम को प्रतिष्ठित कर कहना चाहता हू कि सयम का आधार छूटने स पूरी मानव जाति निराधार हो गइ है। मानवीय मूल्यो का सहारा छूट गया ह आर नीतिनिष्ठ लोगा का कोइ सगठन नही रहा है। यदि मानवता को बचाना है मानवीय मूल्यो का प्रतिष्ठा देनी है ओर सही अर्थ म मानव का निर्माण करना ह तो सयम को पुनरुज्जीवन देना होगा। अणुव्रत का सारा प्रयत्न इसी दिशा म ह। मरा यह निश्चित विश्वास है कि मानवता का सरक्षण देने वाला काइ तत्त्व ह तो वह सयम है।

२२. सूरज पर धूल फेंकने से क्या?

महात्मा गांधी भारत के ऐसे व्यक्तित्व हुए हैं, जिनके प्रति प्राय: सभी भारतवासी हार्दिक श्रद्धा से प्रणत हैं। वे कोई गृहत्यागी संत नहीं थे, पर भारतीय संत परम्परा में उनके त्यागमय चरित्र की चमक देखी जा सकती है। इसी कारण कवीन्द्र रवीन्द्र ने उनको महात्मा कहकर सम्बोधित किया। उनकी तपस्या की कीर्तिगाथाएं दिगन्त में अनुगुंजित हैं। वे भारतीय जनता के ही नहीं, विश्व-मानव के श्रद्धेय रहे हैं। लोकमंगल की प्रेरणा से प्रेरित उनके मानस में जातिवाद, रंगवाद, सम्प्रदायवाद जैसा कोई विभाजन नहीं था। वे अस्पृश्यता के घोर विरोधी थे। समाज से सर्वथा अलग-थलग, दलित और अछूत कहलाने वाले लोगों को सवर्णों के साथ जोड़ने के लिए उन्होंने जो प्रयत्न किया, काल की परतें उसे कभी आवृत नहीं कर सकतीं। मानवीय धरातल को उन्नत बनाने के लिए उन्होंने विश्व-बंधुत्व का सपना देखा। जाति आदि को लेकर मनुष्यों के बीच बढ़ती हुई दरार को पाटने के लिए उन्होंने कठिन संघर्ष का रास्ता अपनाया। इसी कारण वे महापुरुष, युगनायक और महान् द्रष्टा के रूप में अपनी पहचान छोड़ गए।

महात्मा गांधी प्रयोगवादी व्यक्ति थे। उन्होंने अपने व्यक्तिगत जीवन में प्रयोग किए। समाज और देश के लिए प्रयोग किए। दलित वर्ग के लिए 'हरिजन' शब्द का व्यवहार भी उनका एक प्रयोग था। वर्तमान युग की सबसे बड़ी विडम्बना यह है कि हर व्यक्ति, हर सिद्धान्त और हर क्रिया-कलाप को राजनीति के रंग से रंगा जाता है। यह आवश्यक नहीं है कि किसी व्यक्ति के विचारों और प्रयोगों के साथ सबकी सहमति हो। हर व्यक्ति को सोचने की स्वतंत्रता है, पर इसका मतलब यह तो नहीं है कि किसी का चिन्तन हमारे चिन्तन से मेल न खाए तो उस पर कीचड़ उछाला जाय। अपनी

असहमति को शिष्ट भाषा में अभिव्यक्ति दी जा सकती है, पर गाली-गलोज पर उतर जाने का औचित्य क्या है?

किसी को सूरज के प्रकाश से ही घृणा हो तो वह अपनी आख बद कर सकता है, किन्तु उस पर धूल फेंकने का परिणाम क्या होगा? इसी प्रकार किसी महापुरुष का कोइ काम किसी को पसद न आए तो वह उससे बडा काम करके दिखा दे। यदि बडी लकीर खीचने की क्षमता न हो तो छोटी लकीर को मिटाने से क्या लाभ होगा?

किसी पक्ष-प्रतिपक्ष मे जाना हमे अभीष्ट नहीं है। किसी राजनीतिक दल विशेष से हमारा कोइ सबध भी नही है। यदि तटस्थ दृष्टि से देखा जाए तो कहना होगा कि महात्मा गाधी जैसे विरल व्यक्तित्व को लेकर इस प्रकार की छीछालेदर चिन्तन की दरिद्रता है। समझ मे नही आता कि उनका अपराध क्या था? जिस युग म लोक-मगल की भावना से किए गए काय का प्रतिवाद गाली-गलोज की भाषा म होता है, उस युग की बलिहारी है। मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि यह दुषमा काल की दुष्टता ही है जो किसी व्यक्ति को विवेक शून्य आचरण करने के लिए प्रेरित करता है। कोइ कुछ भी करे, सूरज को हथेलिया से ढका नही जा सकता। गाधी के कर्तृत्व को कभी तिरोहित नही किया जा सकता।

२३. आस्था और विश्वास के प्रतीक

शब्दकोशों म पृथ्वी के पर्यायवाची शब्दो मे रत्नगभा वसुन्धरा आदि नाम हे। इन शब्दो पर विचार करते समय कभी-कभी मन म आता कि जिस रूप मे धरती का दोहन हो रहा ह, रत्ना का अनुपात वहुत कम हो गया हे। इस स्थिति मे उक्त नामो की कोइ सार्थकता ह क्या? नररत्ना की खोज की जाए ता उनका अस्तित्व ओर भी कम हे। क्या यह कोशकारा की अतिशयोक्ति नहीं हे, जा ऐसे शब्दा को प्रचलित किया?

इस पश्न पर गभीर चिन्तन का निष्कप यह निकला कि रत्नो ओर ककरा का अनुपात वरावर केसे होगा? यदि इनका अनुपात बराबर निकल आए ता रत्नो का मूल्य ही क्या होगा? धरती रत्नगभा हे, यह बात निर्विवाद ह। इस धरती पर आभूपणो म जडे जाने वाले रत्न ही नही, नररत्न भी मिलते ह। मारारजी रणछोडदास भाई देसाई एक विशिष्ट नररत्न थे, जो अभी-अभी अपनी जीवनयात्रा सम्पन्न कर चले गए।

भारतीय इतिहास की बीसवी शताब्दी म गाधी युग का प्रारम्भ नए उच्छ्वास क साथ हुआ। गाधीजी के दशन न भारतीय लोकमानस को प्रभावित किया। उस समय की विशिष्ट प्रतिभाआ ने गाधीजी का अनुगमन किया। गाधीजी के एक आह्वान पर वे अपना सर्वस्व न्योछावर करने के लिए कटिबद्ध रहे। उनका दृष्टिकोण वदला, कार्य-शेली वदली और सब कुछ वदल गया। पर उन व्यक्तियो मे स अब कितने व्यक्ति अस्तित्व मे हे? अनेक दीखत व्यक्ति अस्ताचल की ओट मे हो गए। मोरारजी भाई को गाधी युग का अवशेप माना जाता था, पर आज तो वे भी नाम-शेष हा गए। उनके साथ जुडी हुई स्मृतियो का रग एक वार फिर हरा हो गया, जब उनके स्वर्गारोहण का सवाद सुना।

असहमति का शिष्ट भाषा म अभिव्यक्ति दी जा
पर उतर जाने का औचित्य क्या हे?

किसी को सूरज क प्रकाश से ही घृणा हो ता सकता हे, किन्तु उस पर धूल फकने का परिणा किसी महापुरुप का कोइ काम किसी को पसद न काम करके दिखा द। यदि वडी लकीर खीचने व लकीर का मिटाने से क्या लाभ होगा?

किसी पक्ष-प्रतिपक्ष मे जाना हम अभीष्ट न दल विशेष से हमारा कोइ सबध भी नही हे। यदि न तो कहना होगा कि महात्मा गाधी जैसे विरल व्यक्ति की छीछालेदर चिन्तन की दरिद्रता ह। समझ मे नही क्या था? जिस युग मे लोक-मगल की भावना से कि गाली-गलोज की भाषा म होता हे, उस युग की व प्रतीत होता हे कि यह दुपमा काल की दुष्टता ही ह विवेक शून्य आचरण करने के लिए प्रेरित करता सूरज को हथेलिया से ढका नही जा सकता। गाध तिरोहित नही किया जा सकता।

२४ आईने की टूट और घर की फूट

राजनीतिक, सामाजिक, धामिक या पारिवारिक कोई भी सगठन टूटता हे तो उसका असर पूरे देश पर ही नही, पूरे विश्व पर होता हे। स्थूल दृष्टि से दखने पर यह बात समझ मे आने वाली नही हे। पर इकोलॉजी को समझने वाले जानत ह कि घटना कही भी हो, उसके प्रकम्पन सब जगह पहुच जाते हे। जो सगठन देश मे अपना व्यापक प्रभाव रखता हो, उसम कही दरार भी पडती हे ता अच्छी उथल-पुथल मच जाती हे। भारतीय राजनीति के आकाश म सभवत किसी ऐसे ही कुग्रह का उदय हुआ हे, जो राजनीतिक दलो को आक्षेप-प्रक्षेप ओर टूटन के कगार पर ले जा रहा हे।

मे एक मानव हू। इससे भी आग कुछ कहू तो धम का आदमी हू। किसी भी राजनीतिक पार्टी के साथ मेरा अपनापा नही ह। पर किसी पार्टी मे तूफान आता हे तो मे प्रभावित होता हू। तूफान की गति तीव्र होती हे तो कभी कभी मे विचलित भी होता हू। विचलित होने का अर्थ यह नही हे कि मे किसी पक्ष-प्रतिपक्ष से वध जाता हू। विचलन का अर्थ इतना-सा ह कि म उस समय सर्वथा निरपेक्ष न रहकर स्थिति को सामान्य बनाने के लिए उसमे हस्तक्षेप कर बेठता हू। राजनीति के शिखर-पुरुप या सबद्ध व्यक्ति उस किस रूप म लेते हे, म नही जानता। राष्ट्रीय चरित्र की छवि साफ-सुथरी रहे, एकमात्र इसी प्रेरणा से म अपना चिन्तन देता हू।

विगत कुछ अर्से से देश मे सबसे पुरानी पार्टी काग्रेस अन्तर्-कलह की शिकार हो रही हे। यह स्थिति प्रथम बार ही निर्मित नही हुई हे। इस पार्टी के कुछ वरिष्ठ नेता किन्ही कारणो से पार्टी से दूर हो गए या कर दिए गए। उनका गठवन्धन पार्टी के असन्तुप्ट लोगा क साथ हो गया, ऐसा कहा जाता हे। यह असतुष्ट शब्द भी समालोच्य हे। एक ही पार्टी मे रहने वाले

मोरारजी भाई का व्यक्तित्व कुछ विलक्षण अणुओं से घटित था। वे सिद्धान्तवादी, सक्रिय और सृजनचेता व्यक्ति थे। प्रवाह में बहना उन्हें कभी स्वीकार नहीं था। वे सत्यनिष्ठ और अहिंसावादी व्यक्ति थे। अहिंसा में उनकी अटूट आस्था थी। अहिंसानिष्ठ होने के कारण ही वे अभय थे। किसी भी परिस्थिति में उनकी चेतना भय के प्रकम्पनों से प्रभावित नहीं हुई। वे सुनते सबकी, पर करते अपनी अंतरात्मा की। उन्हें जो बात ठीक लगती, उसे वे करके ही रहते। इतनी वैचारिक दृढ़ता कम व्यक्तियों में मिलती है।

उनके बारे में कहा जाता था कि सूरज पूर्व दिशा को छोड़ पश्चिम दिशा में भले ही उग जाए, मोरारजी भाई को उनके निर्णय से विचलित नहीं किया जा सकता।

सत्य, अहिंसा, अभय आदि जीवन मूल्यों के प्रति समर्पित मोरारजी भाई अणुव्रत दर्शन के पृष्ठपोषक रहे, इसमें आश्चर्य जैसी कोई बात नहीं है। राजनीति के शिखर पुरुषों में अणुव्रत विचारधारा को महत्त्व देने वाले व्यक्तियों की गणना की जाए तो मोरारजी भाई का नाम प्रथम पंक्ति में स्थापित किया जा सकता है। पार्थिव शरीर के रूप में उनकी उपस्थिति भले ही न हो, उनकी सत्यनिष्ठा और सिद्धान्तवादिता का अहसास उन सबको होता रहेगा, जिनसे उनका आन्तरिक परिचय रहा है। वे आस्था और विश्वास के एक ऐसे प्रतीक थे, जो न होकर भी सदा रहेंगे।

२४ आईने की टूट और घर की फूट

राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक या पारिवारिक कोई भी सगठन टूटता ह तो उसका असर पूरे देश पर ही नही, पूरे विश्व पर होता ह। स्थूल दृष्टि से देखने पर यह बात समझ मे आने वाली नही हे। पर इकोलॉजी को समझने वाले जानने ह कि घटना कही भी हो, उसके प्रकम्पन सब जगह पहुच जाते हे। जो सगठन देश मे अपना व्यापक प्रभाव रखता हो, उसमे कही दरार भी पडती हे तो अच्छी उथल-पुथल मच जाती हे। भारतीय राजनीति के आकाश मे सभवत किसी ऐसे ही कुग्रह का उदय हुआ हे, जो राजनीतिक दलो को आक्षेप प्रक्षेप आर टूटन के कगार पर ले जा रहा हे।

म एक मानव हू। इससे भी आगे कुछ कहू तो धर्म का आदमी हू। किसी भी राजनीतिक पार्टी के साथ मेरा अपनापा नही हे। पर किसी पार्टी म तूफान आता हे तो म प्रभावित होता हू। तूफान की गति तीव्र होती हे तो कभी-कभी मे विचलित भी होता हू। विचलित होने का अर्थ यह नही हे कि म किसी पक्ष-प्रतिपक्ष से बध जाता हू। विचलन का अर्थ इतना-सा हे कि म उस समय सर्वथा निरपेक्ष न रहकर स्थिति को सामान्य बनाने के लिए उसम हस्तक्षेप कर बेठता हू। राजनीति के शिखर-पुरुष या सबद्ध व्यक्ति उस किस रूप म लेते ह, मे नही जानता। राष्ट्रीय चरि‍त्र की छवि साफ-सुथरी रहे, एकमात्र इसी प्रेरणा से मे अपना चिन्तन देता हू।

विगत कुछ अर्से से देश मे सबसे पुरानी पार्टी काग्रेस अन्तर्-कलह की शिकार हो रही हे। यह स्थिति प्रथम बार ही निर्मित नही हुई हे। इस पार्टी के कुछ वरिष्ठ नेता किन्ही कारणो से पार्टी से दूर हो गए या कर दिए गए। उनका गठबन्धन पार्टी के असन्तुष्ट लोगो के साथ हो गया, ऐसा कहा जाता हे। यह असतुष्ट शब्द भी समालोच्य हे। एक ही पार्टी मे रहने वाले

अनेक लोगा मे विचारभेद हो सकता हे, पर उसे लेकर आपस म होन वाली खींचातानी से किसका हित होगा ? ऐसा प्रतीत होता है कि विग्रह म उलझन वाले लाग वेयक्तिक दृष्टि से अधिक सोचते ह ओर राष्ट्रीय परिदृश्य पर पदा डाल देते हे। अन्यथा एक ही सस्था के लाग मुद्दा की सस्कृति मे कस उलझते ?

काग्रेस पार्टी मे आज भी कुछ अच्छे व्यक्ति मिल सकते ह। पर वेचारिक आग्रह की स्थिति मे उनकी सुने कोन? इसी कारण कहीं प्रधानमत्री से इस्तीफा मागा जा रहा हे ओर कहीं एकता के मुद्दे पर सत्ता पाने की राजनीति का विरोध हो रहा हे। ससदीय शासन-प्रणाली मे अलग-अलग राजनीतिक दल पक्ष ओर प्रतिपक्ष की भूमिका स काम करते हे। किन्तु एक ही पार्टी मे हो रहा फूट-फजीता 'घर मे हानि ओर लोगो म उपहास' वाली कहावत चरिताथ कर रहा हे। कोई भी सच्चा काग्रेसी इस घर की फूट को केस सहन कर सकता हे?

पिता की मृत्यु के बाद दो भाइयो ने जमीन, जायदाद ओर घर की सपत्ति का बटवारा किया। सारा काम प्रम से हो गया। घर में एक आदमकद आइना था। उसे लेकर दोनो भाई अड गए। एक आइना दोनो को केसे मिल सकता था। दानो के आग्रह इतन प्रवल थे कि टूटन के विन्दु तक पहुच गए। उसी समय उनके पिता का मित्र ओर पुराना मुनीम वहा आ गया। समझोते का दायित्व उसे सोपा गया। उसने आइना हाथा मे लिया, उसे ऊपर उठाया आर धम्म से गिरा दिया। दोनो भाई निर्वाक् हो गए। दा क्षण बाद वे बोले—'आपने यह क्या किया ? कीमती आईना टूट गया। पिता के मित्र ने कहा—'म आइने की टूट देख सकता हू, पर इस घर की फूट नही देख सकता।' काश काग्रस जना को भी ऐसा प्रतिबोध मिले।

२५ व्यक्ति और विश्व

आजकल कुछ व्यक्ति विश्वव्यवस्था, विश्वधम, विश्वहित, विश्वविकास आर वश्विक चितन की यात करते हैं। कुछ व्यक्ति पूरी तरह स आत्मकेन्द्रित होते ह। व विश्व क यार मे क्या अपन देश, समाज, गाव, पडोस या परिवार की दृष्टि से भी कुछ साचन या करने के लिए तेयार नहीं ह। मरा चितन यह है कि मनुष्य की दृष्टि अनकान्त प्रधान होनी चाहिए। विश्व और व्यक्ति क यार मे विचार किया जाय तो इन दोना को सापेक्ष मान कर ही सोचना जरूरी ह। व्यक्ति को भुलाकर विश्व का नहीं बनाया जा सकता और विश्व क विना व्यक्ति की अस्मिता का प्रतिष्ठित नही किया जा सकता। मकान क निमाण मे इटा का उपयोग होता ह, पर कवल इट क्या करगी? ईटो के साथ अन्य सामग्री की भी अपक्षा रहती हे। इसी प्रकार व्यष्टि और समष्टि दानो के समुचित विकास से ही सर्वागीण विकास सभव है।

व्यक्ति विश्व म सन्निहित हे। वह अकेला रह नहीं सकता, अकला जी नहीं सकता। एसी स्थिति मे चितन की यात्रा व्यक्ति से शुरू होकर विश्व तक पहुच यह सही क्रम है। भोजन से थाली भरी ह। पूरी थाली एक साथ नहीं खाइ जा सकती। व्यक्ति किनारे से चले तो पेट पूरा भर सकता ह। चाणक्य एक बुढिया क घर पहुचा। भूख लगी थी। बुढिया ने थाली भर कर खिचडी परोसी। चाणक्य ने वीच म हाथ डाला। हाथ जल गया। बुढिया ने चाणक्य को पहचाना नहीं था। उसन उसको साधारण राहगीर समझकर कहा—'तुम चाणक्य की तरह मूर्ख हा।' चाणक्य चोका। उसन पूछा—'मा ! चाणक्य ने क्या मूखता की? बुढिया बोली—'उसने आसपास के छोटे राज्यो को जीते बिना सीधा पाटलिपुत्र पर आक्रमण कर दिया, इसीलिए उसे पराजित होना पडा। तुम भी किनारे स थोड़ी थाडी खिचडी खाते तो तुम्हारा हाथ

नहीं जलता। सीधा बीच मे हाथ डालना बुद्धिमत्ता है क्या?

विश्व धर्म की कल्पना भी गलत नहीं है, पर उसके स्वरूप को ठीक तरह से समझना होगा। धर्म के दो रूप है—उपासना और आचरण। उपासना धर्म कभी विश्वधर्म नहीं बन सकता। आस्था और रुचि के भेद से उपासना के अनेक भेद हो सकते हैं। आचरण की बात पर सबकी सहमति सभव हो सकती है। जीवन-निर्माण या चरित्र-निर्माण की कुछ ऐसी बातें है जो पूरे विश्व पर एक रूप में लागू हो सकती हैं। उनका सकलन कर उन्हें निर्विशेषण धर्म के रूप मे प्रस्तुत किया जाए तो विश्वधर्म का स्वरूप उजागर हो सकता है। उस धर्म को कोई विशेषण देना ही हो तो मानवधर्म—यह विशेषण दिया जा सकता है। मैत्री एक आचरण है, सयम एक आचरण है अहिसा एक आचरण है। इनमे रुचि, आस्था, सस्कार या विचार का क्या भेद हो सकता है? इन तत्त्वो का सबध सब लोगों से है। कोई व्यक्ति धर्म को माने या नहीं, मैत्री आदि को अमान्य नहीं कर सकता। ऐसी स्थिति मे विश्वधर्म की कल्पना सहज ही साकार हो सकती है।

व्यक्ति और विश्व मे अन्तर क्या है? व्यक्ति धागा है और विश्व वस्त्र है। व्यक्ति मनका है और विश्व माला है। दोनों का योग होता है। फिर भी वस्त्र-निर्माण से पहले धागे के अस्तित्व और उसकी गुणवत्ता पर ध्यान देना होगा। विश्वधर्म की प्रकल्पना मे भी मूलत व्यक्ति को पकडना जरूरी है। व्यक्ति-व्यक्ति धार्मिक या आध्यात्मिक बनेगा तो अधर्म को टिकने के लिए जमीन नही मिलेगी। मेरे अभिमत से अणुव्रत के सिद्धान्त ऐसे है, जो विश्वधर्म के रूप में प्रतिष्ठित हो सकते है। अपनी लम्बी पदयात्राओ और व्यापक जनसपर्क मे मुझे एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं मिला, जिसने सिद्धान्तत अणुव्रत को अस्वीकार किया हो। इसलिए आज अपेक्षा इस बात की है कि व्यक्ति व्यक्ति को चरित्रनिष्ठ या धार्मिक बनाकर विश्वधर्म की पृष्ठभूमि को मजबूत बनाया जाए।

२६ अणुव्रत परिवार योजना

वनमान जीवन शैली ने सयुक्त परिवार की प्रथा को तोड़ा ह और एकल परिवारो की सस्कृति को जन्म दिया है। जव से गावों का शहरो की ओर पलायन शुरू हुआ हे, सम्वन्धों का धरातल खिसकता हुआ प्रतीत हो रहा है। पारिवारिक रिश्तों मे लिजलिजापन आता जा रहा ह। शिक्षा, व्यवमाय, आवास आदि की समस्याओ न भी वड परिवारा क आग प्रश्नचिह्न खडा कर दिया। एकल परिवारो मे सस्कार, सम्कृति ओर परम्पराओ की विरासत छिन्न भिन्न हा रही है। इस त्रासदी का अनुभव वहुत लोग कर रहे ह। किन्तु इसे समाप्त करन की पक्रिया हाथा से निकल गयी हे। इसी कारण भारतीय सस्कृति, सभ्यता और परिवेश का स्वरूप वदल गया हे।

वनमान युग का ढाचा उपभोक्ता मूल्या वाली सस्कृति के आधार पर टिका है। इस युग की जीवन शेली ने आवश्यकताओ पर आकाक्षाओ का लवादा डाल दिया ह। आवश्यकता आर आकाक्षा के वीच कोई भेदरेखा न होने से आम आदमी दिग्भ्रान्त वन रहा ह। उसके जीवन म सयम या व्रत की चेतना क्षीण से क्षीणतर हा रही हे। ऐसी स्थिति मे किसी ऐसे अभियान या अनुष्ठान की अपेक्षा हे, जा जन-जन के मन मे सोयी हुई व्रत-चतना को जगा सके। अणुव्रत आन्दोलन इस अपेक्षा की पूर्ति म महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

व्यक्ति सुधार समाज सुधार की वुनियाद हे, इस अवधारणा के आधार पर अणुव्रत ने एक-एक व्यक्ति की चतना को झकझोरा। अणुव्रत मिशन को लाक-व्यापी वनान के लिए देश भर मे पदयात्राए की गइ। लगभग चार दशको का समय। सकडो साधु-साध्वियो, समण समणियो और अणुव्रती

कायकताओ का पुरुषाथ। दश के हर कोने म अणुव्रत की गूज। विदशी वायुमण्डल म अणुव्रत क प्रकम्पना की सक्रियता। फिर भी अणुव्रती लोगा का ऐसा कोइ मच, सगठन या समूह नहीं बन पाया, जो एकसूत्र म बधा हुआ हो। अणुव्रत परिवार योजना इस रिक्तता को भरने का एक ऐसा उपक्रम ह, जो 'दीय स दीया जल' कहावत क अनुसार व्यक्ति स उभरी हुइ नतिक शक्ति को पूर परिवार म सप्रषित कर सकगा।

अणुव्रत परिवार कोइ आन्दोलन नहीं ह, घोषणापत्र नहीं ह और कोइ शो पीस भी नहीं ह। अणुव्रत परिवार की अपनी जीवन शली होगी। इस परिवार का एक सदस्य जो प्रबुद्ध हो, चिन्तनशील हो और विवेक सपन्न हो, सकल्पित होकर अणुव्रती बन। उसकी मनोवृत्ति म हिसा और आक्रमण को स्थान नहीं रहगा। वह तोडफोडमूलक प्रवृत्तियो म अपनी भागीदारी नहीं रखेगा। वह जाति, रग आदि क आधार पर किसी को छोटा-बडा नहीं मानगा। साप्रदायिक उत्तजना फलाने म उसका विश्वास नहीं होगा। वह अपनी व्यावसायिक प्रामाणिकता पर आच नहीं आने देगा। वह ब्रह्मचय की साधना के प्रयोग करेगा और सग्रह की सीमा का निधारण करगा। चुनाव सबधी अनतिक आचरण नहीं करेगा। सामाजिक कुरूढियो को प्रश्रय नहीं दगा। व्यसनमुक्त रहगा और पर्यावरण की समस्या के प्रति जागरूक रहेगा।

मानवीय मूल्यो की इस न्यूनतम आचार-सहिता का पालन करने वाला व्यक्ति अणुव्रती होता हे। इस आचार-सहिता म अपन परिवार को ढालने का सकल्प और पारिवारिक सदस्यो म कुछ व्रतो क प्रति आस्था जगाने वाला व्यक्ति अणुव्रत परिवार योजना का सदस्य बन सकता ह। अखिल भारतीय अणुव्रत समिति ने अणुव्रत परिवार योजना के फोल्डर तयार कर प्रसारित करने शुरू कर दिये ह। अणुव्रत के प्रति निष्ठाशील लोगो का दायित्व ह कि वे इस फोल्डर को पढे, योजना को समझ और उसकी क्रियान्विति म अपना सक्रिय योगदान कर।

'अणुव्रत परिवार' अणुव्रत क आदर्शो की दुहाइ नहीं दगे, उन्हे जीयग। इसलिए हजारो हजारो लोगो के आकडो को छोडकर चयनित परिवारो म इसका प्रयोग किया जाय। यदि हम एक हजार परिवारो को अणुव्रत

२७ काश ! दीवारे ढहे

हर व्यक्ति का अपना चरित्र होता है। व्यक्ति की भाति प्रत्येक समाज और राष्ट्र का भी अपना चरित्र होता है। आज की कठिनाइ यह है कि व्यक्ति अपने चरित्र के प्रति जागरूक नही है। जागरूकता से पहला तत्त्व है आस्था। जिस विषय मे व्यक्ति की आस्था ही न हो उसके बारे म जागरूकता कहा से आएगी? एक समय था, व्यक्ति अपने चरित्र को सर्वोपरि महत्त्व देता था। किसी के चरित्र पर अगुली उठाना मृत्यु से भी अधिक कष्टप्रद माना जाता था। इसलिए व्यक्ति किसी भी मूल्य पर अपनी चारित्रिक उज्ज्वलता को धूमिल नही होने देता था। वतमान की स्थिति विपरीत है। इस युग मे व्यक्ति की ऊचाई का मानक उसका चरित्र नही, अर्थबल और सत्तावल है। सत्ता पाने के लिए अनुचित तरीका से अथ का सग्रह और उपयोग होता रहता है। कोइ टी एन शेषन जेसा व्यक्ति अनुशासन, चरित्र या ईमानदारी की बात करता है तो उसके खिलाफ सामूहिक मोर्चा लेने की तैयारी की जाती है। क्या यही है भारत का राष्ट्रीय चरित्र?

अणुव्रत चरित्र निर्माण का आन्दोलन है। यह व्यक्ति, समाज और राष्ट्र—सबके चरित्र की चिन्ता करता है। इसका विश्वास है कि व्यक्ति के चरित्र से समाज का चरित्र बनता है और समाज का चरित्र राष्ट्रीय चरित्र के लिए आधार शिला का काम करता है। व्यक्ति और समाज के बिना राष्ट्र की अस्मिता क्या है? इस दृष्टि से राष्ट्रीय चरित्र को अलग रूप से व्याख्यायित करने की अपेक्षा नही है। पर व्यक्ति की बदली हुई आत्मकेन्द्रितता उसे समूह का हिस्सा नहीं बनने दे रही है। ऐसी स्थिति म उसके आधार पर राष्ट्रीय चरित्र का निमाण नही हो सकता। अणुव्रत का अपना दर्शन है और अपना कायक्रम है। इस बार की अणुव्रत यात्रा का मुख्य उद्देश्य राष्ट्रीय

चरित्र को गतिशील बनाना है। राष्ट्रीय चरित्र को धूमिल करने वाले अनेक मुद्दे हे। उनमे से प्रमुख पाच मुद्दो को सामने रखकर इस यात्रा का कार्यक्रम निर्धारित किया गया हे।

मनुष्य को बाटने की मनोवृत्ति राष्ट्रीय चरित्र की एक प्रमुख समस्या है। आर्थिक असन्तुलन, जातिवाद, सम्प्रदायवाद, रगभेद की मानसिकता आदि ऐसी बाते हे, जो मनुष्य-मनुष्य क बीच खाइ चोडी कर रही ह। एक ओर बहुमंजिली अट्टालिकाए, दूसरी ओर झुग्गी-झापडिया। एक ओर शिखर पर आरोहण कर रही विलासिता, दूसरी ओर भिखारीपन। दूरी कम केसे होगी? जातिवाद के नाग फन फेलाये खडे हे। धम को सम्प्रदायवाद के घेरे म बदी बना दिया गया ह। परस्पर घृणा ओर नफरत की भावना फेलती जा रही हे। साम्प्रदायिक उन्माद किसी बम विस्फोट से कम भयावह नही होता। रगभेद की नीति ने दक्षिण अफ्रीका के नवनिर्वाचित राष्ट्रपति नेल्सन मडेला को सत्ताईस वर्षो तक जेल में रहने के लिए विवश कर दिया। यह सब क्या हे? क्या मानवीय दृष्टि से इनमे से किसी को भी काइ मूल्य दिया जा सकता हे? इन्हे मूल्य देने की बात पर सिद्धान्तत कोई सहमत हो या नहीं, पर इनके कसते हुए शिकजे का ढीला करने के लिए प्रयत्न करने वाले व्यक्ति कितने हे?

अणुव्रत की आस्था भाईचारे की भावना म हे। वह राष्ट्र, प्रान्त, भाषा, धर्म, जाति, रग, लिग आदि के कारण आदमी को तोडता नही। वह विभिन्नता मे एकता की बात करता हे। वह कहता हे कि यदि मनुष्य शेष मनुष्यो को अपना भाई माने तो वह अपनी आर से किसी को कष्ट नही दे सकता। कष्ट देना तो बहुत आगे की बात हे, वह किसी का कष्ट देख भी नही सकता। किसी की हत्या नहीं कर सकता। जाति के आधार पर किसी को ऊचा या नीचा नही मान सकता। किसी को अछूत नही मान सकता। सम्प्रदायवाद का विष नही फेला सकता।

अणुव्रत भाईचारे की बुनियाद पर खडा हे। वह विश्व मानव को भ्रातृभाव ओर साम्पदायिक सोहाद की सीख दे रहा हे। काश! दीवारे ढहे। खाइया पटे। भ्रातिया मिटे। महत्त्वाकाक्षाए रुके ओर भाई-भाई गले मिलकर मानव मात्र को भाईचारे का सबक सिखाए।

२८ भाईचारे की मिशाल

६ दिसंबर १९९२ को अयोध्या मे विवादास्पद ढाचे को कुछ लागा ने ध्वस्त कर दिया। इस घटना ने मन्दिर-मस्जिद मसले का लकर लगी वचारिक आग मे आहुति का काम किया। आग फले नही, यह लक्ष्य सबके सामने था। लोगो ने सयम से काम लिया। मानसिक विद्रोह के बावजूद स्थिति नियत्रण मे रही। सरकार के सामने बहुत जटिल स्थिति थी। राष्ट्रपति ने संविधान के अनुच्छेद १४३(१) के तहत मामला उच्चतम न्यायालय को भजा था। मामला बेहद सवेदनशील था। उस पर कोइ कदम उठाने से पहल सरकार ने न्यायालय से राय लेना उचित समझा। न्यायालय म मामला पहुचने के बाद विवाद से सम्बन्धित दोनो पक्ष और सरकार उक्त सन्दर्भ म किसी निणय पर पहुचने की स्थिति मे नही थी। बसब्री से न्यायालय के निर्णय की प्रतीक्षा की जा रही थी। आखिर २५ अक्टूबर १९९४ को मुख्य न्यायाधीश न्यायमूति एम एन वेकटचलेया ने न्यायालय का फेसला सुना दिया। उससे सरकार की परेशानी कम नही हुई। क्योकि उच्चतम न्यायालय से जिस विषय म राय मागी गइ थी, उसने राय देने से ही इन्कार कर दिया। बात घूम-फिरकर पुन सरकार पर आ गइ।

सरकार प्रस्तुत विवाद के सन्दर्भ म क्या करेगी, यह हमारी रुचि का विषय नही ह। यह विषय पूर देश के लिए सिरदर्द बना हुआ हे। यह सिरदर्द केस दूर हो हमारी रुचि इस बात मे हे। इतन बडे राष्ट्र म इतनी छोटी छोटी बात इस प्रकार सिरदर्द बन जाए, यह शोभनीय स्थिति नहीं हे। हमारा चिन्तन यह हे कि एसी समस्या न कानून स सुलझ सकती हे, न कोट से सुलझ सकती ह और न सरकार स सुलझ सकती ह। इसके लिए आवश्यक ह

अनेकान्त दृष्टि का उपयोग।

कोइ भी विषय विवादास्पद बनता है तो उसम पक्ष आर प्रतिपक्ष खड हा जान ह। बिजली पदा करन के लिए पाजिटिव आर नगेटिव—दोना प्रकार के तार आवश्यक होत ह। विवाद का खडा रखने क लिए भी पक्ष ओर प्रतिपक्ष की जरूरत रहती है। किसी भी विवाद का हिसात्मक मोड देना बुद्धिमानी की बात नही ह। मनुष्य का विवक आर बुद्धिमत्ता इसम ह कि एसे प्रसगा पर सामजस्य बिठान का प्रयत्न हा। भगवान् महावीर ने इस प्रकार की समस्याआ का समाहित करने म अनकान्त का उपयाग किया था। इसम जय पराजय की भावना नही रहती। किसी का ऊचा या नीचा दिखाने का लक्ष्य नही रहता। किसी का सम्मानित या अपमानित करन की स्थिति नहीं आती। दृष्टिकोण स्पष्ट हा, दिशा सही हा आर समस्या का समाधान करने की तडप हो ता अनकान्त स बढकर काइ माग हा ही नही सकता।

हिन्दू आर मुस्लिम दो काम ह। इनको आमन सामन खडे हान की अपेक्षा ही क्या हा? दश म आर भी ना अनक काम ह। प्रत्येक काम को रहने का अधिकार ह। सब कामा क लागा म सामजस्य आर सहअस्तित्व की भावना हो ता कामी झगडा को जमीन ही नहीं मिलेगी। सामजस्य तभी हो सकता ह जब एक-दूसरे की भावना का आदर हा, एक-दूसर की परम्पराआ का आदर हो ओर उपासना क केन्द्रो का सघप क केन्द्र न बनाया जाए। हिन्दू आर मुस्लिम एक ही धरती पर जनम ओर पल पुसे ह। वे भाइ-भाइ की तरह रहत आए ह।

हदराबाद से २७५ किलामीटर दूर गुलबगा जिल के टिनटिनी गाव म उन्होने भाइचारे की अद्भुत मिशाल कायम की ह। वहा वे एक ही सन्त का एक ही पूजास्थल पर पूजते आए ह। हिन्दू लाग उस सन्त की पहचान मानेश्वर बाबा के नाम से करत ह आर मुसलमान उस मोनापेय्या कहकर पुकारत ह। कहा जाता हे कि सन्त मूलत हिन्दू थ। बाद म वे सूफी मत की ओर आकृष्ट हो गए। इस कारण दाना कामा क लोग उनके प्रति पूज्यभाव रखने लग। क्या अयोध्या म एक ही प्रतीक को हिन्दू आर मुसलमान दोनो मान्यता नहीं दे सकते?

हिन्दू लोग महावीर को मानते ह। हमारे मुस्लिम भाइयो म भी अनेक

२८ भाईचारे की मिशाल

६ दिसबर १९९२ को अयोध्या मे विवादास्पद ढाचे को कुछ लागा ने ध्वस्त कर दिया। इस घटना ने मन्दिर-मस्जिद मसले को लकर लगी वैचारिक आग म आहुति का काम किया। आग फैले नही, यह लक्ष्य सवके सामने था। लोगो ने सयम स काम लिया। मानसिक विद्रोह के वावजूद स्थिति नियत्रण मे रही। सरकार के सामने वहुत जटिल स्थिति थी। राष्ट्रपति ने संविधान के अनुच्छेद १४३(१) के तहत मामला उच्चतम न्यायालय का भजा था। मामला वहद सवेदनशील था। उस पर कोइ कदम उठाने से पहल सरकार ने न्यायालय स राय लेना उचित समझा। न्यायालय मे मामला पहुचने के बाद विवाद से सम्वन्धित दाना पक्ष ओर सरकार उक्त सन्दर्भ म किसी निणय पर पहुचने की स्थिति म नही थी। वसब्री से न्यायालय के निणय की प्रतीक्षा की जा रही थी। आखिर २५ अक्तूवर १९९४ को मुख्य न्यायाधीश न्यायमूर्ति एम एन वेकटचलेया ने न्यायालय का फेसला सुना दिया। उससे सरकार की परेशानी कम नही हुई। क्याकि उच्चतम न्यायालय से जिस विपय म राय मागी गइ थी, उसने राय देने से ही इन्कार कर दिया। वात घूम-फिरकर पुन सरकार पर आ गई।

सरकार प्रस्तुत विवाद के सन्दर्भ म क्या करेगी, यह हमारी रुचि का विपय नही हे। यह विपय पूर देश के लिए सिरदर्द बना हुआ ह। यह सिरदर्द कसे दूर हो, हमारी रुचि इस वात मे हे। इतने वडे राष्ट्र मे इतनी छोटी-छोटी वात इस प्रकार सिरदर्द बन जाए, यह शाभनीय स्थिति नही हे। हमारा चिन्तन यह ह कि ऐसी समस्या न कानून स सुलझ सकती हे, न कोर्ट से सुलझ सकती ह आर न सरकार से सुलझ सकती ह। इसके लिए आवश्यक हे

२६ तीन चीजे बाजार मे नही मिलती

केन्द्रीय याजना मन्त्री श्री गोमाग 'अध्यात्म साधना-कन्द्र' म आए। वहा के वातावरण न उनको प्रभावित किया। वार्तालाप के प्रसग म उन्होने कहा—'बाजार म सब चीजे मिल जाती हे, पर तीन चीजे नही मिलती।' यह बात सुन सामान्यत पहली प्रतिक्रिया यही होती हे कि विश्व की मुक्त बाजार व्यवस्था ओर आयात-नियात के सुविधाजनक साधनो न ससार का छाटा कर दिया। प्राचीन काल मे कुत्रिकापण की व्यवस्था थी। वहा स्वगलोक, मत्यलोक और पाताललोक की सब वस्तुए उपलब्ध रहती थी। वर्तमान मे सचार-साधन इतने तीव्रगामी हो गए कि विश्व के किसी कोने स कोई भी चीज कही पहुच सकती हे। एसी स्थिति म श्री गामाग का कथन विमश मागता ह। उनके कथन का क्या अभिप्राय हे? इस जिज्ञासा को समाहित करते हुए उन्हाने कहा—सेल्फ कान्फिडस—आत्मविश्वास, करेज—साहस ओर करक्टर—चरित्र य वस्तुए किसी बाजार म नही मिलती। किन्तु इस अध्यात्म-साधना केन्द्र म मिल सकती ह।

छतरपुर रोड, महरोली मे स्थित अध्यात्म साधना केन्द्र इन दिना अणुव्रत, प्रक्षाध्यान और जीवन-विज्ञान—इस त्रिमूर्ति की चर्चा का प्रमुख केन्द्र बन रहा ह। अणुव्रत मानवीय आचार-सहिता ह। मनुष्य को कसा होना चाहिए? इसका एक समग्र मॉडल हे अणुव्रत। अच्छा मनुष्य बना जा सकता हे, अच्छा जीवन जिया जा सकता हे, यह आत्मविश्वास जगाने वाली एक मूर्ति हे अणुव्रत।

मनुष्य मे आत्मविश्वास हो, पर साहस न हा तो वह प्रतिस्रोत मे नही चल सकता। आज जिस गति स नेतिक मूल्या का क्षरण हा रहा ह, मूल्या की प्रतिष्ठा के लिए प्रयास करना बहुत बडे साहस की बात हे। प्रेक्षाध्यान

व्यक्ति उदार दृष्टिकोण वाले हैं। वे महावीर की अनेकान्त दृष्टि का स्वीकार कर ले तो संघर्ष की जड़ कट सकती है। तोड़फोड़ का जहां तक प्रश्न है, वह न तो महावीर की दृष्टि में मान्य रही है और न मानवतावादी दृष्टि से भी मान्य हो सकती है। हिन्दू लोग तोड़फोड़ को गलत मानें और मुसलमान हिन्दू कौम को बड़े भाई के स्थान पर स्वीकार कर संघर्ष के मार्ग से हट जाएं तो हिन्दू और मुसलमानों के बीच पनप रहा विरोधाभास समाप्त हो सकता है, ऐसा विश्वास है।

२६ तीन चीजे बाजार मे नहीं मिलती

केन्द्रीय योजना मत्री श्री गोमाग 'अध्यात्म-साधना-केन्द्र' मे आए। वहा के वातावरण ने उनको प्रभावित किया। वार्तालाप के प्रसग मे उन्होने कहा—'बाजार म सब चीज मिल जाती हे, पर तीन चीजे नही मिलती।' यह बात सुन सामान्यत पहली प्रतिक्रिया यही होती हे कि विश्व की मुक्त बाजार व्यवस्था ओर आयात-निर्यात के सुविधाजनक साधनो ने ससार को छोटा कर दिया। प्राचीन काल मे कुत्रिकापण की व्यवस्था थी। वहा स्वर्गलोक, मर्त्यलोक और पाताललोक की सब वस्तुए उपलब्ध रहती थीं। वर्तमान मे सचार-साधन इतने तीव्रगामी हो गए कि विश्व के किसी कोने से कोई भी चीज कही पहुच सकती हे। ऐसी स्थिति मे श्री गोमाग का कथन विमर्श मागता हे। उनके कथन का क्या अभिप्राय हे? इस जिज्ञासा को समाहित करते हुए उन्हाने कहा—सेल्फ कान्फिडस—आत्मविश्वास, करेज—साहस ओर करक्टर—चरित्र य वस्तुए किसी बाजार म नही मिलती। किन्तु इस अध्यात्म-साधना केन्द्र मे मिल सकती हे।

छतरपुर रोड, महरोली म स्थित अध्यात्म साधना केन्द्र इन दिनो अणुव्रत, प्रेक्षाध्यान और जीवन-विज्ञान—इस त्रिमूर्ति की चर्चा का प्रमुख केन्द्र बन रहा है। अणुव्रत मानवीय आचार-सहिता ह। मनुष्य को केसा होना चाहिए? इसका एक समग्र मॉडल हे अणुव्रत। अच्छा मनुष्य बना जा सकता हे, अच्छा जीवन जिया जा सकता हे, यह आत्मविश्वास जगाने वाली एक मूर्ति हे अणुव्रत।

मनुष्य मे आत्मविश्वास हो, पर साहस न हो तो वह प्रतिस्रोत मे नही चल सकता। आज जिस गति स नेतिक मूल्यो का क्षरण हो रहा हे, मूल्यो की प्रतिष्ठा क लिए प्रयास करना बहुत बड साहस की बात हे। प्रेक्षाध्यान

के अभ्यास स व्यक्ति का खोया हुआ साहस जाग उठता हे। इसलिए अणुव्रत का प्रशिक्षण पाने के वाद ध्यान शिविर म वेटना आवश्यक हे। ध्यान स सकल्पशक्ति पुष्ट होती हे, स्वभाव म परिवतन आता ह ओर प्रतिकूल परिस्थितिया से जूझने का साहस वढता हे।

करेक्टर--चरित्र का सीधा सम्वन्ध शिक्षा के साथ ह। शिक्षा का प्रभाव व्यक्ति, समाज, राष्ट्र ओर विश्व--सवके चरित्र पर हाता ह। भारत एक वहुत वडा लोकतात्रिक राष्ट्र ह। राष्ट्र को स्वतत्र हुए आधी शताब्दी पूरी हाने वाली हे। इतनी लम्वी अवधि म भी राष्ट्र की शिक्षा नीति सर्वागीण नही वन पाइ हे। चरित्रहीनता की त्रासदी इस अपर्याप्त शिक्षानीति की देन हे। यदि शिक्षा मे चरित्र को सर्वोपरि स्थान उपलव्ध हाता तो भारतवर्ष विश्व का आध्यात्मिक गुरु होने का गौरव सुरक्षित रख पाता। शिक्षा के क्षेत्र म एक नया आयाम ह जीवन विज्ञान जो चरित्र-निर्माण की नइ सभावनाओ का प्रतीक ह।

सेल्फकान्फिडेंस, करेज ओर करेक्टर पाने क लिए सव लोगो को अध्यात्म-साधना-केन्द्र म आना ही होगा, ऐसी कोइ प्रतिवद्धता नही ह। जहा कही अणुव्रत, प्रक्षाध्यान आर जीवन-विज्ञान का प्रशिक्षण मिलगा, वहीं अध्यात्म साधना केन्द्र निमित्त हो जायगा। सूरज को उदित हान क लिए पूर्व दिशा खोजने की अपक्षा नही रहती। वह जिस दिशा मे उदित हाता हे, वही दिशा प्राची वन जाती ह--'उदयति दिशि यस्या भानुमान् सेव पूर्वा'।

३० चयन एक सहायक का

अमेरिका के राष्ट्रपति अब्राहम लिकन। राज्य काय का विस्तार हुआ। उन्हे अपने कार्य म सहयाग के लिए एक सहायक की अपेक्षा हुई। सहायक का चयन करने के लिए उन्होने विशप प्रक्रिया अपनाई। उन्हाने राजपुरुप के द्वारा घापणा कराकर उन व्यक्तियो को आमंत्रित किया, जो एक राष्ट्रपति का सहायक वनन की अहता रखत थ।

राष्ट्रपति ऊचे सिहासन पर आसीन थे। आमत्रित व्यक्ति एक-एक कर आ रहे थे। रास्ते म एक पुस्तक पडी थी। आने वाले व्यक्ति राष्ट्रपति की आर देख रहे थ। पुस्तक पर उनकी नजर नहीं थी। किसी का पाव पुस्तक पर टिक रहा था, किसी के पाव से उछली हुई धूल पुस्तक पर गिर रही थी ओर किसी के पादप्रहार से पुस्तक के पन्ने फट रहे थे। राष्ट्रपति उन सवकी गति पर नजर टिकाए वेठे थे। सभी प्रत्याशी उनका अभिवादन कर आग वढ गए। राष्ट्रपति ने किसी क साथ कोई वात नहीं की।

आमत्रित व्यक्तिया मे एक ऐसा व्यक्ति था, जा अवस्था से छोटा ओर अनुभवा से भी छोटा लगता था। उसने मार्ग म गिरी हुई पुस्तक देखी। वह एक क्षण रुका। उसने पुस्तक उठाइ, उसकी मिट्टी झाडी ओर उसे सहेज कर किनारे रखी हुइ स्टूल पर रख दिया। सधी हुइ गति से चलता हुआ राष्ट्रपति क सामने पहुचा। राष्ट्रपति का अभिवादन कर वह आगे वढने लगा। उसी समय राष्ट्रपति वोले—'*मेने अपने सहायक का चयन कर लिया।*' किसका चयन? कसे चयन? कव हुआ चयन? एक साथ अनक फुसफुसाहटे वायुमण्डल म थिरक उठी।

राष्ट्रपति अब्राहम लिकन ने गभीर मुद्रा मे कहा—'एक ऐसा व्यक्ति जिससे मे पूरा परिचित नही हू, उसे अपना सहायक घाेषित करता हू। उसके

पास उपाधिया नही ह, प्रमाणपत्र नहीं हे ओर वह कोइ बडा आदमी भी नहीं ह। फिर भी यह मेरी कसाटिया पर खरा उतरा ह। एक व्यक्ति, जा दखन म बहुत रोबदार दिखाइ द रहा था, कुछ आगे बढ कर बोला—'आपन हमारी इज्जत मिट्टी मे मिला दी। आपका एस छोकरे की जरूरत थी ता इतने बड लोगो का बुलाया क्या? क्या हमारी उपाधिया एव पदविया का कोइ मूल्य नही ह?' राष्ट्रपति न कहा—'महोदय! मुझ आपके प्रमाणपत्रा की जरूरत नही ह। आपकी योग्यता का सबस बडा या सीधा प्रमाणपत्र ह आपका व्यवहार। आपने एक पुस्तक को अपने पेरा तल केस रोद डाला? क्या यही ह आपकी दक्षता जा अधिकारी एक पुस्तक को सभाल कर नहीं रख सकता, वह मेर कागजात कसे सभाल पायगा?'

अणुव्रत कहता ह—कोइ व्यक्ति पूजा-पाठ करे या नही, दान पुण्य कर या नही धर्म का उपदेश करे या नही, पर अपना व्यवहार शुद्ध रख, नतिकता को आधार मानकर चल मानवता का सुरक्षित रख, वह सही अर्थ मे मानव कहलाने का अधिकारी ह। व्यक्ति का मूल्य सत्ता और सपदा के आधार पर नही, डिग्रिया और सर्टिफिकेटा पर नहीं उन्नत आचरण के आधार पर आका जाता ह। मनुष्य का चरित्र समाज ओर राष्ट्र के चरित्र का दर्पण होता हे। वह जितना निर्मल होगा समाज और राष्ट्र का प्रतिबिम्ब उतना ही साफ होगा। अणुव्रत की प्ररणा चरित्र-निर्माण की प्ररणा हे। चरित्र का दीया जलता रहगा ता अनतिकता के अन्धकार को विदा लनी ही हागी।

३१ समस्या सग्रह और असीम भोग की

भारत के स्वर्गीय युवा प्रधानमन्त्री राजीव गाधी ने इक्कीसवी शताब्दी मे प्रवेश की तैयारी पर अतिरिक्त वल दिया था। उनके युग मे इस विषय पर वहुत चर्चा हुइ। उनके जाने के वाद उस चचा के स्वर मन्द हा गए। वैसे हर विषय को कइ पहलुआ से देखा जाता हे। उस पर चिन्तन के कोण भी विविध ह। व्यक्ति हो, वस्तु हो या कोइ विषय, एक ही कोण से देखना ओर सोचना अधूरापन ह। भगवान् महावीर ने अनेकान्त दृष्टिकोण का प्रतिपादन कर सत्य तक पहुचने के अनन्त द्वार खोल दिए। प्रत्येक द्वार तक किसी की पहुच हो या नही, पर जव सामने अनेक द्वार हो तो किसी एक ही द्वार पर दस्तक देकर विराम क्या लिया जाए?

कुछ लोग आधुनिक विज्ञान ओर नइ तकनीक के साथ इक्कीसवी शताब्दी म प्रवेश करने के इच्छुक हे। अपना-अपना चिन्तन ओर अपनी-अपनी धारणाए। एक दृष्टि से मनुष्य को विज्ञान ओर टेक्नोलॉजी ने वहुत सुविधाए दी हे। मनुष्य की मनोवृत्ति सुविधाओ के साचे म ढलती जा रही हे। उसका जीवन यान्त्रिकता की ओर अग्रसर हो रहा हे। आवश्यकता ओर अनावश्यकता के वीच भदरेखा किए विना वह हर वेज्ञानिक सुविधा को स्वीकार करता जा रहा हे। उसके गुण-दोषा पर विमश करने का समय भी उसके पास नही हे। एसी स्थिति म वह आने वाली सदी म विकसित साइन्स ओर उन्नत टेक्नोलॉजी का सपना दख तो आश्चय जेसा कुछ भी नहीं हे।

साइन्स ओर टेक्नोलॉजी का विरोध हमारा लक्ष्य नही हे। इनका विरोध व करते हे, जो एकागी दृष्टि से सोचते हे। इनकी धज्जिया वे उडाते हे, जो नितान्त कट्टरपथी हे। इस सन्दर्भ मे अनेकान्त दृष्टि का उपयोग किया जाए तो विज्ञान के वशिष्ट्य का खुले मन से स्वीकार करने वाले भी इसके नेगेटिव

पक्ष को आखो से ओझल नही रख पाएगे। वैज्ञानिक उपलब्धियो का वढ चढकर गौरव गाने वाले वैज्ञानिक ही एक समय के बाद उनसे होने वाले दुष्प्रभावो के प्रति जनता को आगाह करते हैं। फ्रिज, टी वी, ए सी, डिब्बा- वद भोजन आदि सुविधाओ के जितने साधन है, उन सबके दुष्परिणामो पर वैज्ञानिक दृष्टिकोण मुखर हो रहा है। जो विज्ञान आज मनुष्य के लिए सुख-सुविधा का दावा करे, कल वही उसका प्रतिरोध करे, उस विज्ञान का विश्वास कैसे किया जा सकता है?

जिन वैज्ञानिक उपकरणो ने आदमी को अपगता की दिशा मे ढकेला है, जिनके कारण उसकी शक्तियाँ कुठित हुई हैं और अनेक अनपेक्षित चीजे मानव जीवन के साथ जुडी हैं। देखना यह है कि इसमे दोष किसका है? विज्ञान का अथवा उपभोक्ता का? विज्ञान कितने ही नए आविष्कार करे, उनके प्रयोग मे सयम रखा जाए तो स्थिति इतनी जटिल नही होती। आज जब कि वैज्ञानिक उपकरण प्रचुर मात्रा मे प्रयुक्त होने लगे है, वे छूट सके यह सभव प्रतीत नही होता। यदि उनका उपयोग है तो छोडने की बात समय मे भी नहीं आएगी। समझने का एक ही महत्त्वपूर्ण तत्त्व है, वह है अणुव्रत दर्शन। अणुव्रत दर्शन के अनुसार जीवन को ढालने का लक्ष्य हो तो असीम सग्रह और असीम भोग की समस्या को स्थायी समाधान मिल सकता है। यही एक मार्ग है, जो दो विपरीत दिशाओ मे सेतु बनकर मनुष्य को अपने गतव्य की ओर आगे बढाने मे पूरा-पूरा सहयोग देता है।

३२ लहर बदलने वाला झोका

अणुव्रत है लोकचेतना जगाने का आन्दोलन। नैतिक मूल्यों को प्रतिष्ठित करने के लिए प्रयत्नशील आन्दोलन। चारित्रिक स्तर को उन्नत करने वाला आन्दोलन। अणुव्रत एक ऐसा आन्दोलन, जो न राजनीति से प्रेरित है और न धार्मिक आस्थाओं के साथ इसका कोई अनुबन्ध है। न किसी प्रकार की उपासना का आग्रह और न किसी उपासना पद्धति से परहेज। अच्छा जीवन जीने का संकल्प स्वीकार करने के लिए अच्छाई का एक पैमाना। ऊंचा जीवन जीने की आकांक्षा रखने वाले व्यक्ति के लिए ऊंचाई का एक आदर्श।

देश की आजादी के साथ-साथ अणुव्रत आन्दोलन मुखर हुआ। देश के लाखों-करोड़ों कानों ने अणुव्रत का घोष सुना। हजारों हजारों व्यक्तियों ने अणुव्रत को सराहा। सैकड़ों-सैकड़ों लोगों ने अणुव्रत को अपनाया। सैकड़ों कार्यकर्ताओं ने अणुव्रत का दीया हाथ में लेकर युग के अंधेरों से लड़ने का बीड़ा उठाया। चार दशकों की यात्रा पूरी हो गई। पांचवें दशक में एक बार फिर अणुव्रत पर देश की निगाहें टिकी हैं। इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय एकीकरण पुरस्कार ने अणुव्रत को सुर्खियों में ला दिया। अणुव्रत में सक्रिय भागीदारी रखने वाले व्यक्तियों का दायित्व और अधिक बढ़ गया। यह भी एक संयोग है कि इस वर्ष हमने पूरे वर्ष के लिए प्रतिमास एक दिन अणुव्रत के नाम से रखा है। प्रत्येक महीने के शुक्ल पक्ष की द्वितीया का दिन 'अणुव्रत चेतना दिवस' के रूप में आयोजित करने का निर्णय लिया गया है। यह काम अणुव्रत को विशेष गति देने के उद्देश्य से किया गया है।

वैसे विगत अनेक वर्षों से देश भर में अणुव्रत का एक वार्षिक कार्यक्रम—अणुव्रत उद्बोधन सप्ताह होता रहा है। नेटवर्क के रूप में समायोजित इस कार्यक्रम से काफी ठोस परिणामों की अपेक्षा थी। किन्तु

उभा नहीं हो पाया। कारणों की मीमांसा की जाए तो एक लम्बी कारण-शृंखला उपस्थित की जा सकती है। पर उसमें कोई लाभ नहीं दीखता। जो नहीं हुआ, उसको लेकर बैठे रहने से तो कार्य की नई संभावनाओं के रास्ते बन्द हो जाते हैं। वर्ष में एक बार ही सही उद्घाटन सप्ताह के नाम से अणुव्रत पर चर्चा तो हुई। साधु साध्वियों को एक सार्वजनिक कार्यक्रम करने का अवसर तो मिला। यह भी क्या कम संतोष का विषय है कि अणुव्रत ने काम करने का एक व्यापक मंच तो दिया।

'अणुव्रत चेतना दिवस' प्रति माह अणुव्रत के स्वर को मुखर करने में निमित्त बन रहा है। यह दिन मनाने का उद्देश्य इतना ही नहीं है कि अणुव्रत के विषय में व्याख्यान हो जाए, अच्छे वक्ताओं को बोलने का अवसर दे दिया जाए और कुछ लोगों से अणुव्रत के फार्म भरवा कर उन्हें अणुव्रती बना लिया जाए। अणुव्रत के प्रतिज्ञापत्र भरना बहुत स्थूल बात है। मूल बात है अणुव्रत का दर्शन। दर्शन की गहराई में उतरकर उसे समझना सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बात है। अणुव्रत दर्शन को समझे बिना अणुव्रती बनना बिना बुनियाद मकान खड़ा करने के समान है। अणुव्रत क्या करना चाहता है? क्या कहना चाहता है और क्या देना चाहता है? इन सब प्रश्नों को चरित्र निर्माण के सन्दर्भ में समझना और समझाना है।

प्रश्न हो सकता है कि 'अणुव्रत चेतना दिवस' महीने में एक दिन का कार्यक्रम है। एक दिन से क्या होगा? मैं इस भाषा में नहीं सोचता। लहर बदलने के लिए हवा का एक झोंका ही काफी होता है। सैकड़ों स्थानों में एक दिन यह घोष— 'बदले युग की धारा अणुव्रतों के द्वारा'—मुखरित होगा, दिग्दिगन्त इसके निनाद से गूंज उठेंगे और मनुष्य के विचारों की लहरें बदलेंगी, यह मेरा निश्चित विश्वास है।

३३. विध्वस के चौराहे पर

सन् १६६३ का वप पूणता क विन्दु की ओर अग्रसर है। समय के भाल पर १६६४ का सूरज उदित होन वाला हे। देश के प्रवुद्ध लाग विगत वप की समीक्षा कर रहे हे। राजनीतिज्ञा का अपना नजरिया ह। समाजशास्त्री अपने ढग स साचत ह। अथशास्त्रिया का अपना दृष्टिकाण ह। वज्ञानिको की अपनी साच हे। गुरुआ की अपनी अवधारणा हे ओर आम आदमी के चिन्तन का अपना अलग आधार हे। इन सवके चिन्तन का आकलन कर निष्कप प्रस्तुत किए जा सकते ह। इस प्रस्तुति मे भी वहुत अन्तर रह सकता हे। पर वम्बई-कलकत्ता म हुए वम-विस्फाटा की वात सभवत कही भी नही छूट पाएगी।

प्रश्न दो-चार वार हुए विस्फोटा का नही, उस चेतना का हे जा व्यक्ति को विध्वस के रास्ते पर धकेलती है। प्रश्न वम्वइ, कलकत्ता, कश्मीर या असम का नहीं, उस मनोवृत्ति का ह जो आतक फलाती हे। प्रश्न किसी जाति, वग या देश का नही, उस युवापीढी का हे, जो गुमराह हो रही हे। इन या इन जसे ही अनेक प्रश्ना का समुचित समाधान नहीं खोजा गया तो वम विस्फाट जेसे हादसो की शृखला ओर अधिक लम्वी हो सकती ह।

जव कभी और जहा कहीं ऐसे हादसे होत ह, एक वार गहरी हलचल होती है। समाचार पत्र उनको सुखिया म पकाशित करते ह। सरकारी स्तर पर चिन्ता व्यक्त की जाती ह। कुछ व्यक्तियो या सगठनो द्वारा जाच की माग होती हे ओर वातवरण पूरी तरह से ऊष्मा स भर जाता हे। एक वार तो ऐसा प्रतीत होता हे, मानो पूरी शक्ति और तत्परता के साथ अवांछित घटनाओ क कारणो की खोज ओर उनके निवारण क उपाय काम म लिए जाएगे। किन्तु 'नई वात ना दिन' वाली कहावत क अनुसार उभरे स्वर मन्द

हो जाते हैं और घटना पर समय की परत चढ़ जाती है।

एक स्वतंत्र और लोकतंत्रीय आस्था वाले राष्ट्र में यह सब होता है, इसका मुख्य कारण है—प्रामाणिकता, कर्तव्यनिष्ठा और जागरूकता का अभाव। संस्कारों का स्रोत ऊपर से नीचे की ओर जाता है। राष्ट्र के उच्च स्तर या वर्ग के लोग अपने जीवन को उपर्युक्त तीन मूल्यों से संस्कारित कर सकें तो उनके अधीन काम करने वाले व्यक्तियों तक यह रोशनी अपने आप पहुंचेगी। अणुव्रत ऐसी रोशनी का अक्षयस्रोत है। नववर्ष प्रवेश के अवसर पर उस स्रोत को खोला गया, अणुव्रत दर्शन को जीवन के साथ जोड़ा गया तो आगामी वर्ष ध्वंस और आतंक की संस्कृति का बदल सकेगा, ऐसा विश्वास है।

३४ जरूरत है सही दृष्टिकोण की

जमाना बहुत बुरा हे। भ्रष्टाचार बढ रहा हे। धोखाधडी बढ रही हे। आतकवाद की समस्या हे। अलगाववाद की मनोवृत्ति विकसित हो रही हे। जातिवाद के कटीले केक्टस बढते जा रहे हे। सम्प्रदाय के नाम पर सघष छिड रहे हे। चुनाव मे अनेतिकता-ही-अनेतिकता हे। अपहरण, हत्या, बलात्कार और लूटमार की वारदाता ने आदमी का सुख-चेन छीन लिया हे। कही सुरक्षा नही हे। दिन-दहाड बेक लूटे जा रहे हे। कोइ निश्चिन्त नही ह। पता नही कल क्या होगा? इस प्रकार की दुश्चिन्ताए जिन्दगी को भार बना रही ह।

म बहुत बार सोचता हू कि ससार के सभी लाग उक्त निपेधात्मक भावो से भरे हो तब तो किसी का जीवन सुरक्षित नही रह सकता। देखा जाता है कि अवांछित वारदातो के बावजूद अरबो लोग जी रहे ह। क्योंकि गलत काम करने वालो की सख्या बहुत कम हे। यदि इन लोगो का अनुपात अधिक हो गया तो प्रलय की स्थिति पेदा हो जाएगी। अभी बहुत जल्दी किसी प्रलय की आशका नही हे। इसका अथ यह समझना चाहिए कि ससार म गलत तत्त्व कम ह ओर अच्छ आदमी अधिक हे।

प्रश्न हो सकता हे कि अच्छे आदमी अधिक ह तो वे दिखाई क्यो नही देते? देखने के लिए सही दृष्टि चाहिए। दृष्टि सम्यक् नही होती हे तो ज्ञान विपरीत हो जाता हे। एक सन्यासी गाव के बाहर झोपडी मे रहता था। एक व्यक्ति दूसरे गाव से आया ओर बोला—'बाबा! म अपना गाव छोडकर यहा रहने के लिए आया हू। यह गाव केसा ह?' सन्यासी ने पूछा—'तुम जिस गाव को छोडकर आए हो, वह केसा हे?' राहगीर बोला—'वह तो बहुत अच्छा हे।' सन्यासी ने कहा—'भाइ! यह गाव अच्छा हे। तुम यहा प्रसन्नता से रहो।'

कुछ समय गाना। वहां एक दूसरा व्यक्ति आया। वह भी सन्यासी से मिला। गांव की स्थिति के बारे में जानकारी पाने के लिए उसने प्रश्न किया— बाबा! इस गांव का नाम बहुत है। आप तो यहीं रहते हैं। कृपा कर बताएं गांव कैसा है? सन्यासी ने प्रतिप्रश्न किया—'भाई! तुम जिस गांव से यहां आए हो वह कैसा है?' राहगीर ने कहा—'बाबा! उस गांव का बात मत पूछो। वहां न कोई सुविधा है और न कोई व्यवस्था। गांव के लोग भी अच्छे नहीं हैं। इसीलिए तो मैं उसे छोड़कर यहां रहने आया हूं।' सन्यासी ने उस व्यक्ति का ध्यान से देखकर कहा—'भाई! यह गांव तो और भी गया बीता है। तुम लौट जाओ। यहां तुम्हारी इच्छा पूरी नहीं होगी।

सन्यासी के साथ उसका शिष्य रहता था। वह अपने गुरु की बात सुन देखता रह गया। गुरु ने पूछा— वत्स! क्या हुआ? ऐसे क्या देख रहे हो?' शिष्य बोला—'गुरुदेव! कुछ समय पहले एक आदमी आया था। उसे आपने कहा था कि गांव बहुत अच्छा है। तुम यहां प्रसन्नता से रहो। अब इस आदमी से आपने पूर्व कथन से एकदम विपरीत बात कही। मैं समझ नहीं पाया कि आपने ऐसा क्यों कहा?' सन्यासी ने अपने शिष्य की उलझन समाप्त करते हुए कहा—'वत्स! जैसी दृष्टि वैसी सृष्टि। उस आदमी का दृष्टिकोण विधायक था। वह कहीं भी जाएगा उसे सब अच्छा ही लगेगा। यह व्यक्ति निषेधात्मक भावों में जीता है। यह स्वर्ग में चला जाएगा तो भी इसे बुराई ही नजर आएगी।

मनुष्य के भावों में विधायकता और निषेधात्मकता दोनों हैं। यदि वह निषेधात्मक भावों से भरा रहेगा तो कभी सुख और शान्ति को उपलब्ध नहीं कर सकेगा। यदि उसका चिन्तन पाजिटिव हो जाए तो वह हर समय आनन्द की अनुभूति कर सकता है। इस संसार-पटल पर जो कुछ अवांछनीय है, उसे अनदेखा करने मात्र से समस्या का समाधान नहीं होगा। समस्या को सही नजरिए से देखकर समाधान की सही दिशा खोजने से पहले व्यक्ति को यह विश्वास तो हो कि वह एक अच्छे संसार में जी रहा है। अन्यथा जीने की इच्छा को ही जंग लगने की संभावना की जा सकती है।

३५ स्वस्थ जीवन का आश्वासन

प्रबुद्ध ओर सम्पन्न युवको का एक समूह। व आपस म मिलते हे। समाज विकास के सपन दखते ह। दश का उन्नति के शिखर पर ले जाने की योजनाए बनाते ह। किन्तु भीतर-ही-भीतर तनाव से भर हुए ह। टूटन का अनुभव कर रह ह। परिवार मे अनुशासनहीनता की त्रासदी भोग रहे ह। व्यसना क गलियारो म घूमत हुए बच्चो को राकने म असफल हो रह ह। इसलिए वे मुस्कराने की कोशिश करते हुए भी उदास ह, हताश हे आर किसी ऐसे उपाय की खाज म ह, जो उनको स्वस्थ आर प्रसन्न जीवन का आश्वासन दे सके।

एक ऐसे ही समूह के पास कुछ युवा कार्यकना पहुचे। उनकी परिस्थिति आर मन स्थिति का आकलन करते हुए उन्होने कुछ प्रश्न उपस्थित किये—

क्या आप तनावमुक्त जीवन जीना चाहते हे?

क्या आप अपने बच्चो म अच्छे सस्कार जगाना चाहते हे?

क्या आप अपन परिवार म मानवीय मूल्यो का स्थापित करना चाहते हे?

सुना हे कि अणुव्रत समिति, कलकत्ता के उत्साही कायकर्ताआ ने विगत कुछ अर्से से एक अभियान शुरू किया हे। वे कलकत्ता महानगर मे वहा के प्रबुद्ध वग स सम्पक साध रहे ह। रोटरी ओर लायन्स क्लबो की तरह उन्हाने वहा के डॉक्टर, इजीनियर, वकील, जज आदि उच्च शिक्षित वर्गो के छह सो व्यक्तिया को प्रथम बार म चुना ह। कोन कायकर्ता कितने व्यक्तियो क साथ सम्पर्क स्थापित करेगा—इस निणायक व्यवस्था कार्य का विभाजन किया गया हे। जिन व्यक्तिया से उनको मिलना होता हे, वे पहले पत्र-व्यवहार कर उनस समय लेते ह। समय मिलन पर वे उनकी सुविधा के अनुसार घर या ऑफिस म मिलत ह। साक्षात्कार के क्षणा म उनका प्रश्न हाता हे— आपका क्या काम ह? हम आपकी क्या सेवा कर सकत हे? इस प्रश्न के उत्तर म

अणुव्रत के कार्यकर्ता उनके सामने उक्त तीनों प्रश्न उपस्थित करते हैं। यदि वे लोग प्रश्नों का उत्तरित करने में रुचि लेते हैं और अपनी समस्याओं के समाधान में उनके सहयोग की अपेक्षा करते हैं तो वे मिलने का सिलसिला जारी रखते हैं। एक वर्ष में कम-से-कम दस बार मिलकर चर्चा करना उनका लक्ष्य है।

कार्यकर्ता जिज्ञासु व्यक्तियों को अणुव्रत, प्रेक्षाध्यान और जीवन विज्ञान का प्राथमिक साहित्य देते हैं। उनके बारे में अवगति देते हैं और प्रायोगिक जीवन जीने की प्रेरणा देते हैं। ध्यान, कायोत्सर्ग और अनुप्रेक्षा के प्रयोग भी बताते हैं। जो लोग प्रयोग करते हैं, उन्हें त्राण का अनुभव होता है। शहरी भागदौड़, व्यावसायिक व्यस्तता और अन्तहीन महत्त्वाकांक्षाओं से उपजा तनाव वर्तमान युग की सबसे बड़ी समस्या है। इसका प्रभाव छोटे-बड़े सब प्रकार के लोगों पर है। इसलिए तनावमुक्ति के कारगर उपायों के प्रति आकर्षण होना अस्वाभाविक नहीं है।

दूरदर्शन की अपनी उपयोगिता है। पर आज उसका जितना दुरुपयोग हो रहा है चिन्ता का विषय है। बच्चों की संस्कारहीनता में उसकी मुख्य भूमिका है। उसने विद्यार्थियों की पढ़ाई को भी प्रभावित किया है। घंटों, पहरों टी वी के सामने बैठने वाले बच्चे अध्ययन के लिए समय कहां से पाएंगे?

उक्त दोनों प्रकार की समस्याओं को समाहित करने के लिए बहुत लोगों के मन में तड़प है। इन समस्याओं का समाधान भी है। कठिनाई एक ही है कि उनकी पहुंच सही जगह नहीं है। धार्मिक नेता साम्प्रदायिक अभिनिवेशों से मुक्त नहीं हैं। वे मन्दिर-मस्जिद की बातों में इतने उलझ जाते हैं कि करणीय काम छूट जाते हैं। वे दाडिम के दानों को फेंक कर छिलका खाने की भूल कर रहे हैं। ऐसी भूल का अनुभव करना भी एक बड़ी उपलब्धि हो सकती है।

देश में जितनी अणुव्रत समितियां हैं, वे केन्द्रीय अपेक्षा के अनुसार कुछ रचनात्मक काम हाथ में लें और चुने हुए व्यक्तियों से सम्पर्क कर उन्हें अणुव्रत-दर्शन और उसके निदेशक तत्त्वों की विस्तृत जानकारी दें, उनके सामने ऐसे प्रश्न उपस्थित करें तो उनको एक नयी दिशा मिल सकती है।

३६ जीवन को सवारने वाले तत्त्व

मनुष्य के जीवन का सवारने वाले दो तत्त्व ह—अध्यात्म और नतिकता। अध्यात्म शाश्वत मूल्य ह। नतिकता दश-काल सापेक्ष सचाइ है। अध्यात्म का सम्बन्ध अन्तजगत् क साथ ह। नैतिकता वाह्य-जगत् का व्यवहार है। अध्यात्म की सत्ता त्रैकालिक ह। नैतिकता का सम्बन्ध वतमान के साथ है। अध्यात्म की परिभाषा निश्चित ह। नतिकता की परिभाषा परिवतनशील है। अध्यात्म का काइ सन्दभ नही हाता। वह नितान्त निरपेक्ष तत्त्व ह। जन दशन की भाषा म वह निश्चय ह। नैतिकता विभिन्न सन्दर्भो ओर कालखण्डा म आवद्ध रहती ह। जेन दशन की भाषा म वह व्यवहार है। अध्यात्म की परिभाषा का निधारण किसी वचारिक धरातल या सामाजिक एव सास्कृतिक परिवेश क आधार पर नही होता। नतिकता को परिभाषित करते समय ये सव सामन रहते ह। अध्यात्म कभी नतिकता शून्य नही हाता। किन्तु नैतिकता अध्यात्म की परिधि स वाहर भी जाती है।

अध्यात्म सदा था, है ओर रहेगा। उसकी सत्ता को कभी चुनोती नही दी जा सकती। अध्यात्म का सीधा-सा अथ है—आत्मा मे रहना। जा व्यक्ति आत्मा मे रहता ह, अपने आप म रहता है, वह आध्यात्मिक है। आध्यात्मिक व्यक्ति को अपने अस्तित्व का वोध होता है। उस अस्तित्व को वह सवमे देखता है। इसलिए उसका कोइ भी आचरण ऐसा नहीं होता, जा किसी के अस्तित्व को अस्वीकार या प्रतिहत कर। अध्यात्म सवके लिए आदश हो सकता ह। पर इस क्षेत्र म आगे वढना सवके लिए सभव नहीं ह। इसलिए दूसरे पथ की खाज की गइ। उसकी पहचान नतिकता के रूप म होती ह।

नैतिकता आर अनतिकता—ये दोनो शब्द सापेक्ष है। लागा की जुवान पर वार-वार एक वात फिसलती ह कि नतिक मूल्यों का पतन हो रहा है।

अनतिकता बढ रही है। इस कथन के साथ आज जितनी तीव्रता है, हमारा उप पहले भी यह बात इतनी ही तीव्रता के साथ कही जाती थी। मुझे ऐसा अनुभव होता है कि ऐसी बात मनुष्य के मनोबल को कमजोर बनाती है। कोई व्यक्ति नैतिकता का परचम हाथ में लेकर चल भी पडे तो ऐसी प्रतिकूल हवा में वह उसे कब तक थामकर रख पाएगा? समाज में नैतिक मूल्यों को प्रतिष्ठित करना है तो मनुष्य को अपना सोच बदलनी होगी और बदलना होगा हवा के रुख को देखकर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करने का मनोभाव।

अनैतिकता क्या है? किसी एक वाक्य में इसको परिभाषित करना सभव नहीं है। समाज या राज्य सम्मत मूल्यों के अतिक्रमण को अनतिकता कहा जाता है। पर कभी-कभी सामाजिक मान्यताए भी अनतिकता की पृष्ठपोषक बन जाती है। सत्ता के सिंहासन पर बैठे लोग भी अपनी सत्ता को सुरक्षित रखने के लिए ऐसे काम कर लेते है जो किसी भी दृष्टि से नैतिक नहीं हो सकते। ऐसी स्थिति मे नैतिक मूल्यों की अवधारणाओ को लेकर ऊहापोह हो सकता है। समाज व्यवस्था कानून और धर्म मनुष्य के जीवन में नैतिकता का प्रभाव न छोड सके तो फिर जन-चेतना का जागरण आवश्यक है। जहा जन जागृत हो जाता है, जहा लोकचेतना जाग जाती है, वहा कठिन या असभव दिखाई देने वाला काम भी सरल और सभव बन जाता है। इस विश्वास के आधार पर ही नैतिकता के प्रति जन-आस्था को केन्द्रित किया जा सकता है।

३७ सन्देह का कुहासा • विश्वास का सूरज

पिछले दिनो विश्व के इतिहास मे एक ओर उल्लेखनीय घटना घटी। उस घटना ने अहिसा म आस्था रखने वाले व्यक्तिया ओर सगठनो का नया हासला दिया हे। घटना का सम्बन्ध हे परमाणु आयुधो के द्वारा होन वाले युद्ध की आशका को कम करने की दिशा म हुए एक समझोते के साथ। रूस आर अमेरिका के बीच हुए उस समझोते की पहचान 'स्टाट सन्धि द्वितीय चरण' के रूप मे कराइ गइ।

'स्टाट सन्धि प्रथम चरण' की घटना अभी बहुत पुरानी नही हुई हे। पर पथम ओर द्वितीय चरण के बीच उभरे छोटे-से अन्तराल मे राजनैतिक उथल-पुथल ने विश्व की दो महाशक्तिया मे से एक के अस्तित्व का चुनोती दे डाली। स्टार्ट प्रथम संधि पर हस्ताक्षर के समय सावियत सघ एक महाशक्ति के रूप मे मान्यता प्राप्त था। दूसरी सधि के समय सोवियत सघ की सत्ता बिखर गइ। जिन दशा के समवाय से सोवियत सघ की सरचना हुइ थी, वे अपनी निजी पहचान की आकाक्षा के शिकार हो गए। गावाच्योव के पुनर्निर्माण और खुलेपन की भावना से जहा क्रन्ति की एक लहर उठी, पर वह गोबाच्याव को एक ओर छोडकर विलीन हो गइ।

'स्टाट सन्धि द्वितीय चरण' मे अमेरिका आर पूर्व सोवियत सघ के उत्तराधिकारी देशो ने परमाणु आयुधो म दो तिहाइ कमी करने का वादा किया गया हे। यह वादा एक दशक की अवधि म पूरा होगा, ऐसा विश्वास किया जाता हे। सन् १९९३ से २००३ तक का यह समय इस दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण माना जा सकता ह। इतना हो जाने के बाद भी दोनो देशो के पास बच परमाणु आयुधो की शक्ति समूचे विश्व को दस बार नष्ट कर सकती हे। यह स्थिति अब भी कम भयावह नही ह। सन्तोप की बात इतनी

ही ह कि परमाणु अस्त्रा क नए निर्माण की चतना का कुठित कर सम्बन्धित व्यक्तिया का साच की नइ खिडकी स झाकन के लिए विवश कर दिया गया ह।

परमाणु आयुध परिसीमन का विश्व क पाय सभी राष्ट्रा न स्वागत किया। इसस निष्कप यह निकलता ह कि मनुष्य की आस्था हिसा म नही ह अस्त्र शस्त्रा क निमाण म नही ह ओर उनके प्रयोग म भी नहीं ह। अस्त्र-शस्त्र वढाने का मतलव ह आपसी सन्दह को वढाना। अमुक राष्ट्र सहारक परमाणु आयुधा का निमाण कर रहा ह। वह शक्ति सम्पन्न हाकर मरे अस्तित्व को समाप्त न कर दे--इस आशका से प्रेरित होकर दूसरा राष्ट्र नए आयुधा के निर्माण म सक्रिय हो जाता ह। उसकी सक्रियता उसक प्रतिद्वन्द्वी मे भय की भावना जगाती ह। इस प्रकार सन्देह-स-सन्देह की परम्परा वढती जाती हे।

वेर स वेर शान्त नही हाता। सन्देह मे सन्देह दूर नही हाता। वेर का शमन मित्रता का हाथ वढान स ही सभव ह। सन्देह का कुहासा आपसी विश्वास का सूरज उगाने से ही छट सकता हे। इस भावना क आधार पर ही शस्त्रनिमाण आर उसके प्रयाग का नियन्त्रित किया जा सकता ह। विश्व म शस्त्रास्त्रा के निमाण एव सेना पर जितने अथ का व्यय हाता ह, उसम कुछ प्रतिशत भी कटोती होती हे ता ससार राहत का अनुभव कर सकता हे। अपने कायकाल की समाप्ति क साथ विदा होते होते राष्ट्रपति वुश ने जा श्रय लिया ह वह सभी राष्ट्राध्यक्षो के लिए अनुकरणीय ह।

अणुव्रत आचार-सहिता की एक धारा ह--'म आक्रमण नही करूगा ओर आक्रामक नीति का समथन नही करुगा।' अस्त्र शस्त्रा क निर्माण की मानसिकता का वदलन म इस धारा की सक्रिय भूमिका ह। काश! इस युग का आदमी अणुव्रत दशन को गहराई स समझे और उसे जीने के लिए दृढ सकल्प कर सक तो सारा ससार माँ अहिसा की गोद म सुख से सा सकता ह।

३८ मूल्य अर्हताओ का

दो पकार के व्यक्ति हात ह—प्रगतिशील आर परपरावादी। प्रगतिशील व्यक्ति प्राचीन परपगआ क भजक ही होत ह, यह वात नही हे। जा परपराए मयादाए या वजनाए उनकी प्रगति म अवरोध उपस्थित नहीं करती उनकी छडछाड करने म उनका विश्वास नही होता। पर उद्देश्यहीन अवरोध उनके लिए असह्य हा उठता ह। इसलिए व समय समय पर कुछ नइ परपराए स्थापित कर दते ह। यदि एसा नही हाता हे तो सम्बन्धित समाज जडता की गिरफ्त म आ जाता है और वह अप्रासंगिक भी वन जाता ह।

परपरावादी लाग परिवतन के नाम से ही चाकन ह। पहल स खीची हुइ लकीरा को मिटान म उनकी आस्था नही हाती। उनमे इतना साहस भी नही होता कि ये कुछ नइ लकीर खींच सक। वात यही समाप्त नही हा जाती। अपने समकालीन अन्य व्यक्तिया द्वारा किए गए किसी परिवतन को स्वीकार करना या सहन करना भी उन्ह गवारा नहीं हाता। इसका ताजा उदाहरण ह—इग्लेण्ड क चच म पादरी की कुर्सी पर स्त्री की उपस्थिति का व्यापक विराध।

इसाइ समाज म वहुत वर्षो स चचा छिडी हुइ ह कि स्त्री को पादरी वनन का अधिकार ह या नही? कवल ईसाइ समाज म ही क्या, पुरुप सत्तात्मक किसी भी समाज म एसे मुद्दे विवाद के विपय वन जाते हे। आश्चय ता इस वात का ह कि इग्लेण्ड जेसे दश म, जहा रहन वाले लोग वाद्धिकता के क्षत्र म गतिशील हान का दावा करत हे, स्त्री के वार म इतने रूढिवादी वन रहे हे। यही कारण है कि इग्लेण्ड म पादरी की कुर्सी पर कुछ मता से ही सही, विजयी वनी महिला पादरी क विरोध मे जुलूस निकाल गए आर प्रदशन हुए।

शताब्दियों से जिन पदों पर पुरुषों का ही एकछत्र अधिकार हो, वहां स्त्रियों का हस्तक्षेप पुरुषों के लिए असह्य हो सकता है। पर स्वयं स्त्रियां भी स्त्रियों की प्रगति में दीवार बनकर खड़ी हो जाएं, इससे अधिक विडम्बना क्या हो सकती है? चर्चा है कि इंग्लैण्ड में स्त्रियों ने स्त्री को पादरी बनने का अधिकार देने के विरोध में एक संगठन बनाया है। उस संगठन का प्रदर्शन सबसे अधिक प्रभावशाली रहा है। स्त्रियों द्वारा स्त्री के शोषण का यह एक ऐसा दस्तावेज है जो युग-युग तक उनकी समझ के आगे प्रश्नचिह्न टांगता रहेगा। भारत जैसे देश में जहां धार्मिक अन्धविश्वास और पारंपरिक आस्थाएं अधिक पुष्ट हैं ऐसी घटना को सामान्य नजरिए से देखा जा सकता था। किन्तु विकास की दौड़ में अग्रसर किसी भी राष्ट्र में घटित ऐसे प्रसंग विश्वभर की चर्च परम्पराओं को आन्दोलित कर रहे हैं यह आश्चर्य का विषय है।

इस बात से मैं सहमत हूं कि स्त्री और पुरुष की प्रकृति में अन्तर है। पर इसका अर्थ यह तो नहीं है कि स्त्री में किसी प्रकार की अर्हता नहीं होती। स्त्रियों की अपनी अर्हताएं हैं, पुरुषों की अपनी अर्हताएं हैं। स्त्री और पुरुष में समानता अथवा समानाधिकार का विवाद का मुद्दा न बनाकर उनको अपनी-अपनी अर्हताओं के विकास एवं उपयोग की छूट मिले तो टकराव की स्थिति उत्पन्न ही नहीं होगी। पर लगता है कि पुरुषों के मन में किसी अज्ञात भय की टिटहरी पंख फड़फड़ाती रहती है। वे सोचते होंगे कि स्त्रियां नियंत्रण में नहीं रहीं तो प्रलय मच जाएगा। यह बात तो पुरुषों के बारे में भी सोची जा सकती है।

इसलिए पारस्परिक भ्रम को तोड़कर एक-दूसरे की विकासयात्रा में सहभागी बनने की बात सोची जाए तो उसके अच्छे परिणाम आ सकते हैं। एंग्लिकन चर्च ने ग्यारह गिरजाघरों तक सीमित महिला पादरी के अधिकार को सैकड़ों चर्चों के लिए मुक्त कर दिया है। महिलाएं इस पद की गरिमा के अनुरूप अपने दायित्व का निर्वाह कर सकीं तो उनके विरोध में उठी आंधी स्वतः ही शान्त हो जाएगी। इंग्लैण्ड में जो घटना घटी है, उसके परिणामों की प्रतीक्षा ही की जा सकती है। फिलहाल तो इतना मानना ही काफी है कि हजारों वर्षों से चली आ रही परम्परा में जो क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ है, वह उल्लेखनीय है।

३९ आस्था और जागरूकता का कवच

सस्कृति जीवन को सवारने वाला तत्त्व हे। उसकी सुरक्षा जीवन की सुरक्षा हे। उसमे देश, समाज ओर जाति के आधार पर किसी विभाजन की अपक्षा नहीं है। पर मनुष्य की वाटन की मनावृत्ति ने अन्यान्य तत्त्वो की तरह सस्कृति को भी विभक्त कर दिया। इसीलिए पोर्वात्य आर पाश्चात्य सस्कृतियों की सत्ता उजागर हुई। भारतीय ओर अभारतीय सस्कृति का भेद भी इसी प्रकार की मानसिकता की उपज ह। मेरे अभिमत से सस्कृति ऐसा तत्त्व हे, जिसे कोई दूसरा क्षति नही पहुचा सकता। धम ओर सस्कृति को लकर हुए विवादा म परस्पर गाली गलाच हो सकता है, आतक फेलाया जा सकता ह, अग भग किया जा सकता हे, प्राणापहार तक किया जा सकता है। पर काइ किसी का धम या सस्कृति से विमुख नही कर सकता। परिस्थितियो के सामने घुटने टिकाने वाले व्यक्ति स्वय ही उससे विमुख हा जाए, यह दूसरी वात हे। व्यक्ति की आस्था आर जागरूकता कवच वनकर सस्कृति को सुरक्षा देती ह।

धामिक, सामाजिक, व्यावहारिक ओर पारम्परिक रूप म भारतीय सस्कृति की अलग पहचान वन जाने के वाद यह आवश्यक हो जाता हे कि उसकी मोलिकता का सुरक्षित रखा जाए। इस सस्कृति की मोलिकता का एक विन्दु ह व्रत या त्याग की चेतना। व्रत सुरक्षा हे। मूल्या, आदर्शो और अच्छाइयो की सुरक्षा। मयादा ओर कानून का ताडा जा सकता हे। आत्मसाक्षी आर गुरु-साक्षी से स्वीकृत व्रत को तोडत समय व्यक्ति आत्मग्लानि का अनुभव करने लगता ह। किसी परिस्थिति म व्रत का भग हा जाए तो व्यक्ति की आत्मा भीतर-ही भीतर कचोटती रहती हे। वहुत बार तो सकल्प की नोका डूवती-डूवती किनारे लग जाती ह।

एक व्यक्ति ने सकल्प स्वीकार किया—वह निरपराध प्राणी की हत्या नही करेगा आत्महत्या भी नही करेगा। एक बार वह परिस्थितियो से घिर गया। जीना मुश्किल हो गया। जीवन से ऊबकर उसने मृत्यु का वरण करने की बात सोची। अपनी सोच को क्रियान्वित करने के लिए घर छोडकर समुद्रतट पर जा पहुचा। समुद्र म छलाग भरने की पूरी तैयारी। सहसा मन के किसी कोने म सोया सकल्प जाग उठा। आत्महत्या नही करूगा—ये शब्द उसके भीतर गूजने लगे। उसने इरादा बदला। सकुशल घर पहुच गया। उसी व्यक्ति ने बताया—'व्रत स्वीकार करते समय मन सोचा था कि ऐसे व्रत की क्या अपेक्षा है? किन्तु म अब अनुभव करता हू कि इस व्रत ने मुझे बचा लिया। यदि मुझे व्रत याद नही आता तो मेरे बहके हुए कदमो को मोडने वाला दूसरा कोई वहा नही था।

व्रत भारतीय सस्कृति को जीवित रखने वाली प्राणधारा है। इसी बात को ध्यान म रखकर व्रत का आन्दोलन शुरू किया गया। व्रत के दो रूप है—महाव्रत और अणुव्रत। महाव्रत का क्षेत्र सीमित है। हर कोई व्यक्ति महाव्रतो की साधना नही कर सकता। अणुव्रत राजपथ है। इस पथ पर हर एक चल सकता है। कोई भी व्यक्ति अणुव्रती बन सकता है, इस चिन्तन मे इसको साधारण बात मानना भी भूल है। व्रत कितना ही छोटा क्यो न हो उससे व्यक्ति की कसौटी हो जाती है। सकल्पशक्ति और आत्मविश्वास के अभाव म छोटे-से-छोटे व्रत का पालन भी कठिन हो जाता है। सकल्पशक्ति बढाने और आत्मविश्वास जुटाने से असभव सा प्रतीत होने वाला काम भी सभव बन जाता है।

अणुव्रत के दो फलित है—विकृति का निस्सरण और सस्कृति की सुरक्षा। मानव-मन को विकृत बनाने वाली विकृतियो से छुटकारा पाने के लिए अणुव्रत की शरण स्वीकार की जाए। अणुव्रत, एक ऐसा सुरक्षाकवच है जो व्यक्ति या समाज को ही नही, उजली सास्कृतिक विरासत को सुरक्षित रख सकता है। इस सचाई से मनुष्य परिचित हो जाए तो मनुष्य के मन और सास्कृतिक निर्मलताओ म हो रही विकृतियो की घुसपैठ को रोका जा सकता है।

४० आस्था के दो आयाम

मनुष्य की आस्था को दो आयामो म देखा जा सकता हे। एक आयाम हे—सुविधाभागी मनावृत्ति। इस मनावृत्ति वाल व्यक्ति श्रम से दूर भागते ह। जीवन स्तर ऊचा पसन्द करते ह। जीवन-स्तर से उनका अभिप्राय कोठी, कार टी वी , फ्रिज, कूलर, ए सी आदि साधनो की उपलब्धि से ह। इस उपलब्धि क लिए वे गलत रास्ते पर चल सकते ह, गलत उपाय काम म ले सकत ह, शरारतपूण ओछी हरकन कर सकते ह, पर अपने आपको अच्छा पमाणित करने म कोइ कोर कसर बाकी नहीं छोडते। क्योंकि उनकी आस्था मनुष्य जीवन का सुख भोगन म ह।

मनुष्य की आस्था का दूसरा आयाम हे— चरित्र की पराकाष्ठा। इस आस्था को जीने वाला मानता है कि आन्तरिक पतन से बाहरी पतन के दरवाजे खुल जाते हें। जा व्यक्ति धन-वैभव या सुविधा को चरित्र से अधिक मूल्य दता ह, वह अपने मन म इमानदारी की ललक नहीं जगा सकना। इस ललक के बिना जीवन सरल आर साफ-सुथरा नहीं हो सकता। जीवन की विसगतिया स बचन, मानवीय मूल्या को जीने आर सपन्नता म छिपी हिसक स्पद्धा से दूर हटन क लिए अपने आपको बदलने का सकल्प करना होगा। जो अभी नही बदल सकता, वह कभी नही बदल सकना—इस आस्था की प्रेरणा से ही मनुष्य चरित्र क शिखर पर आरूढ हा सकता हे।

कुछ लाग महावीर का अपना आदर्श मानते हे। कुछ लागा का विश्वास बुद्ध म ह। कुछ लोग गाधी क अनुयायी ह। कुछ लोगो की आस्था इसी कोटि क किसी महापुरुप मे हा सकनी ह। प्रश्न यह हे कि क्या सही अथ म ऐसे महापुरुप व्यक्ति के आदश ह? शाब्दिक रूप म किसी को आदश मानना एक बात हे। महत्त्व की बात ह आदश मे अपने आपको ढालना।

आदश क गुणगान ही पयाप्त नहीं ह। आदश को साचा मान अपनी वृत्तिया को ठाक पीट कर उसक अनुरूप बनाने वाला ही एक दिन आदर्श बन सकता ह। इसक लिए जीवन की जटिलताआ आर कष्टा स परिचित हाना जरूरी ह। कम-स-कम व्यक्ति का यह ज्ञात हा कि जीवन कस जीया जाता है? इस सचाइ का सामना करन से डर हुए लाग कभी महावीर, बुद्ध या गाधी नहीं बन सकते।

चरित्र मनुष्यता का सबसे बडा मानदण्ड ह। चरित्रबल क्षीण हाने से व्यक्ति कितना दरिद्र हा जाता है, इसका अनुभव नहीं कर सकता ह। चरित्र के साथ क्षीण होती शरीर आर मन की शक्ति व्यक्ति को पूरी तरह स अक्षम बना दती ह। उसका आत्मविश्वास टूट जाता ह। वह साचता ह कि अनैतिकता के बिना जीना सभव ही नहीं है। यह चिन्तन सन्दह की ऐसी बदली ह, जा यथाथ क सूरज का ढक लती ह। इससे व्यक्ति के मन म जो अधरा उतरता है, उस दूर धकलना बहुत कठिन हा जाता ह।

आस्था के पहल आयाम मे जीने वाले लागा स किसी प्रकार की आशा व्यथ ह। किन्तु जा लाग दूसर आयाम म जीत हैं उनका दायित्व ह कि व मानवीय मूल्या, सभ्यता आर सस्कृति का सुरक्षित रखन का सकल्प अपन बलबूत पर कर। एस लाग कभी परिस्थितिया की अनुकूलता के लिए प्रतीक्षा नहीं करते। समाज या राष्ट्र के सुन्दर भविष्य का निमाण आस्था क दूसरे आयाम पर ही निभर है।

४१ समस्या विचारशून्यता की

अच्छाइ मनुष्य म हाती हे। बुराइ भी मनुष्य म हाती हे। सामान्यत व्यक्ति की दृष्टि यहा पहुचती हे, जहा से उसकी अपनी अच्छाइ उजागर हा। वह दूसरो की आर देखता ह। उस समय उसका नजरिया बदल जाता ह। अपने सन्दभ म दूसरे को देखने की मनोवृत्ति क्षीण हो रही हे। दूसर की बुराइ दखने से मिलेगा क्या? कोन व्यक्ति कितना बुरा हे? वह किस प्रकार की बुराइया करता ह? इन सवालो म उलझने से लाभ क्या ह? सवाल यह हाना चाहिए कि किसी भी बुराइ की रोकथाम कैसे हो?

बुराइ व्यक्तिगत भी हाती हे ओर सामूहिक भी होती हे। उसके इतन रूप ह कि कोशिश करने पर भी उसका मूलभूत चेहरा सामने नहीं आता। बुराइ क स्रात को खाजा जाए तो सभव हे उसकी रोकथाम के उपाय भी कारगर हा सक। जरूरी नहीं हे कि उपायो की खोज करने वाला व्यक्ति शत-प्रतिशत सफल हो जाएगा। पर वह उनकी आहट को पहचान ले तो भविष्य म आने वाली समस्या का समाधान खोजन मे सुविधा हो सकती हे। किसी भी तथ्य को लम्बी दूरी तक देखने का दशन परिस्थितियो को उस मोड तक पहुचा सकता हे, जहा से व्यक्ति के जीवन को नइ दिशा उपलब्ध हो सकती हे।

कुछ लोग अपने सामने से गुजरती परिस्थितिया को देखकर भी अनदेखा करते ह। अधे लागा के बीच कितनी ही देर आइना घूमता रहे, वे अपनी सूरत नही दख सकते। अन्धापन केवल आखा का ही नही होता, विचारो का भी होता हे। विचारशून्यता ओर वचारिक आग्रह सत्य को स्वीकार करने मे सबसे बडी बाधाए ह। विचारशून्यता इस युग की एक गभीर समस्या हे। राजनेताआ आर धमनताआ की ही नही, दाशनिका ओर साहित्यकारो की

विचारशक्ति भी कुन्द हो रही है। नई सोच का जग सा लग गया है। क्या हुआ, किसी क्षेत्र में अंगुलियों पर गिने जाने योग्य नाम सामने आ जाएं। अंधेरे इतने सघन हैं कि उनसे लड़ने के लिए सितारे पर्याप्त नहीं होंगे। वे सितारे स्वयं गर्दिश में हों तो प्रकाश की आशा ही कैसे जगेगी?

कुछ लोग समय की प्रतीक्षा करते हैं। अनुकूल समय आएगा, तब काम करेंगे। यह भी एक प्रकार का बहाना है। जिनको काम करना है, वे किसी की प्रतीक्षा नहीं करते। बहुत बार ऐसे लोग प्रारम्भ में अकेले पड़ जाते हैं। उनका उपहास होता है, उपेक्षा होती है और उनके मार्ग में बाधाएं खड़ी की जाती हैं। आचार्य भिक्षु के साथ यही हुआ था। पर वे रुके नहीं, थके नहीं, चलते रहे। पथ प्रशस्त हुआ। कुछ लोगों ने सत्याग्रह का हाथ बढ़ाया। उनकी क्रान्ति सफल हो गई। यदि वे प्रारंभिक मुसीबतों के आगे घुटने टेक देते तो आचारशैथिल्य के क्षेत्र में प्रतिकार के स्वर धुंधलके में खो जाते।

वर्तमान लोकजीवन में जो बुराइयां हैं, उनका प्रतिकार अभी नहीं होगा तो कभी नहीं होगा। महावीर और गांधी के आदर्श देश के सामने हैं। देशवासियों का दायित्व है कि वे अपने भीतर झांक और देखें कि उनके जीवन में वे आदर्श हैं क्या? जिसके जीवन में उन आदर्शों की सुगबुगाहट भी नहीं है, वे क्या अपेक्षा करें कि दूसरे लोग उदाहरण बनें। यह परस्मैपद की सोच आत्मनेपद में बदलेगी, तभी बुराई के प्रतिकार का स्वर मुखर हो पाएगा। अणुव्रत आत्मसुधार या व्यक्तिसुधार का आन्दोलन है। इसी दर्शन के आधार पर मानव समाज विसंगतियों को मिटाने में सक्षम हो सकेगा।

४२ आज की खाद से कल का निर्माण

समय के पाव कभी रुकते नहीं ह। मनुष्य कुछ करगा तो समय वीतेगा ओर कुछ नही करगा तो भी समय वीतेगा। समय को थामकर रखन की शक्ति या कला किसी के पास नही हे। अतीत ओर भविष्य के बीच का क्षण कायकारी हाता हे। अतीत की स्मृति हो सकती ह, पर उस वतमान मे नहीं लाया जा सकता। भविष्य की कल्पना की जा सकती हे, पर कल्पना को जीया नही जा सका। जीने के लिए आज का दिन हाता ह। आज की खाद स ही कल का निर्माण सभव हे। इसलिए आज को सही ढग से जीने की अपेक्षा ह।

मनुष्य म दा प्रकार के भाव होते ह—विधायक भाव ओर निपेधात्मक भाव। विधायक भावो मे जीने वाला व्यक्ति यत्र तत्र अच्छाई देखता हे। युधिष्ठिर न पूरे शहर की परिक्रमा की, उसे एक भी व्यक्ति बुरा नहीं मिला। ऐसे व्यक्ति किसी दूसरे पर दोपारोपण नही करते। दो व्यक्तिया से सबधित घटना म यदि काइ दुबल विन्दु होता हे तो उस वे अपने साथ जोडत हे। वे न तो अत्यधिक आशावादी होते हे ओर न निराशा की गिरफ्त मे आते हे। व चिन्तनपूवक काम करत ह। सफल हाने पर वे उसी पथ से आगे बढते ह ओर असफलता की स्थिति मे रास्ता वदलकर चलते हे। किन्तु उसकी जिम्मेवारी किसी भी निमित्त पर नही डालते।

निपेधात्मक भावा की प्रेरणा स मनुष्य का दृष्टिकोण सम्यक् नही रह पाता। वह हमेशा ही अतीत को वतमान से अच्छा मानता हे। वर्तमान केसा ही क्यो न हो, वह उसम दाप ही देखता ह। किसी भी क्षेत्र मे असफल हान पर वह सारा दाप व्यवस्था के सिर पर मढ देता ह। आत्मनेपद की भापा मे सोचना उसका स्वभाव नही होता। परिवतन की अपेक्षा भी वह दूसरो से ही

करता है। दूसरे के प्रति उसका व्यवहार कैसा है? इस बात की चिन्ता किए बिना वह दूसरों से अनुकूल व्यवहार की अपेक्षा रखता है। उनके द्वारा प्रदत्त अनुकूलता में भी उसकी दृष्टि में प्रतिकूलता के प्रतिबिम्ब उभर आते हैं। यह उसका नहीं, उसके निषेधात्मक भावों का दोष है।

आज राजनेता निषेधात्मक दृष्टि से सोचता है। समाजसेवी का दृष्टिकोण विधायक नहीं है। धर्मनेता या धर्मोपदेशक का चिन्तन भी इसी दिशा में आगे बढ़ रहा है। ऐसी स्थिति में जनता में प्रेरणा कौन भरे? उसे सही दिशा कौन दे? उसकी मनःस्थिति को कौन बदले? आज तक सब लोग इसी क्रम में सोचते रहे हैं, इसी भाषा में बोलते रहे हैं और अपने आचरण को विवादास्पद बनाते रहे हैं तो फिर हम नई बात क्यों सोचें? इस प्रकार का चिन्तन भी व्यक्ति के निषेधात्मक भावों का प्रतीक है। किसी ने कुछ भी किया हो, कोई कुछ भी कर रहा हो, मुझे आदर्श जीवन जीना है— यह सोच ही विधायक भाव है। अणुव्रत मनुष्य के विधायक भावों को जगाने का एक प्रयास है। वह आदर्श की बात में नहीं, आचरण में विश्वास करता है।

प्रश्न हो सकता है कि अब तक अणुव्रत से कितने लोगों को रोशनी मिली? कितने लोग सत्पथ पर आए? कितने व्यक्तियों की जीवनशैली बदली? इन प्रश्नों के समाधान में आंकड़े प्रस्तुत करना मेरा लक्ष्य नहीं है। आंकड़ों की संस्कृति ने कोई बड़ा काम किया है, ऐसा प्रतीत नहीं होता। किसने क्या किया? और उसका परिणाम क्या आया? इस उलझन से ऊपर उठकर हर व्यक्ति आत्मनिरीक्षण करे, आत्मसंशोधन करे और अपने जीवन के रूपान्तरण से विधायक वातावरण का निर्माण करे। अणुव्रत की यही प्रेरणा व्यक्ति के माध्यम से समाज निर्माण और राष्ट्रनिर्माण का सपना सत्य कर सकेगी।

४३ पुरुपार्थ निर्माता है भाग्य का

पुरुपाथ ओर भाग्य—ये दो विरोधी ध्रुव ह। पुरुपाथ कम की पेरणा हे। भाग्य अदृप्ट की आराधना हे। परिणाम आए या नहीं, पुरुपार्थी कर्म म सलग्न रहता हे। भाग्यवादी कुछ भी करता हे, उसम अपने कतृत्व का अनुभव नही करता। अपन सफल पुरुपार्थ को भी वह भाग्य का अवदान मानता हे। कुछ लोग देववाद म विश्वास करते ह। अमुक देव की पूजा करन स व्यक्ति की सब कामनाए सफल हो जाती है, इस अवधारणा के आधार पर मन्दिरो म परिक्रमा करने वाला की सख्या मे वृद्धि हो रही ह। भाग्यवाद और देववाद के साथ एक नया वाद आर पनप रहा ह—ज्योतिपवाद। भाग्य आर देव की तरह ज्योतिप के प्रति भी लागा म अन्धश्रद्धा सघन होती जा रही ह।

ज्योतिप एक विद्या है, यह सत्य ह। ज्योतिप के आधार पर जन्मकुण्डली बनाइ जाती ह। जन्मकुण्डली देखकर वप भर के लाभ-अलाभ वताए जाते ह। वताइ गइ सव वाते यथाथ ही हा, जरूरी नहीं ह। सभवत जातक के जन्म का समय सही नहीं हो, ज्योतिपी का ज्ञान सही नहीं हो, कुण्डली देखते समय चित्त एकाग्र न हो अथवा ओर कोइ कारण हो, ज्योतिपविद्या की सचाई के आगे प्रश्नचिह्न लगते जा रहे ह। वावजूद इसके ज्योतिपियो के प्रति अन्धश्रद्धा वढी हे। कुछ लोग तो उन्ह भगवान् मानकर उनके द्वारा कही गइ प्रत्येक वात पर विश्वास कर लेते ह और मन्दिरा की तरह उनके घर या कार्यालय की परिक्रमा करते रहते हे।

कुछ ज्योतिपी पत्र-पत्रिकाआ मे विज्ञापन देत हे। उनम अपन टेलीफोन नम्वर वता देते हे। उस नम्वर पर फान करके भविप्य जानन का आकपण उत्पन्न करते हे। सवसे अधिक विकसित मस्तिप्क वाले मनुष्य का चिन्तन कितना वोना हाता ह कि वह उनकी वाता म आ जाता ह और पानी की

नग्द पसा वहा दता है। सवाल कजरा पस का ही नहीं ह, इस प्रकार की मनावृत्ति स मनुष्य श्रमपराड्मुख हाता ह। बिना पुरुषाथ किए सफलता पान की मानसिकता रुग्ण मानसिकता ह। सयागवश किसी व्यक्ति को सफल हान का अवसर उपलब्ध हा सकता ह, किन्तु अधिकाश व्यक्ति एसी त्रासदी स गुजरकर कही क नहीं रहत।

भारतीय लागा म यह परम्परा रही है कि वे बच्चे क जन्म का समय लिखकर रखत ह। उसके आधार पर जन्मकुण्डली बनवाते ह। पर विगत कुछ समय स एक नइ शली विकसित होती जा रही ह। उसके अनुसार जन्म क लिए मुहूत पहल दखा जाता हे। किस मुहूत म उत्पन्न बच्चा क्या बनेगा, यह बात ज्यातिषिया के माध्यम स पहल ज्ञात कर ली जाती ह। फिर डॉक्टर का निर्देश दिया जाता ह कि इतन बजकर इतन मिनट पर उन्ह बच्चा चाहिए। डॉक्टर ऑपरशन करत ह और पहल स तयशुदा क्षण म बच्च का जन्म करवा दत ह। जिस प्रकार अन्य विशिष्ट कार्यों का सम्पादित करने से पहल अच्छा समय देखा जाता हे, शुभ समय की परीक्षा की जाती ह, वसे ही बच्च के जन्म को समयबद्ध करना कसी बुद्धिमत्ता हे? भाग्य को बदलन का यह सीधा सा तरीका कितना सफल हो पाया ह? अनुसधान का विषय हे। पर इसका एक फलित निर्विवाद ह कि मनुष्य पुरुषाथहीनता की दिशा म अग्रसर होगा।

भारतीय जीवनशेली पुरुषाथ से भावित जीवनशैली रही हे। कम आर भाग्य क तटबन्ध कितन ही मजबूत हा जीवन-सरिता का प्रवाहित रहना पडेगा। प्रवाह स अलग हान वाला जल या तो अपने अस्तित्व का समाप्त कर दता ह अथवा एक स्थान पर स्थिर हाकर सडने लगता ह। निझर हा या नदी उसकी गतिमयता ही उसका निमल बनाकर रखती हे। पुरुषाथ हा मनुष्य के व्यक्तित्व का नया निखार दता ह। पुरुषाथहीनता भविष्य का अन्धकार म धकेलन का स्पष्ट सकेत ह।

४४. सघर्ष की दिशाए

यह जगत् द्वन्द्वात्मक हे। इसमे चेतन ओर अचेतन दो तत्त्व हे। चतन तव तक ही ससार म रहता ह, जब तक वह अचेतन से सम्बद्ध रहता हे। अचेतन से सम्बन्ध छूटत ही चतन द्वन्द्वमुक्त हो जाता हे, अपन स्वरूप को उपलब्ध हो जाता हे। द्वन्द्वमुक्त चेतना साधक का लक्ष्य हाता हे। हर व्यक्ति साधनाशील नही होता। इसीलिए चेतना को द्वन्द्वमुक्त वनाने की दिशाए सहज रूप म उद्घाटित नही हा पाती।

मनुष्य का जीवन भी द्वन्द्वात्मक होता ह। द्वन्द्व के दो रूप हाते ह—चिन्तनगत ओर व्यवहारगत। द्वन्द्व की उद्भवभूमि मनुष्य का मन ह। मन मे द्वन्द्व होता ह तभी वह व्यवहार म उतरता हे। मन निर्द्वन्द्व हो ता व्यवहार के धरातल पर उसके पदचिह्न अकित नही हात। किन्तु बहुत कठिन ह मन को द्वन्द्वातीत बनाना। अकेला व्यक्ति भी अनेक प्रकार के द्वन्द्वो से घिर जाता हे, फिर समूह की तो बात ही क्या? परिवार, समाज, सस्था दल आर वर्ग से वध हुए व्यक्ति अनेक प्रकार क द्वन्द्वा का निमन्त्रण देते ह और उनकी मार से आहत हाकर व्यथा का भार ढाते ह।

द्वन्द्व का अथ ह सघप। उसक दा रूप ह—अन्तरग ओर बहिरग। बहिरग सघप को सहना इतना कठिन नही ह। उसे सहा जा सकता ह ओर खुले रूप मे उसका मुकाबला भी किया जा सकता हे। अन्तरग सघर्प को झेलना अधिक कठिन होता ह। अतरग सघप स्थिति को इतना जटिल बना देता हे कि उसके समाधान का सूत्र ही हाथ से फिसल जाता हे। कभी-कभी वह रेशम की गाठ वन जाता हे। उसम खोलने क लिए जितना प्रयत्न हाता हे, वह उतनी ही उलझती चली जाती ह।

किसी सगठन या दल मे अन्तरग सघप या विरोध की स्थिति उत्पन्न

होती है तो वह उसी के लिए अहितकर होती है। किन्तु जो संगठन या दल राष्ट्रीय दृष्टि से महत्त्वपूर्ण होता है, पूरे राष्ट्र का दायित्व संभालने वाला होता है उसके भीतर यदि रचनात्मक सोच की कमी आती है, पारस्परिक वैमनस्य का बीजवपन होता है, एक-दूसरे पर छींटाकशी होती है, तो उससे पूरे राष्ट्र की चेतना प्रभावित होती है। उसका नुकसान पूरे राष्ट्र को झेलना पडता है। कोई संगठन हो, उसमें विभिन्न रुचियों वाले व्यक्ति होते हैं। रुचिभेद विचारभेद को जन्म देता है। यहां तक स्थिति उलझनी नहीं। जब विचारभेद मनोभेद का सर्जक बन जाता है और आपसी उठापटक का क्रम प्रारम्भ हो जाता है, वहां अहित की संभावना को टाला नहीं जा सकता। व्यक्तिगत स्वार्थ को साधने का मनोभाव और स्वार्थ न सधने पर निम्न स्तर के विरोध का उद्भाव--ये दोनों ही स्थितियां राष्ट्रीय हितों पर प्रहार करने वाली हैं।

राष्ट्र के सामने अनेक समस्याएं रहती हैं। उनके समाधान का दायित्व राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक--सभी संगठनों पर है। सत्तारूढ दल इस दायित्व से दोहरा प्रतिबद्ध होता है। वह अपनी अन्तरंग स्थिति से ही नहीं निपट पाया तो राष्ट्र को कैसे संभालेगा? जहां तक एक ही व्यक्ति अपने दल का नेता हो और राष्ट्र का भी नेता हो वहां उस पर कितना बोझ रहता है, कल्पना की जा सकती है। जहां दल और राष्ट्र का नेता अलग-अलग हो वहां भी कठिनाई कम नहीं रहती। नीति-भेद के कारण किसी योजना को अमलीजामा पहनाने से पहले ही वह फेल हो जाता है। ऐसी स्थिति में सत्तारूढ दल के लोगों का नैतिक दायित्व है कि वे व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए दल के हितों का विघटन न करें और दलीय स्वार्थ के लिए राष्ट्रीय हितों को विघटित न होने दें। अणुव्रत के मंच से उनको सही दिशा उपलब्ध हो सकती है बशर्ते वे राष्ट्रहित को प्रमुख मान सब प्रकार के पूर्वाग्रहों से मुक्त होकर एकता के अश्व की लगाम थामकर चलने का संकल्प लें।

४५ शिक्षा और सस्कार

शिक्षा एक प्रकार की जन्मघुट्टी हे। जन्म के साथ ही वच्चे का जन्मघुट्टी दी जाती हे। विज्ञान के अनुसार जीन्स म व्यक्तित्व के वीज निहित हे। जनप्रवाद जन्मघुट्टी म व्यक्तित्व की सभावनाए देखता हे। जन्मघुट्टी देन वाल व्यक्ति क गुण-दापा का सक्रमण वच्चे में हाता हे, यह भी एक मान्यता रही हे। जन्मघुट्टी क्या हे ? कस दी जाती ह ? कोन दता हे ? केस दनी चाहिए? आदि मुद्दो को लकर कभी काई आयाग नहीं वेठा। जन्म क वाद वच्चे को मा का दूध मिलता हे। उसके वारे म आज तक कभी काइ वज्ञानिक विश्लेपण हुआ ह क्या ? मा क दूध म कान-से तत्त्व होते ह? उसम आर क्या मिलाना चाहिए? आदि प्रश्ना पर कभी कोइ व्यापक वहस हुइ हो, सुनने या पढने मे नही आया। मा का दूध वच्चे के लिए प्राकृतिक खुराक मानी गइ ह। उससे वच्चे का पोपण होता हे। जो माताए आधुनिक कहलाने के व्यामोह म वच्चे को अपने दूध से वचित रखती ह, वे उसक हिता का विघटन करती हे, ऐसा भी कहा जाता ह।

शिक्षा की जन्मघुट्टी या मा के दूध से तुलना की जाए तो उसे तर्क- वितर्को ओर वितण्डावादा मे क्यो उलझाया जाता हे? भारत की आजादी के वाद शिक्षा क विपय मे कितन आयोग वेठे, कितनी रिपोर्टें वनीं प्रश्न आज भी ज्या का त्यो उलझा हुआ हे। कहीं आयाग काम नही करते। कहीं रिपोट नहीं वनती। कहीं रिपार्ट पढी नही जाती। कहीं उसकी क्रियान्विति नही होती। अ स लेकर ह तक कहीं कुछ भी नहीं होता। तव फिर एक आयाग वेठता हे। अव तक कहीं कुछ क्यो नहीं हुआ, यह समीक्षा करने क लिए वैठने वाला आयोग भी जव

अनीत के क्रम का दोहरा देता है, तब उससे क्या आशा की जाए? कैसा आश्वासन पाया जाए? और शिक्षा को जीवन के साथ कैसे जोड़ा जाए?

मेरा परामर्श तो यह है कि शिक्षापद्धति की श्रेष्ठता या अश्रेष्ठता प्रमाणित करने के लिए अब कोई नया आयोग न बैठे। एक के बाद एक शृंखलाबद्ध गोष्ठियों और सेमिनारों का आयोजन भी न हो। हां तो एक ऐसी संगोष्ठी हो, जिसमें वैज्ञानिक, आध्यात्मिक, शिक्षाशास्त्री, शिक्षक, साहित्यकार, राजनीतिक और सामाजिक व्यक्तियों का उचित प्रतिनिधित्व हो। सब लोग मिलकर भारत की आकांक्षाओं, जरूरतों और बुनावट का ध्यान में रखकर कोई ऐसा सर्वमान्य निर्णय लें, जिसकी क्रियान्विति में किसी प्रकार की बाधा न हो। इस पृष्ठभूमि पर जो भी निर्णय होगा वह मूल्याधारित शिक्षा के प्रश्न को अनदेखा नहीं करेगा।

मूल्य क्या है? जो जीवन के मूलभूत तत्त्व हैं, उन्हीं का नाम मूल्य है। जो जीवन को बनाने या संवारने वाले मौलिक तत्त्व हैं, उन्हीं का नाम मूल्य है। जहां मौलिकता समाप्त हो जाती है, वहां विजातीय तत्त्वों को खुलकर खेलने का मौका मिल जाता है। सरलता, सहनशीलता, कोमलता, अभय, सत्य, करुणा, धृति, प्रामाणिकता, संतुलन आदि ऐसे गुण हैं, जिनको जीवन-मूल्यों के रूप में व्याख्यायित किया जा सकता है। एक शिक्षित व्यक्ति के जीवन में उक्त मूल्यों का समावेश नहीं होगा तो इनको कहां खोजा जाएगा? मुझे आश्चर्य है कि मूल्यपरक शिक्षा की बात अब सामने आई है। क्या अब तक जीवन मूल्यों की शिक्षा नहीं दी जाती थी?

जिस समय शिक्षा के साथ मूल्यों के समावेश की चर्चा ही नहीं थी, उस समय भी इस देश की नानियां और दादियां अपने नातियों को कहानी किस्सों के माध्यम से अच्छी बातें सिखाती थीं। मुझे भी बचपन में कहानी सुनने का शौक था। सभी बच्चों को रहता होगा। पर आज उन कहानियों का स्थान टी. वी. सीरियलों और कामिक्स ने ले लिया है। उनके द्वारा जो संस्कार परोसे जाते हैं, वे ही जीवन को प्रभावित करते हैं। जैसी संगत वैसी रंगत—यह कहावत गलत नहीं है। संगत के कारण एक नाना

आगन्तुका का स्वागत करता है और दूसरा उन्हे लूटने की सलाह दता ह। विद्यार्थियो के जीवन म मूल्यहीनता की समस्या का स्थायी समाधान ह—अध्यापका और अभिभावको के जीवन म चालत मूल्य। समाज और परिवार म प्रतिष्ठित मूल्या का ही शिक्षा क माध्यम से सप्रेषित किया जा सकता है।

४६ जीवन का बुनियादी काम

एक महत्त्वाकांक्षी युवक ने भावी जीवन की विस्तृत रूपरेखा बनाई। विकास की अनेक योजनाएं बनाकर वह अपने गुरु के पास गया। उसने अपनी फाइल गुरु को सौंपते हुए कहा— 'गुरुदेव! मैंने अपना भावी कार्यक्रम निर्धारित किया है। मैं आपसे मार्गदर्शन लेने आया हूं। इन योजनाओं की क्रियान्विति के लिए मुझे प्राथमिक रूप में क्या तैयारी करनी है?'

गुरु ने शिष्य की योजनाओं पर एक विहंगम दृष्टि डाली। फाइल उसे लौटाकर वे बोले—'इसमें प्रथम योजना का कोई उल्लेख ही नहीं है। जब तक वह पूरी न हो जाए, आगे कुछ सोचना व्यर्थ है।' युवक अनमना हो गया। उसने पूछा— गुरुदेव! वह कौन-सी योजना है?' गुरु ने कहा—'वह योजना है स्वभाव निर्माण और चरित्र निर्माण की। जब तक स्वभाव और चरित्र का निर्माण नहीं होता, कोई व्यक्ति बड़ा आदमी नहीं बन सकता।'

वर्तमान युग की सबसे बड़ी कठिनाई यही है कि मनुष्य सब कुछ बनना चाहता है, पर मनुष्य बनने की बात नहीं सोचता। वह नित नई योजनाओं का निर्माण करता है, पर चरित्र-निर्माण की योजना बनाने के लिए उसके पास समय नहीं होता। वह अपने आसपास रहने वाले सब लोगों में बदलाव देखना चाहता है, पर अपने स्वभाव को बदलने का संकल्प नहीं करता। वह सबको अपने अनुकूल बनाने का सपना सजाता है पर स्वयं किसी के अनुकूल होने की मानसिकता नहीं बनाता। ऐसी स्थिति में उसके द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति कैसे होगी?

चरित्र निर्माण जीवन का बुनियादी काम है। इसके लिए चरित्रनिष्ठ व्यक्तियों का संपर्क आवश्यक है। चरित्र को उदार बनाने वाले कार्यक्रमों को समझना और उनमें अपनी सक्रिय भागीदारी रखना जरूरी है। पर समस्या

ह समय की। आज की जीवनशैली इतनी कसी हुइ हे कि चरित्र की चचा या अभ्यास के लिए समय ही नहीं रहता। माना कि आदमी व्यस्त ह। यह व्यस्तता किसके सामन नहीं ह? हर आदमी को चौबीस घण्टे का समय मिलता ह। हर व्यक्ति का वप तीन सा साठ या पसठ दिनो का होता ह। समय जितना ह, उतना ही ह। सवाल हे उसके नियाजन का। मनुष्य समय की नियमितता का अपना आदश बना ले ता उसके बहुत से अधूर काम पूर हो सकते ह।

अणुव्रत चरित्र निमाण का आन्दोलन ह। इसकी आकाक्षा एक सही मनुष्य के निमाण की ह। मनुष्य का निर्माण करन क लिए प्रवृत्ति आर निवृत्ति का सतुलन करना हागा। चिन्तन और अचिन्तन का सतुलन करना होगा। वाक् और मोन का सतुलन करना हागा। आवश्यकताओ आर आकाक्षाओ का सतुलन करना हागा। सतुलन का आधार ह सयम। सयम की साधना अखण्ड रूप म हो सकती ह आर खण्ड-खण्ड करके भी हो सकती हे। अखण्ड सयम की आराधना हर व्यक्ति क वश की बात नहीं हे। पर खण्ड-खण्ड मे सयम का पालन कोइ भी कर सकता ह।

अणुव्रत का उद्देश्य भी यही हे कि छोट-छाट सकल्पो की सोपान पर आरोहण करता हुआ मनुष्य सयम क शिखर का स्पश करे। जब तक सयम या चरित्र क प्रति आस्था हे, तब तक मनुष्य बुराइ से बचने का प्रयास करता रहगा। जिस दिन आस्था का धागा टूट जाएगा, जीवन का कोइ क्रम नही रह पाएगा। उपासना को गाण और चरित्र को मुख्य मानने वाला यह आन्दोलन मानव जाति क लिए एक दिशादशन हे। चरित्र निमाण का लक्ष्य ओर उस दिशा म प्रस्थान—इसी क्रम से व्यक्ति अपनी चारित्रिक सपदा को सुरक्षित आर वृद्धिगत रख पाएगा।

४७ साफ आईना • साफ प्रतिविम्व

स्वस्थ जीवन का आधारभूत तत्त्व ह 'सम्यक् दृष्टिकाण । जीवन जाना आर सम्यक् दशन के साथ जीना— इन दोनो स्थितियो म बहुत अन्तर ह। जीते ता सभी ह किन्तु सही दृष्टि, सही लक्ष्य, सही दिशा आर सही गति के साथ जीना उपलब्धियो के साथ जीना ह। दृष्टि सही नहीं हागी ता सही लक्ष्य का निधारण केसे होगा? लक्ष्य निधारित किए विना सही दिशा म पस्थान की सभावना ही क्षीण हा जाएगी। लक्ष्य स्पष्ट हा गया, किन्तु दिशा उलटी हो गइ तो लक्ष्य की दूरी कैसी सिमटेगी? दिशा सही हे, पर चरण गतिशील नही ह ता घाणी क वल' की तरह किसी एक ही केन्द्रविन्दु की परिक्रमा हाती रहगी।

मनुष्य बहुत समझदार प्राणी ह। वह वल का काल्हू म जातता ह ता उसकी आखा पर पट्टी वाध दता ह। क्या? उसे यह अहसास न हा कि वह निरन्तर एक ही स्थान पर चक्कर लगा रहा ह। पशुविज्ञानिया का अभिमत ह कि यदि वल का उक्त तथ्य ज्ञात हा जाए तो वह उसी समय गश खाकर गिर पडे। मनुष्य की भी यही स्थिति ह। वह निरतर गतिशील रहकर भी लक्ष्य की दूरी का एक इच भी कम नही कर पाएगा यदि उसका दृष्टिकाण सम्यक् नही ह। इसलिए जरूरी ह जीवन म सम्यक् दशन । माक्ष का आरक्षण इसी तत्त्व क सहारे से सभव ह।

सम्यक् दशन क्या ह? जीवन क प्रति सम्यक् दृष्टिकाण का विकास कस हा सकता ह? जीवन का लक्ष्य क्या ह? निधारित लक्ष्य का प्राप्त करन क उपाय क्या ह? लक्ष्य प्राप्ति की दिशा म प्रस्थित हाने पर भी गत्यवराध क्यो हाता ह? क्या अवराध का तोडा जा सकता ह? इत्यादि अनक प्रश्न ह जा जिज्ञासु लागा क मस्तिष्क म काधते रहत ह।

हर चिन्तनशील व्यक्ति आगे बढने के लिए अपने सामने एक आदर्श को प्रस्थापित करना चाहता है। आदर्श, पथदर्शक और पथ की सम्यक् अवधारणा ही सम्यक् दर्शन है। दूसरे शब्दों में विधायक दृष्टिकोण का नाम सम्यक् दर्शन है। जीवन के प्रति दृष्टिकोण को सम्यक् बनाने के लिए एक जीवनशैली के निर्धारण और प्रशिक्षण की अपेक्षा है। सामान्यत हर व्यक्ति स्वस्थ और शक्तिसंपन्न जीवन जीना चाहता है। इस चाह की पूर्ति के लिए सम्यक् दर्शन की नितान्त आवश्यकता है। सम्यक् दर्शन की पहचान कराने के लिए पांच पैमाने निर्धारित किए गए हैं

- क्रोध, अभिमान छलना, लोभ आदि आवेगों का उपशमन।
- लक्ष्य की दिशा में गतिशील रहने का रुझान।
- जीवन को अभिशप्त बनाने वाली मनोवृत्तियों से वैराग्य।
- मन में संवेदनशीलता और व्यवहार में करुणा।
- सबके अस्तित्व में आस्था।

मनुष्य के आन्तरिक व्यक्तित्व को मापने वाले ये पैमाने सम्यक् दृष्टिकोण की कसौटिया हैं तो जीवनशैली को बदलने वाले महत्वपूर्ण घटक हैं। आत्मनिरीक्षण, आत्मपरीक्षण और आत्मनियंत्रण के आधार पर लक्ष्य की दिशा में होने वाले गत्यवरोध को तोड़ा जा सकता है।

मनुष्य अपनी दो आखों से जगत् के स्थूल पदार्थों को देखता है। आखें कभी उसे धोखा दे सकती हैं। आखों देखा सच भी कभी-कभी झूठ प्रमाणित हो सकता है। किन्तु सम्यक् दृष्टिकोण ऐसा तत्त्व है जो अन्तर्दृष्टि के धुंधलेपन को दूर करता है। आइना साफ होता है तो प्रतिबिम्ब भी साफ आता है। इसी प्रकार दृष्टिकोण सम्यक् है तो जीवन का क्रम भी सम्यक् और व्यवस्थित हो सकता है।

४७ साफ आईना . साफ प्रतिविम्ब

स्वस्थ जीवन का आधारभूत तत्त्व ह 'सम्यक् दृष्टिकोण । जीवन जीना आर सम्यक् दशन के साथ जीना— इन दाना स्थितिया म वहुत अन्तर ह। जीते तो सभी ह किन्तु सही दृष्टि, सही लक्ष्य, सही दिशा आर सही गति के साथ जीना उपलब्धिया क साथ जीना ह। दृष्टि सही नही हागी ता सही लक्ष्य का निधारण कस होगा? लक्ष्य निधारित किए विना सही दिशा म प्रस्थान की सभावना ही क्षीण हो जाएगी। लक्ष्य स्पष्ट हा गया, किन्तु दिशा उलटी हा गइ ता लक्ष्य की दूरी कसी सिमटगी? दिशा सही ह, पर चरण गतिशील नही ह तो 'घाणी क वल' की तरह किसी एक ही केन्द्रविन्दु की परिक्रमा हाती रहगी।

मनुष्य वहुत समझदार प्राणी हे। वह वल का कोल्हू म जातता ह ता उसकी आखा पर पट्टी वाध दता ह। क्या? उस यह अहसास न हो कि वह निरन्तर एक ही स्थान पर चक्कर लगा रहा ह। पशुविज्ञानिया का अभिमत ह कि यदि वल का उक्त तथ्य ज्ञात हा जाए ता वह उसी समय गश खाकर गिर पडे। मनुष्य की भी यही स्थिति ह। वह निरतर गतिशील रहकर भी लक्ष्य की दूरी का एक इच भी कम नही कर पाएगा यदि उसका दृष्टिकाण सम्यक् नही ह। इसलिए जरूरी ह जीवन म सम्यक् दशन। माक्ष का आरभण इसी तत्त्व क सहार से सभव हे।

सम्यक् दशन क्या ह जीवन क पति सम्यक् दृष्टिकाण का विकास कैसे हा सकता ह? जीवन का लक्ष्य क्या ह? निधारित लक्ष्य का प्राप्त करन क उपाय क्या ह? लक्ष्य प्राप्ति की दिशा म प्रस्थित हान पर भी गत्यवराध क्यो हाता ह? क्या अवरोध को तोडा जा सकता ह? इत्यादि अनक प्रश्न ह जो जिज्ञासु लागा क मस्तिष्क म काधत रहत ह।

हर चिन्तनशील व्यक्ति आगे वढने के लिए अपन सामन एक आदश को प्रम्थापित करना चाहता है। आदश, पथदशक आर पथ की मम्यक् अवधारणा ही सम्यक् दशन है। दूसरे शव्दा मे विधायक दृष्टिकाण का नाम सम्यक् दशन है। जीवन के प्रति दृष्टिकाण को सम्यक् वनाने के लिए एक जीवनशली के निधारण ओर प्रशिक्षण की अपक्षा है। सामान्यत हर व्यक्ति स्वस्थ ओर शक्तिसपन्न जीवन जीना चाहता है। इस चाह की पृति क लिए सम्यक् दर्शन की नितान्त आवश्यकता है। सम्यक् दशन की पहचान कराने के लिए पाच पेमाने निधारित किए गए ह

- क्रोध, अभिमान, छलना, लोभ आदि आवगो का उपशमन।
- लक्ष्य की दिशा मे गतिशील रहन का रुझान।
- जीवन को अभिशप्त वनान वाली मनोवृत्तिया से वराग्य।
- मन मे सवेदनशीलना ओर व्यवहार म करुणा।
- सवके अस्तित्व म आस्था।

मनुष्य क आन्तरिक व्यक्तित्व को मापने वाले ये पमाने सम्यक् दृष्टिकाण की कसाटिया ह तो जीवनशली का वदलान वाले महत्वपूण घटक ह। आत्मनिरीक्षण, आत्मपरीक्षण और आत्मनियत्रण के आधार पर लक्ष्य की दिशा म होन वाले गत्यवराध को ताडा जा सकता ह।

मनुष्य अपनी दा आखो स जगत् के स्थूल पदार्थो का दखता है। आख कभी उस धाखा द सकती ह। आखो देखा सच भी कभी कभी झूठ प्रमाणित हा सकता है। किन्तु सम्यक् दृष्टिकोण एसा तत्त्व ह, जा अन्तदृष्टि क धुधलेपन को दूर करता ह। आइना साफ होता है ता प्रतिविम्व भी साफ आता ह। इसी प्रकार दृष्टिकोण सम्यक् है तो जीवन का क्रम भी सम्यक आर व्यवस्थित हो सकता है।

४८ सन्यास परम्परा और ज्ञान की धारा

भारतीय सस्कृति म सन्यास की परम्परा बहुत गरिमापूर्ण रही है। इसे जीवन क उदात्तीकरण की प्रक्रिया माना गया ह। साधारण स साधारण और महान्-स महान् सभी व्यक्तियो क लिए सन्यास का रास्ता मुक्त रखा गया ह। आश्रम व्यवस्था के अनुसार इस जीवन का एक अपरिहार्य हिस्सा माना गया ह। जैन परपरा मे सन्यास क लिए जीवन क सान्ध्यकाल तक प्रतीक्षा करन का विधान नही ह। उपनिषद कहत ह कि जिस दिन विरक्ति हो, उसी दिन प्रव्रज्या क पथ पर अग्रसर हो जाना चाहिए। बौद्धधम मानता ह कि कुछ समय क लिए ही सही जीवन म एक बार सन्यास लेना आवश्यक ह।

जनधम म सन्यास की कल्पना अन्य परम्पराओ स बहुत भिन्न है। व्यक्ति ससार म रह, पर ससार उसके मन म न रहे, यह सन्यास की एक परिभाषा ह। घर, परिवार और परिग्रह का त्याग कर एक अकिचन मुनि का जीवन जीना भी सन्यास ह। इस परिभाषा क अनुसार मुनि अत्यन्त सीमित साधना से जीवनयापन करता ह और अपना पूरा जीवन धम, अध्यात्म या मानवता की सेवा मे समर्पित करक रहता है। एसे व्यक्ति समाज एव राष्ट्र क गारव होत ह और सब प्रकार से निश्चिन्त होकर विकास की नई खिडकिया खोलत ह।

ससार म जितने विशिष्ट व्यक्ति हुए ह, उनम सन्यासियो की एक लम्बी सूची ह। ज्ञान के अपूव स्रोत खोलन वाल सन्यासी ही हुए ह। भद्रबाहु हो चाह उमास्वाति जिनभद्र हो या हरिभद्र। इस श्रेणी स अनक व्यक्तित्व जुड हुए ह। उनक द्वारा बहाई गई ज्ञानधारा म हम आज भी अभिष्णात हो रह ह। ज्ञान और चरित्र की उज्ज्वल आभा को दख इस दिशा म आकषण होना स्वाभाविक ह। किन्तु एसा लगता ह कि प्रवाह उलटा बह रहा ह। युवा

पीढ़ी के लोगों की अध्यात्म या संन्यास के क्षेत्र में रुचि कम हो रही है या समाप्त हो रही है। उन्हें अर्थ ही अर्थ दिखाई दे रहा है। अर्थ जीवनयापन का साधन है, यह कोई नई बात नहीं है। मनुष्य अर्थ के बिना भी जी सकता है, अच्छे ढंग से जीवनयापन कर सकता है। यह विलक्षण अवधारणा है। इसके द्वारा संयम, त्याग या संन्यास के पथ पर गति होती है। इस ओर से आंख मूंद लेना देश के हित में कैसे होगा?

मनुष्य अर्थ के अर्जन और संग्रह की स्पर्धा में खड़ा है। इस स्पर्धा में कोई भी खड़ा हो सकता है। पर परिग्रह के विसर्जन की स्पर्धा में कौन खड़ा हो सकता है? एक सेठ ने अभूतपूर्व दान देने का निर्णय लिया। उसने सोने की चौकी बनवाई। उस पर हीरे मोती सजाए। एक ब्राह्मण को आमंत्रित कर सेठ बोला— ब्राह्मण देवता! यह चौकी मैं आपको देता हूं। ऐसा दान कहीं देखा है आपने? यह बात सुन ब्राह्मण का स्वाभिमान जागा। उसने अपनी जेब से दो रुपए निकाले। उस चौकी पर रख और कहा—'मैं इस चौकी का विसर्जन करता हूं, त्याग करता हूं। सेठ साहब! आपने ऐसा त्याग कहीं देखा है?' सेठ का सिर लज्जा से झुक गया। इस प्रसंग में 'आयारो' का सूक्त आंखों के सामने आ जाता है—अत्थि सत्थं परेण परं, णत्थि असत्थं परेण परं—हिंसा में परंपरा चलती है। अहिंसा में कोई परंपरा नहीं है। हिंसा हो या परिग्रह, उसमें होड़ चल सकती है। अपरिग्रह में होड़ नहीं चलती। अपरिग्रह का मार्ग ही संन्यास का मार्ग है।

संन्यास न पलायन है और न रूढ़ि है। यह एक साहसिक अभियान है। इस अभियान के लिए घर का त्याग कर चलने वाले कुंठा, तनाव, हीनभावना, असंतोष आदि युगीन बीमारियों से मुक्त रहते हैं। उनके सामने ये समस्याएं क्यों नहीं रहतीं? अनुसंधान किया जाए तो कुछ कारण स्पष्ट हैं। तनाव, असंतोष आदि का कारण है—इच्छाओं का विस्तार, एषणाओं का विस्तार और संग्रह की धुन। संन्यास का पथ अनिच्छा, अनेषणा और असंग्रह की ओर ले जाने वाला है। इस पथ पर बढ़ने वाले युगीन बीमारियों से आक्रान्त क्यों होंगे?

अध्यात्म भारतीय संस्कृति का आधार है। इसे सुरक्षित रखने के लिए प्रयत्नपूर्वक संन्यास की परंपरा को सुरक्षित रखने की अपेक्षा है।

सन्यास की परम्परा का लोप देश के दुर्भाग्य का सूचक है। शास्त्रों में बताया है कि मुनि सारे ससार को अभय देने वाला होता है। एक मुनि की हत्या अनन्त जीवों की हत्या के बराबर है। वह देश सौभाग्यशाली होता है, जहा अहिंसा, अपरिग्रह आदि महाव्रतों का पालन करने वाले सन्यासी साधना करते हैं। सन्यास-परपरा की महत्ता को ध्यान में रखकर इसकी सुरक्षा एव अभिवृद्धि के लिए सलक्ष्य अभिक्रम किया जाए तो भावी खतरे से बचा जा सकता है।

४६ सापेक्षता है सजीवनी

भगवान् महावीर ने ढाइ हजार वप पहले सापेक्षता का सिद्धान्त दिया। उन्हाने कहा—'वम्तु म अनन्त धम होते है। वे सव धर्म सापेक्ष रहकर ही अपनी उपयोगिता प्रमाणित कर सकते ह। व्यक्ति भी अनन्त धर्मो का समवाय है। उसमे विरोधी युगलो की सत्ता ह। वह सापेक्षता के सिद्धान्त को समझ ले तो उसके जीवन मे कहीं कोइ उलझन नही आ सकती। सामूहिक जीवन म तो सापेक्षता क विना एक कदम उठाना भी कठिन है।' भगवान् महावीर का यह सिद्धान्त उस समय प्रासगिक था। आज उसकी प्रासंगिकता वहुगुणित होती जा रही ह।

परिवार, पार्टी, सघ, सस्थान कोइ भी समूह हो, उसके सदस्य जितने सापेक्ष रहगे, सगठन उतना ही मजबूत होगा। आज चारो ओर विखराव की स्थिति है। परिवार बिखर रहे है। दल टूट रहे ह। धर्मसघो मे एकरूपता नहीं है, सस्थाना मे व्यवस्थाए ठीक नही है। कारण क्या है? अनेक कारण हो सकते है। निरपेक्षता सबस वडा कारण है। हम पीया, हमारा वल पीया, अव चाहे कुआ ढह पडे—सामूहिक चेतना मे यह कसी मनोवृत्ति? यदि हमारा पडोसी दु खी है तो क्या उसका प्रभाव हम पर नही होगा? व्यक्ति की स्वाथ-चेतना को जव तक पराथ या परमाथ की दिशा नहीं मिलेगी, वह सापेक्ष होकर नहीं जी पाएगा।

एक ईर्ष्यालु व्यक्ति अपने पास-पडोस म किसी का विकास देखना नहीं चाहता था। उसकी यह आकाक्षा थी कि उसका कोइ भी पडोसी किसी भी क्षेत्र मे उससे आगे न बढे। एक वार उसने किसी देवी की आराधना की। दवी प्रसन्न हुइ। पर उसने एक शत रखी कि वह अपने लिए जो कुछ चाहगा उसके पडोसी का उससे दुगुना मिलगा। एक मकान एक खत, एक

कार आदि उसने मागा। उसे मिला। किन्तु पडोसी की सपदा दुगुनी हो गई। यह बात उसके लिए असह्य थी। पडोसी का सुख-चेन छीनने के लिए उसने देवी से एक वरदान मागा—'मेरी एक आख फूट जाए।' उद्देश्य क्या था इस वरदान का? पडोसी की दोनो आख ज्योतिविहीन हो जाए। कितनी निरपेक्षता! कितनी क्रूरता! निरपेक्ष व्यक्ति जितना क्रूर होता है, सापेक्ष व्यक्ति कभी नहीं हो सकता।

परिवार, पार्टी या सघ मे जिन व्यक्तियो को अनपेक्षित समझा जाता है, उनमे कोई कमी हो सकती है। पर इस ससार मे पूर्ण कौन है? यदि प्रमाद करने वाले लोगो के अस्तित्व को अस्वीकार कर दिया जाएगा तो इस धरती पर बचेगा कौन?

स्खलित स्खलितो वध्य, इति चेन्निश्चिता भवेत्
द्वित्रा एव हि शिष्येरन्, बहुदोषा हि मानवा॥

जो-जो स्खलना करे, वह वध्य है, यह बात निर्णीत हो जाए तो इस धरती पर दो-तीन व्यक्ति ही सर्वथा निर्दोष होकर बच पाएगे। क्योकि मनुष्य गलतियो का पुतला है। बहुत सभलकर चलने पर भी कही न कही स्खलना हो जाती है।

भारतीय संस्कृति सापेक्षता की संस्कृति है। यहा वयस्क सन्तान माता-पिता के साये मे रहना चाहती है और उनके वृद्ध हो जाने पर भी उनकी सेवा को अपना कर्तव्य मानती है। इसी प्रकार माता पिता योग्य बच्चो की तरह अयोग्य और अपाहिज सन्तान पर भी अपना ममत्व उडेलते रहते है। यही तो सापेक्षता है। जो परिवार, दल और सम्प्रदाय सापेक्षता की डोर मे बधे रहेगे, उनके अस्तित्व पर कभी खतरे के बादल नहीं मडराएगे। जहा सापेक्षता होगी, वहा क्रूरता नहीं आ सकेगी। जहा सापेक्षता होगी, वहा केवल स्वार्थवृत्ति का विकास नहीं होगा। जहा सापेक्षता होगी, वहा नीरसता नहीं होगी। मानसिक कुठा घुटन और टूटन के इस युग मे सापेक्षता ही वह सजीवनी है जो व्यक्ति को आत्मतोष दे सकती है और समूह मे समायोजित कर सकती है।

५० सस्कृति तव और अव की

एक समय था, जब वच्चा का नीद स जगाने क लिए पभाती गाइ जाती थी। इस युग की मा वच्चे का जगाने के लिए कहती हे--गेट अप, हरि अप, वाथ टाइम, स्कूल टाइम आदि। मत्र जाप आर भगवत् स्मरण की प्ररणाए लुप्त होती जा रही हे। पूज्यजना ओर गुरुजना क सामने हाथ जोडन और उनके चरणो मे झुककर प्रणाम करने की परम्परा समय की परतो के नीचे दब रही हे। हाथ मिलाना, टा-टा वाय-वाय की सस्कृति पनप रही ह। ऐसा करन वाल लोग अपने आपका आधुनिक मानते ह। ऐस लोगा म नवीनता का वढना हुआ व्यामोह एक घुन हे, जो धीरे धीरे देश की सास्कृतिक विरासत का खाखला कर रहा हे।

प्राचीनता ओर नवीनता के बीच चल रहा सघप नया नही हे। पर यह स्थिति सुखद नही हे। काइ भी परम्परा या वस्तु प्राचीन होने क कारण अप्रयाजनीय बन जाए, यह यान्तिक वात नही ह। नवीन हाने के कारण हर परम्परा आर वस्तु ग्राह्य हे, यह चिन्तन वुद्धिमत्तापूण नही लगता। हमार वार म कहा जाता ह कि हम नवीनता के पृष्ठपोपक ह। किसी दृष्टि स यह वात ठीक भी हे। किन्तु जिन प्राचीन परम्पराओ की उपयागिता हे, जो प्राचीन वस्तुए काम की ह, उनकी उपेक्षा को हमने कभी उचित नही समझा। हम कभी नही चाहते कि प्राचीन उपयोगी तत्त्वा के स्थान पर नइ वातो को प्रतिष्ठित किया जाए।

विनय और अनुशासन भारतीय विद्या के मूल तत्त्व ह। अध्यात्म विद्या इनक विना आगे चलती ही नही। हमारे शास्त्र इन तत्त्वा स भरे पडे हे। शास्त्रा के सत्य जब तक जीवन स नहीं जुडते, उपयागी नही वन सकते। लगता ऐसा हे कि इन्हे जीवन से जोडन क स्थान पर जीवन स पाछा जा

रहा है। इनके पल्लवन की ओर ध्यान ही कम जा रहा है। एक विद्यार्थी की स्कूल से कॉलेज तक की यात्रा में एम संस्कारों का कितना विकास हो पाता है? इस प्रश्न को सही ढंग से उत्तरित करना बहुत कठिन है। विद्यार्थी को प्रारम्भ से ही विनय और अनुशासन के संस्कार उपलब्ध होते रहें तो उनकी जीवनशैली में बदलाव या सुधार हो सकता है।

पदार्थ, शिल्प, कला आदि के क्षेत्र में मनुष्य का दृष्टिकोण बदला है। अब वह प्राचीन वस्तुओं को आधुनिकता और फैशन के नाम पर स्वीकार कर रहा है। एक समय था, जब आम आदमी ग्राम्यजीवन जीता था। कालान्तर में सभ्यता को विकास की पगडंडियों पर धकेला गया। वेशभूषा बदली। आभूषण बदले। खाद्यपदार्थ बदले। जीवन के तौरतरीके भी बदले। नवीनता के व्यामोह में जो चीज स्वीकृत हुई उनसे मन ऊब गया। फिर उसी दिशा में पांव बढ़ चले। इसे प्रगति कहा जाए या प्रतिगति? काश! भारत अपनी सांस्कृतिक विरासत की सुरक्षा कर पाता। पर इस विषय में सोचे कौन? व्यापारी अपने लाभ की बात सोचते हैं। एजेन्ट अपना हित देखते हैं। नए लेबल और नए नाम से आकृष्ट होकर मनुष्य अपने अतीत में डग भर रहा है।

विनय और अनुशासन—जीवन के शाश्वत मूल्य हैं। इनकी उपेक्षा जीवन की उपेक्षा है। विद्यार्थियों में बढ़ती हुई उच्छृंखलता, परिवारों में हो रहा बिखराव, समाज में बढ़ता हुआ दिखावा और देश में पांव फैला रही अराजकता एक धुंधले भविष्य का संकेत है। यदि मनुष्य चाहता है कि उसके अतीत से वर्तमान बेहतर हो और वर्तमान से भविष्य बेहतर हो तो उसे विनय और अनुशासन को जीवन के साथ जोड़ना होगा। तेरापंथ धर्मसंघ का मर्यादा-महोत्सव प्रतीक है विनय और अनुशासन का। इनके आधार पर ही संगठन का प्रासाद खड़ा रह सकता है, दीर्घजीवी बन सकता है। वस्त्रों और आभूषणों की तरह विनय और अनुशासन के संस्कार भी जीवन में लौट आएं तो युग को नई दिशा मिल सकती है।

५१ मन्दिर की सुरक्षा आदर्शों का बिखराव

राम मदिर और बाबरी मस्जिद को लेकर देश के सामने एक भीषण समस्या है। भारतीय लोकजीवन की आस्था के केन्द्र हैं मर्यादा पुरुषोत्तम राम। जन्मभूमि और मन्दिर पार्थिव तत्त्व है। राम के आदर्श सर्वथा अपार्थिव हैं। देखना यह है कि समस्या पार्थिव की है या अपार्थिव की? पार्थिव का अपना मूल्य है, पर अपार्थिव के सामने वह नगण्य-सा है। पार्थिव मन्दिर की सुरक्षा में राम के अपार्थिव आदर्श खण्ड-खण्ड होकर बिखर जाए यह किसी भी रामभक्त के लिए स्वीकार्य नहीं होना चाहिए।

राम प्रागऐतिहासिक महापुरुष है। रामायण पढ़ने वाले और सुनने वाले जानते हैं कि अयोध्या के कण कण में राम रमे हुए थे। जन्म बहुत छोटे-से स्थान में होता है। पर उस गाव या नगर का पूरा क्षेत्र जन्मभूमि कहलाता है। अयोध्या में राम का जन्म किस स्थल पर हुआ? यह विवाद का विषय हो सकता है। पर अयोध्या राम की जन्मभूमि है, यह तथ्य निर्विवाद है। आज जो स्थान विवादास्पद बना हुआ है, वहा मंदिर कब बना और कब टूटा? शोध का विषय है। कहा जाता है कि बाबर ने वहा मस्जिद बनवाई। प्रश्न यह है कि जिस समय मस्जिद बनी, क्या उस समय उसके प्रतिरोध में आवाज उठी थी? यदि नहीं तो बाद में यह प्रश्न कब और क्यों उठा? ऐतिहासिक तथ्यों की प्रामाणिक प्रस्तुति आवश्यक है।

किसी भी इतिहास की ईमानदार खोज में समय लगता है। उसके लिए प्रतीक्षा करनी पडती है। वर्तमान की जो स्थिति है, लोगों का धैर्य टूट गया। वे विचलित हो गए। अधिक कालक्षेप का सहना संभव नहीं रहा। जनता का रुख आक्रामक हो गया। सौहार्द की बढ़ती हुई संभावनाओं

पर एक ब्रेक लग गया। भावनाओं के उफान पर सद्भाव के छींटे डाल गए। कार सेवा रुक गई या स्थानान्तरित हो गई। एक विस्फोट होते-होते रुक गया।

ध्यान से देखा जाए तो ऐसे लोगों की कमी नहीं है, जो संघर्ष में रस लेते हैं। वे देश को आमने सामने खड़ा करने पर तुले हुए हैं। ऐसी स्थिति में नेतृत्व की परीक्षा होती है। नेतृत्व करने वालों का दिमाग शान्त और संतुलित होता है तो वे स्थिति को हाथ से निकलने नहीं देते। भारतीय संस्कृति दमन और रक्तपात की संस्कृति नहीं है। इसमें आपसी प्रेम, भाईचारा, सौहार्द, समन्वय, सहिष्णुता आदि तत्त्वों का महत्त्व है। इस संस्कृति को ऐसे ही व्यक्तियों की अपेक्षा है, जो समय पर गहरी सूझबूझ से काम कर आई आंधी टाल दें।

कुछ लोग बार-बार न्यायालय की बात उठा रहे हैं। न्यायालय के फैसले की अपनी गरिमा है। पर क्या दोनों पक्ष मिल बैठकर कोई रास्ता नहीं निकाल सकते? आपसी वार्तालाप से जो समाधान निकलेगा, उसमें हार-जीत की पैंतरेबाजी नहीं होगी। वहां तो प्रेम का ऐसा दरिया बहेगा, जो भीतर के सारे कल्मष को धो-पोंछकर साफ कर देगा।

समझौते की पृष्ठभूमि में एक पक्ष का यह सोचना होगा कि उसके साथ कभी कुछ भी हुआ हो, वह अपनी निष्ठा में छेद नहीं होने देगा। जिन ऊंचे आदर्शों में उसका विश्वास है, उनको वह कभी विस्मृत नहीं होने देगा। 'शठं शाठ्यं समाचरेत्' यह नीति चलती होगी। पर धर्म के क्षेत्र में नहीं चलनी चाहिए।

दूसरे पक्ष के लिए चिन्तनीय बिन्दु यह है कि जिस धरती पर वह रहना चाहता है, अपनी पीढ़ियों को रखना चाहता है, उसके प्रति अपनपन का भाव रखना होगा। बीज अपनी अस्मिता को मिटाता है, तभी धरती में अपनी जड़ जमाता है। यदि वह अपने अस्तित्व को बचाने का प्रयास करेगा तो विस्तार नहीं पा सकेगा।

जो लोग समझौते के लिए माध्यम बन रहे हैं, उनका दायित्व है कि वे दोनों पक्षों को विश्वास में लेकर ऐसा रास्ता निकालें, जिससे भारतीय संस्कृति का गौरव अक्षुण्ण रह सके। हमारा विश्वास है कि देश की जैसी

सम्कृति ओर परपरा रही हे, अवाछनीय स्थिति टलगी और समस्या का समाधान होगा। अपक्षा एक ही ह कि इसक लिए अनकान्त पद्धति का आलम्बन लिया जाए।

५२ खिलवाड मानवता के साथ

दो प्रकार की आपदाए हाती ह–प्राकृतिक आर कृत्रिम। अतिवृष्टि, अनावृष्टि, भूकम्प, बाढ, तूफान, ज्वालामुखी म विस्फोट आर कुछ जाननेवा बीमारिया प्रकृति क असन्तुलन स होन वाली आपदाए ह। मनुष्य क उवर मस्तिष्क ने इन आपदाआ पर विजय पान क उपाय खाजे ह, पर उनका प्रतिशत बहुत कम है। प्रकृति क आगे मनुष्य भी अपने घुटने टिका देता ह। मोसम विज्ञान की पर्याप्त सूचनाआ के बाद भी वह अपा आप म विवशता का अनुभव करता हे, प्राकृतिक खतरो को टाल नहीं सकता। इसे निसग या नियति कुछ भी माना जा सकता हे।

कृत्रिम आपदाओ के तीन रूप ह– तियच योनि के जीव मनुष्य जाति के लिए अनेक प्रकार की आपदाए उपस्थित कर देते ह। कभी कभी दय प्रकोप से दु सह मुसीबते खडी हो जाती ह। कुछ आपदाए स्वय मनुष्य क द्वारा सरजी जाती ह। अपने हाथो अपने पावा पर कुल्हाडी चलान की बात कितनी उपहासास्पद लगती हे। काइ व्यक्ति एसा करता ह ता उसकी गणना मूर्खो की श्रेणी म होती ह। इस प्रकार का आचरण किसी का सुचिन्तित आचरण नहीं होता। चिन्तन के अभाव म अनायास एसा घटित हो जाता हे। किन्तु सुचिंतित ओर सुनियोजित रूप स कोइ भी मनुष्य एसा काम करता हे, उसे क्या कहा जाए? बिना किसी विशप उद्देश्य क व्यापक स्तर पर की जाने वाली तोडफोड या नरसहार को क्या माना जाए? जा मनुष्य एसा षड्यन्त्र करता ह उसे किस कोटि म रखा जाए? देवत्व या मनुष्यत्व को तो उस पर छाया ही नहीं ह। उसे तियच या राक्षस कहने म भी सकाच होता ह। एसे लोगा के बार म कवि की कल्पना कितनी यथाथ हे–

एके सत्पुरुषा परार्थघटका स्वार्थं परित्यज्य ये,
सामान्यास्तु परार्थमुद्यमभृत स्वार्थाविरोधेन ये।
तेऽमी मानुषराक्षसा परहितं स्वार्थाय निघ्नन्ति ये,
ये तु घ्नन्ति निरर्थकं परहितं ते के न जानीमहे ॥

इस ससार मे स्वार्थ का परित्याग कर परोपकार करने वाले व्यक्ति पुरुषोत्तम होते है। जो स्वार्थ की क्षति किए विना दूसरो का हित सम्पादन करते है, वे सामान्य जन होते है। जो लोग अपने स्वार्थ के लिए औरो के हितो का विघटन करते है, वे मनुष्य के शरीर मे राक्षस है। किन्तु जो व्यक्ति बिना ही प्रयोजन दूसरो के हितो पर कुठाराघात करते है, उनको किस सम्बोधन से सम्बोधित करें, हमे ज्ञात नहीं है।

१२ और १६ मार्च ९३ को क्रमश बम्बई और कलकत्ता मे हुए बम-विस्फोट क्या राक्षसी मानसिकता से भी अधम मनोवृत्ति के परिचायक नही है? बम्बई मे व्यवसाय के प्रमुख केन्द्रो और कलकत्ता के बड़े बाजार मे जिस बड़े पैमाने पर बम-विस्फोटो की तथा अन्य कई क्षेत्रो मे बडी मात्रा मे बम उपलब्ध होने की सूचनाएं मिल रही है, एक सुनियोजित षड्यन्त्र की संभावना को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। इन विस्फोटो से किस व्यक्ति या वर्ग का कौन-सा स्वार्थ सधा, समझ मे नहीं आता।

निर्माण की कोई भी बडी योजना इतनी व्यवस्थित और गोपनीय ढंग से होती है, कही भी सुनने को नहीं मिला। ध्वस की इतनी बडी योजना मे कितने व्यक्ति सम्मिलित हुए, कितना समय लगा, फिर भी किसी को उसकी भनक तक नही मिली। क्या गुप्तचर विभाग की सभी एजेंसिया निश्चिन्त थीं? क्या वे किसी अन्य अधिक महत्त्वपूर्ण खोज मे सलग्न थी? आज जनता की जुबान पर कुछ ऐसे प्रश्न है, जो बहुत गभीर चेतावनी देने वाले है। बम्बई और कलकत्ता के ये हादसे इमारतो और मनुष्यो के विनाश की ही नही, मानवता के विनाश की कहानी कह रहे है।

बम विस्फोटो की यह साजिश देश या विदेश के किसी भी व्यक्ति की हो, उसे राक्षस कहना भी कम लगता है। ऐसे व्यक्ति मनुष्यता के सिर पर कलंक का जो टीका लगाते है, क्या उसे कभी पोछा जा सकेगा? प्रश्न बम्बई, कलकत्ता या हिन्दुस्तान का नही है। प्रश्न है ऐसी क्रूरतापूर्ण साजिशो का।

मनुष्य कम से-कम इतना पतित तो न हो कि वह अकारण ही ऐसी विनाशलीला रच दे जिससे सवाद ही ससार को हिलाकर रख दे। इस कार्य में सलग्न व्यक्ति इतना-सा तो सोच ले कि यह हादसा उनके साथ होता तो । मेरा विश्वास है कि ऐसा सवेदन ही मनुष्य की दिशा को कोई वांछित मोड दे सकेगा।

५३. ध्वस की राजनीति

ध्वस ओर निमाण—दाना आवश्यक हे। ध्वस के विना नए निमाण की सभावनाए कम हा जाती ह। पर दखना यह हे कि ध्वस किसका और कहा हो? निमाण क साथ भी कुछ अपेक्षाए जुडी हुइ ह। मनुष्य म दा प्रकार के भाव होत ह—विधायक आर निपेधात्मक। रचनात्मक दृप्टिकोण, पाजिटिव थिंकिग या विधायक भाव निमाण क प्रतीक ह। विघटन की मनोवृत्ति, नेगेटिव एटिट्यूड या निपधात्मक भाव ध्वस के प्रतीक हे। निमाण आर ध्वस क लिए उत्पाद ओर विनाश शब्द भी प्रयुक्त होत ह। ध्राव्य तत्त्व उत्पाद ओर विनाश का सहचरी हे। वस्तु की सत्ता त्रकालिक ह। वह निर्माण क वाद ही नहीं, ध्वस क वाद भी अपन अवशप छाडती ह।

भारतीय सस्कृति उदारवादी सस्कृति हे। वह सवको आत्मसात् करना जानती हे। उसन अपनी धरती पर अन्य सस्कृतिया का वद्धमूल होन का अवसर दिया ह। भारतीय दाशनिको ने नास्तिक मत को भी एक स्वतत्र दशन के रूप मे मान्यता दकर प्रमाणित कर दिया कि उनका चिन्तन कितना व्यापक ह ओर दृप्टिकोण वितना स्पप्ट ह। भारतीय ऋपि-मुनियो ने तो चार डाकू जसे असामाजिक तत्त्वा की वृत्तियो का परिप्कार कर उनका भी समाज के साथ जुडकर जीने का अधिकार दिया हे। अजुनमालाकार, दृढप्रहारी, रत्नाकर, रोहिणय जेस दुदान्त हत्यारे, डाकू ओर चोर सही दिशावोध पा अपना रास्ता वदल सन्त-सन्यासी वन गए। इतिहास के ये प्रसग भारतीय सस्कृति की उदारता का ही उजागर करने वाल ह।

मनुष्य कुछ भी करता हे, उसके दो रूप होते ह—क्रियात्मक आर प्रतिक्रियात्मक। मनुष्य अपन स्वतत्र चिन्तन से क्रिया करे, यह स्वाभाविक स्थिति हे। किन्तु जव वह प्रतिक्रिया मे फस जाता हे, करणीय आर अकरणीय

का विवेक खो देता ह। अयाध्या म विवादित ढाच को लेकर जो कुछ हुआ, क्या वह प्रतिक्रिया नही हे? उसस किस लाभ मिल रहा ह? माना कि किसी विधर्मी ने आपकी धामिक भावनाआ का आघात पहुचाया, आपकी सास्कृतिक विरासत को हथियाने का प्रयास किया। पर इसम भूल किसकी रही? आपने अपने आपको दुर्बल क्या होन दिया? आपकी सामाजिक ओर राष्ट्रीय चतना सुपुप्त क्या रही? भूल अपनी आर दापारोपण दूसरो पर, यह भी प्रतिक्रियावादी मनावृत्ति हे। इस वृत्ति का वदल विना कोइ भी समाज या राष्ट्र शक्तिसपन्न नहीं वन सकता।

विचारभेद रुचिभेद आर आस्थाभेद के कारण किसी भी व्यक्ति या राष्ट्र के वारे मे विवाद की सभावना को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। विवाद का सुलझाने के भी उपाय ह। समन्वय, समर्थाता आदि उपाया को काम म लिया जाए तो किसी भी विवाद को टिकने के लिए जमीन नहीं मिल सकती। किन्तु जहा विवादग्रस्त विषय म आग्रह का सहारा लिया जाता ह, वहा आक्रोश, ध्वस ओर हत्याआ का अन्तहीन सिलसिला शुरू हो जाता हे। एक भूल के साथ अनक भूला का इतिहास जुडता ह। इससे वतमान के भाल पर कलक का जो टीका लगता हे, उसे अनागत क अनक प्रयत्न भी पाछ नही सकते। जव तक उस ध्वस के अवशेष रहेगे, लोग कहेगे—अमुक लोगा ने ध्वस का इतिहास वनाया। अतीत मे किसी के द्वारा भी ऐसा अवाछनीय प्रयत्न हुआ, शिष्ट, शालीन एव चिन्तनशील व्यक्तिया द्वारा उस मान्यता कव मिली? ऐसी घटना के वारे म विज्ञ लोगो की राय कभी सकारात्मक नही होती। फिर भी किसी ने कोई भूल कर दी तो गडे मुर्दे उखाडने से किसको लाभ होगा?

भगवान् महावीर, वुद्ध, मुहम्मद साहव, गुरुनानक आदि कितने महापुरुप हो गए। उन्हान अपने अनुयायिया को शान्ति आर सहिष्णुता का वोधपाठ दिया। क्या वे कहानिया वाग्विलास मात्र वनकर रह गइ ह ? आज एक विवादित ढाचे का ध्वस्त करन की प्रतिक्रियास्वरूप पूर विश्व मे मदिर तोडे जा रहे ह। क्या इस तोड़फोड का कोइ आचित्य ह? हिन्दुस्तान मे जो घटना घटी उसकी प्रतिक्रिया पाकिस्तान ओर वगला दश म क्यों हुइ? पाकिस्तान या वगला देश मे जो हुआ, उसका अनुकरण भारत म रहने वाल मुसलमाना

ने क्या किया? जिस धरती पर हिन्दू और मुसलमान भाई-भाइ का रिश्ता जोड़कर रह रह ह वहा नफरत आर दुश्मनी की वारदाता से किसका हित सधगा? किसी को ध्वस ही करना हे ता बुराइया, बुरी प्रवृत्तियो और बुर चिन्तन का किया जाए। मदिर, मस्जिद आदि धमस्थाना का सम्बन्ध मनुष्य की आस्था क साथ ह। मंदिर आर मस्जिद के निमाण से पहले मनुष्य-मनुष्य के मन म एसी आस्था का निमाण हो, जो ध्वस की राजनीति से उसे बचा सके। क्याकि निर्माण म लाखा वप लग सकत है, जबकि ध्वस के लिए एक पल ही पयाप्त है।

५४. मैत्री के साधक तत्त्व

राष्ट्र समस्याओ स सकुल ह। यह काइ नइ यात नही हे। काइ भी राष्ट्र एसा नही ह, जिसक सामन समस्या न हो। सभवत किसी भी युग म समस्याओ से मुक्त कोइ राष्ट्र रहा ह, इतिहास मे ऐसा उल्लख नहीं मिलता। इसलिए राष्ट्र की समस्याए आदमी का आश्चर्य म नही डालती। एक कुत्ते ने आदमी को काट लिया, यह किसी समाचार-पत्र का सवाद नही बनता। क्योकि कुत्ते आदमी का काटत रहते ह। पर कोइ आदमी कुत्ते को काट खाए तो प्रत्येक समाचार-पत्र इस सवाद को सुर्खियो मे छापेगा।

एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र को कोसता ह, एक प्रान्त दूसर प्रान्त से असतुष्ट हे, एक राजनीतिक दल दूसरे दल की छीछालदर करता हे, ये वात सवके समझ म आन जसी ही ह। किन्तु एक हाथ दूसरे हाथ को काटे, व्यक्ति अपने हाथो अपने पाव पर कुल्हाडी चलाए, स्वय स्वय के विकास म बाधा पहुचाए य वाते चाकाने वाली ह। एसी वात देश के किसी कोने स उठ, सुनने क लिए व्यक्ति चोकन्न हो जाते ह।

देश म जितने राजनीतिक दल ह, उनम अतद्वन्द्व की स्थिति पेदा हो जाए ता उनसे देश का हित केसे सधेगा? कोइ विश्वास कर या नही, आज दश को ऐसी स्थिति का सामना करना पड रहा हे। फिर भी किसी का चिन्ता नही हे। यह चिन्ता तव तक नही होगी, जव तक देश की पूरी जनता के साथ मेत्रीपूर्ण रिश्ते स्थापित नही हाग। अपने भाइ-वन्धुआ, सग-सवधियो ओर परिचितो के साथ मेत्रीपूण सम्व ध होना वडी वात नही हे। पर ससार म किसी को अपना शत्रु नहीं मानना शत्रुतापूण व्यवहार करन वाला के प्रति भी मेत्री की धाराए प्रवाहित करना मनुष्यता का ऊचा आदश हे। इस आदश तक पहुचने क लिए मेत्री की अनुप्रक्षा करनी होगी।

मेत्री का सबध शब्दो तक सीमित नहीं ह। मेत्री की गरिमा व्यवहार की परिधि म केद नही हे। मेत्री का पाधा चित्त की धरती पर अखुआता हे, तब ही आत्मापम्य भाव का विकास हो पाता हे। मेत्री का विकास करन के लिए सात सूत्रो पर ध्यान देना आवश्यक हे—विश्वास, स्वार्थत्याग, अनासक्ति, सहिष्णुता, क्षमा, अभय आर समन्वय।

विश्वास स विश्वास वढता हे। सदेह की कटीली झाडी मे उलझा हुआ विश्वास का वस्त्र फट जाता ह। फटे हुए वस्त्र की सिलाई कितने ही कोशल के साथ की जाए, वह एकरूप नहीं हो सकता। विश्वास की आख म पडी हुई सदेह की फास दिन-रात सालती रहती हे, व्यक्ति का निश्चिन्त होकर जीने नही देती।

मेत्री की बुनियाद म पहली इट हे विश्वास ओर दूसरी इट ह स्वाथत्याग। स्वार्थी व्यक्ति किसी का सच्चा मित्र नही बन सकता। स्वाथ का त्याग वही कर सकता हे, जो अनासक्त होता हे। वस्तु, पद, प्रतिष्ठा आदि की आसक्ति आखा को चुधिया देती हे। अनासक्ति के साथ सहिष्णुता का विकास आवश्यक ह।असहिष्णु व्यक्ति अपने माता-पिता का भी सहन नही कर पाता। उसके लिए मित्र को सहना तो ओर भी कठिन हे। मत्री का पाचवा सूत्र हे क्षमा। सहिष्णुता का सबध अनुकूल एव प्रतिकूल परिस्थितियो के साथ हे जबकि क्षमा का अर्थ ह किसी व्यक्ति के अपराध एव दुर्व्यवहार को पूण रूप स विस्मृत कर देना।

अभय आर समन्वय मत्री रूप स्रोतस्विनी के दा तट ह। इनकी मर्यादा मे ही मेत्री की धारा प्रवहमान रह सकती ह। पारस्परिक भय अकारण दूरी पेदा करता हे। जहा एक-दूसर के विचारो ओर व्यवहारा मे समन्वय नही होता, वहा विग्रह बढ जाता ह। समन्वय शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व का अमोघ मन्त्र हे।

राष्ट्र म जहा-जहा विग्रह, भय, सदह या स्वार्थी मनोभावा की प्रबलता हे, वहा न शाति हा सकती हे, न स्थिरता आ सकती हे और न विकास क नए आयाम खुल सकत ह। विराधी व्यक्तियो या विचारा के साथ मत्रीपूर्ण व्यवहार का सूत्रपात कही स भी हो, उसकी निष्पत्ति निश्चित रूप स राष्ट्र हित मे हागी।

५५. दही का मटका और मेढक

आज राष्ट्र का जेसा वातावरण हे, बहुत लोग निराशा म श्वास ले रहे हे। उन्हे प्रलय की सभावना बढती हुई नजर आ रही हे। उनकी दृष्टि म जमाने की स्थितिया ओर अधिक जटिल होगी। इस सन्दर्भ मे हमारा चिन्तन भिन्न हे। स्थितिया जेसी भी ह, उनको अस्वीकार नही किया जा सकता। यह ससार हे। इसमे उतार-चढाव आते रहते हे। ऐसा कुछ न हो तो ससार ही क्या? जो कुछ हो रहा हे, उसे हम खुली आखो से देख। उस पर तटस्थ समीक्षा कर। अपने दायित्व को समझे ओर जागरूकता के साथ उसके निवाह का प्रयत्न करे।

रात्रि के समय ससार पर अन्धकार का साम्राज्य रहता हे। प्रतिदिन सूरज उदित होता ह। वह अन्धकार को छिन्न भिन्न कर देता हे। काल के अज्ञात बिन्दु से वह निरन्तर पुरुषार्थ कर रहा हे। क्या उसने अन्धकार को पूरी तरह से लील लिया? क्या रात को अधेरा नही होता हे? दिन के साथ रात जुडी हुई हे। सूरज कभी निराश नही होता। फिर मनुष्य के मन पर निराशा का कुहासा क्यो छाए?

राम, कृष्ण, महावीर ओर गाधी के चित्र हमारे सामने हे। इनमे से प्रत्येक महापुरुष ने अपने युग को उजाला से भरने का प्रयास किया। इसी तरह रावण, कस, गोशालक ओर गोडसे के चित्र भी हमारे सामने ह। उन्होने उजालो को ढकने की चेष्टा करके ही विराम नही लिया, उन पर कीचड उछालने की कोशिश भी की। हर युग म विरोधी व्यक्तियो का अस्तित्व रहा हे। हमारी सोच का आधार विधायक हो। हम उन स्थितियो म क्यो उलझे, जो मनुष्य को दीन हीन ओर दुबल बनाने पर आमादा ह?

मानवीय आचरण के सर्वोत्तम प्रतीक ह करुणा और सवेदना। इनके

साथ मनुष्य का शाश्वत सरोकार है। यह सरोकार टूटता ह, तव मनुष्य मनुष्यता स विमुख हो जाता ह। आज की सवस वडी समस्या यही हे । इस युग की युवापीढी अपनी कुंठित महत्त्वाकाक्षा का नया रास्ता देने के लिए अपराध जगत् मे प्रवश कर रही ह। प्रवेश करने से पहल वह स्वय ही नही जानती कि उसकी गति किस ओर हे? वह अपन वड-वुजुर्गो के सामने ऐसी चचा भी नहीं करती, जो उस सही मागदशन द सके। इस गुमराह हो रही पीढी को सभालने की जिम्मवारी उन सव पर हे, जो इसके उज्ज्वल भविष्य की आकाक्षा रखते ह।

ससार म समस्याए वढ रही ह, यह एक यथाथ हे। इसस आख मिचोनी करने मात्र स समस्याओ का दवदवा कम नही होगा। जो ह, उसे स्वीकार करते हुए समाधान खाजना ह। समाधान की खाज शुरू करत ही वह उपलब्ध हा जाए यह अतिकल्पना ह। खोज म सलग्न होने के वाद भी समस्याओ से जूझने की तयारी रखनी ही हागी। दही स भरे हुए मटके मे गिरा मढक लम्वे समय तक हाथ-पाव चलाता ह। इसस दही का मथन हाकर मक्खन निकल आता हे। दही म उसके डूवन की पूरी सभावना रहती है। किन्तु मक्खन पर वह निश्चिन्त हाकर वेठ जाता ह। उसके अस्तित्व को समाप्त करने वाली समस्या का समाधान वह अपने पुरुपाथ से खोजता हे।

मनुष्य का मस्तिष्क मढक से वहुत अधिक विकसित ह। वह समस्याओ का दखकर हताश हो जाए, उन्ही का रोना राता रहे ता समस्याओ की पकड ओर अधिक गहरी हो सकती हे। मनुष्य का दायित्व हे कि वह उनके मूल को खोजे, उन्हे समाहित करने के लिए निरन्तर श्रम करे आर प्रत्येक स्थिति म सतुलन हो सुरक्षित रख। इसी प्रक्रिया से वह अपने आसपास आशा के दीये प्रज्वलित रख सक्ता हे।

५६. परिणाम से पहले प्रवृत्ति को देखे

जीवन केसा होना चाहिए? यह एक प्रश्न ह। प्रश्न नया नही, सनातन हे। प्राचीन युग मे वहुत लोगो के मन को इस प्रश्न ने आन्दोलित किया होगा। वतमान मे ऐसे अनेक व्यक्ति ह, जो इस प्रश्न म उलझ रहे हे। भविष्य म यह स्थिति नही रहेगी, ऐसा कहने के लिए हमारे पास कोई ठोस आधार नही हे।

कुछ लोग जीते हे, पर वे क्यो जीते ह? ओर केसा जीवन जीते ह? इस यात से उन्हे कोई सरोकार नही होता। उन्हे जीना हे, इसलिए वे जीते ह। क्यो और केसे? जेसे प्रश्नो पर सोचने के लिए न तो उनके पास समय हे ओर न वेसी समझ ही विकसित हे। जीना उनकी नियति हे। जीवन का रथ कव, किस दिशा मे आगे वढता ह और कहा जाकर रुकता हे, इस स्थिति से वे वखवर रहते ह। उनको खवर रहती है सुवह से शाम तक दोडधूप की। परिवार की गाडी को आगे खीचने के लिए भाजन, वस्त्र आर मकान की।

कुछ लोग जीते हे एक स्वप्न क साथ जीते हे, एक सकल्प क साथ जीत ह। युग की प्रत्येक सुविधा उनके पेरो तले विछी रहे, यह उनका सपना हे। इस स्वप्न को साकार करने के लिए व चिन्तन करते ह, योजना वनाते हे, योजना को क्रियान्वित करने के स्रोत खोजते ह और पुरुषाथ भी करत ह। उनके जीवन का लक्ष्य होता ह—अधिक से अधिक उपभोग की सामग्री का सग्रह ओर अधिक-से-अधिक भाग। इस लक्ष्य की पूति करते समय वे भूल जाते हे कि सग्रह की सीमा होती ह और भोग की भी सीमा हाती हे। आज तक ससार म कोइ व्यक्ति एसा नही हुआ, जिसन पूरे विश्व का ऐश्वर्य सगृहीत किया हा ओर सभवत एसा व्यक्ति भी नही हुआ, जिसन अपन सगृहीत धन-वेभव का तृप्तिदायक उपभाग किया हा। एसी स्थिति म

जीवन का कोइ ऊचा आर साथक लक्ष्य हा ता व्यक्ति को नइ दिशा मिल सकती ह।

कुछ लोग एस भी होते हे, जा कवल जीन क लिए नही जीते। जीवन क वार म उनकी स्वतत्र सोच हाती हे। वे प्रवाहपाती हाकर नही जीते। उनके सामने लक्ष्य होता हे—भवितुकामिता। व कुछ हाना चाहते ह, कुछ वनना चाहते ह, इसलिए कुछ करना भी चाहते ह। उनकी चाह हथेली पर सरसा उगाने की नही हाती। उनकी कल्पना उतनी ही हाती हे जिसके पखा पर वेठकर सभावना क आकाश मे उडा जा सके। उनका दृष्टिकाण विधायक होता हे। वे हर घटना को उसक सही परिप्रेक्ष्य म दखते ह आर उसस प्ररणा लेते हे। कठिन परिस्थितिया म भी व अपनी आस्था से विचलित नही हात। जिस नीति या सिद्धान्त के आधार पर वे अपन जीवन का तानावाना वुनते ह, उसे किसी स्वाथ की प्ररणा से छिन्न भिन्न नहीं हान देत। उनकी सकल्पनिष्ठा इतनी गहरी होती ह कि वड-वड तूफान भी उसकी जडो को नही हिला सकते।

मनुष्य के जीवन का कोइ साथक लक्ष्य निधारित हा। लक्ष्य की दिशा मे गतिशील उसके चरण कही रुके नही। आस्था का आलाक उसक मन के अधरो को दूर करता रहे। विपरीत परिस्थितिया म भी उसकी सकल्पनिष्ठा फालादी चट्टान वनकर खडी रहे। असयम और अतिभोग की सस्कृति म सयम और भोग पर अकुश रखने की मनोवृत्ति विकसित हो। इस प्रकार की छाटी-छाटी वात जीवन के साथ जुडे, यह अणुव्रत की आकाक्षा ह। जीवन की छाटी छाटी समस्याओ का मुकावला करने के लिए छोट-छाटे सकल्प। छाटी समस्या पर ध्यान नही दिया जाता हे, तव वह वडे आकार म खडी हा जाती हे। अणुव्रत का दशन सूक्ष्म ह। वह विश्वयुद्ध राकन के स्थान पर उस चेतना को वदलना चाहता ह, जा युद्ध की प्ररक हे। वह परिणाम से पहले प्रवृत्ति पर ध्यान देता ह। प्रवृत्ति सही ह तो परिणाम गलत हो ही नही सकता। अणुव्रत की यह सीख जिस मनुष्य क जीवन म उतर गइ 'जीवन कसा हाना चाहिए' इस प्रश्न का उत्तर वह मनुष्य स्वय ही हा सकता हे।

५७ नारी के तीन रूप

आधी दुनिया का प्रतिनिधित्व करने वाली स्त्री कितनी उपेक्षित, शोषित और प्रताडित होती रही है, किसी से अज्ञात नहीं है। पितृसत्तात्मक समाज म स्त्री सदा दोयम दर्जे की जिन्दगी बसर करती है। विकसित आर विकासशील सभी देशो मे स्त्री का विवाद के घेरे मे रखा गया ह। समाज व्यवस्था हा या राज्य व्यवस्था, व्यवसाय का क्षेत्र हो या शिक्षा का, परिवार की पचायत हो या धर्म का मच, कुछ अपवादा को छोडकर स्त्री की क्षमताआ का उचित मूल्याकन आर सही उपयोग नही हो पाता है। मेरे मन मे स्त्री जाति के प्रति सहज ही ऊची धारणा है। इसकी शक्ति का सदुपयोग हा तो परिवार ओर समाज का नई चतना प्राप्त हो सकती है।

स्त्री को सृजन का प्रतीक माना जाता ह। मेरे अभिमत से यह ध्वस के लिए भी एक विस्फोटक का काम कर सकती ह। सद्सस्कारो का सृजन और बुराइया का ध्वस—ये दोना ही काम न कानून-कायदा स हो सकते ह, न भय से हो सकत ह ओर न दण्डशक्ति स हो सकते है। ऐसे बहुत कानून बने हुए है, जा प्रभावी होकर भी अकिंचित्कर ह। भय का हथियार कच्चे दिमाग वाले बच्चा पर चल सकता हे अन्यथा वह भोथरा हो जाता ह। दण्डशक्ति एक बार असरकारक हो सकती ह। वातावरण मे बदलाव आए बिना दण्ड के वार भी व्यर्थ चल जाते ह। एसी स्थिति म नारी शक्ति का प्रयाग करके उसके परिणामा की मीमासा की जा सकती ह।

नारी के मुख्यत तीन रूप ह—लक्ष्मी, सरस्वती ओर दुगा। परिवार को सस्कार सम्पन्न बनाते समय वह लक्ष्मी का रूप धारण कर सकती है। सन्तति को शिक्षित करत समय वह सरस्वती बन सकती हे और बुराइया का ध्वस करन के लिए वह सिह पर आरूढ दुगा की भूमिका निभा सकती ह। अपेक्षा

एक ही है कि इसके तीनो रूपो को उपयोगी मानकर काम मे लिया जाए।

अणुव्रत के मच से महिलाए काम करती है। अनेक प्रसगो मे उनके शौर्य, साहस और सूझबूझ का परिचय मिलता है। पर उनके दायरे सीमित हे। जब तक उनको व्यापक कार्यक्षेत्र नही दिया जाएगा, उनका कर्तृत्व सामने कैसे आएगा? इस समय महिलाओ के सामने दो रास्ते है—आधुनिकता की अधी दोड मे सम्मिलित होना और अपनी शक्ति को सत्संस्कारो के निर्माण व असत्संस्कारो के ध्वस मे नियोजित करना। पहला रास्ता न महिला जाति के लिए हितकर है और न समाज के लिए। महिलाओ को अपनी शक्ति का सदुपयोग करना है तो दूसरा रास्ता ही चुनना होगा।

भारतीय सस्कृति मे व्यसनमुक्त जीवन को आदर्श माना गया है। शराब एक व्यसन है। यह बहुत पुराना व्यसन है। सभ्यता, सस्कृति, परिवार और शरीर तक को चोपट करने वाला है यह व्यसन। इसकी जड काटने के लिए कई आन्दोलन और अभियान चले, आज भी चल रहे है, पर सफलता हासिल नही हुई। काश! स्त्री का दुर्गारूप मुखर होता और शराब के विरोध मे सघर्ष छिडता। काश! यह एक तूफानी नदी का रूप धारण करती और आसपास की बुराइयो का सारा कूडा करकट बहाकर ले जाती।

कुछ प्रदेशो की महिलाओ ने समाज और सरकार को अपने दुर्गारूप का परिचय देने मे सफलता प्राप्त की है। पिछले कुछ महीनो से आन्ध्र प्रदेश की महिलाओ ने शराब के खिलाफ एक आन्दोलन शुरू कर रखा है। इन महिलाओ मे न तो अधिक पढी-लिखी महिलाए है और न आर्थिक दृष्टि से बहुत सपन्न घरानो की महिलाए है। अनपढ, अशिक्षित और गरीब महिलाओ ने सगठित रूप मे शराब सस्कृति पर जो धावा बोला है, शराब की हजारो दुकाने बन्द हो गई है। उन्होने शराब के ठेको की नीलामियो पर भी रोक लगा दी है। उनका होसला और काम करने का तरीका देखकर कुछ समाज सुधारक, कुछ युवा और कुछ छात्र भी उनके आन्दोलन को हवा दे रहे है। महिलाओ ने राज्य मे पूर्ण शराबबन्दी की माग की है।

एक शराब ही नही मादक और नशीली वस्तुओ का प्रचलन आज जिस गति से बढता जा रहा है, चिन्ता का विषय है। स्वस्थ जीवनशैली मे घुसपैठ करने वाले इन पदार्थो को देश-निकाला देने के लिए केवल आन्ध्र

की महिलाओ क सघष से क्या होगा? देश भर की महिलाए जागे। राष्ट्र चेतना रूप मे अपनी चतना जगाए। सामाजिक और राष्ट्रीय बुराइया क खिलाफ अपनी शक्ति का झाक द। मेरा यह दृट विश्वास ह कि नारीशक्ति स्थायी रूप से यह काम अपन हाथ मे ले तो अनेक प्रकार की बुराइयो क अस्तित्व को चुनोती दी जा सकती हे। इसक लिए किसी एक सीताम्मा और रोसम्मा से काम नहीं चलेगा। देश भर की अम्माओ को एकनिष्ठ हा दुगा बनकर काम करना होगा।

५८ किट्टी पार्टी और महिला समाज

विगत कुछ वर्षो से भारतीय महिलाओ म एक नइ सस्कृति अपने पाव फैला रही ह। उच्च एव मध्यम वग की महिलाए उस सस्कृति को उच्चस्तरीय जीवनशैली का अग मान रही ह। उसकी पहचान किटी या किट्टी पार्टी के नाम से की जा सकती हे। किट्टी पार्टी की सदस्याए पार्टी द्वारा निर्धारित अथ राशि देती ह, स्नेह मिलन करती ह, तम्बोला, तास, सगीत आदि मनोरजक कायक्रमा का आयाजन करती हे, गपशप करती हे आर चाय-नाश्ते के साथ पार्टी का समापन करती ह।

किट्टी पार्टी के आयोजन का मूलभूत उद्दश्य था—एक मध्यमवर्गीय महिला एक साथ हजार पाच सा रुपये खच कर कोई घरलू उपकरण नही खरीद सकती। पार्टी की सदस्याए पचीस, पचास, सा या इसस अधिक-कम अथराशि प्रत्येक सदस्या से प्राप्त कर उसे नामांकित पत्र के माध्यम से एक महिला का उपलब्ध करा दती। उसस वह आवश्यक उपकरण खरीद लती। इस प्रकार प्रतिमास एक-एक सदस्या को वह अथ मिल जाता। जिस-जिस महिला के नाम पत्र निकलता, उस-उस नाम का उस चक्र स हटा दिया जाता। आवश्यकतापूर्ति के उस साधन को अब प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाया जाने लगा ह।

आजकल उपकरण के क्रय की बात गोण हो गइ हे और किट्टी पार्टी धनाढ्य महिलाओ का एक 'चाव' बनकर रह गइ ह। अब व उस पार्टी का मनोरजन अथवा समय पास करने का साधन मानकर उसी रूप म उसका उपयोग करती ह। सम्पन्न परिवारा की महिलाए, जिनको न खाना बनाने की अपेक्षा रहती है आर न किसी अन्य घरलू काम मे हाथ बटाने की आवश्यकता ह, पूरे दिन कर क्या? पारिवारिक जीवन म इतने बिखराव आर

इतनी टूटन आती जा रही ह कि जीवन म बढते जा रहे शून्य को भरन की उम्मीद ही समाप्त हो जाती हे। एसी स्थिति म क्लब, रेस्तरा या क्टिी पार्टी जेसे माध्यमा से शून्य भरने का उपाय खाजा जाता ह। यह आधुनिक जीवन-शेली की देन हे ओर विशप रूप से शहरी महिलाए इससे प्रभावित ह।

फ्लट सस्कृति म पलने वाली, पति क ऑफिस आर वच्चा क स्कूल जाने के वाद घर म अकेली वेठी महिला वारियत का अनुभव करती ह। जिन महिलाआ को घरलू उपकरण खरीदने क लिए पेसे की कमी नही हाती। वे पार्टी म एकत्रित अथ राशि का खाने-पीने मे उडा देती ह। कुछ तथाकथित उच्च घराना की महिलाए ता सिगरट ओर शराव स भी परहज नही रखती। गपशप, मनारजन आर भोजन क अतिरिक्त उस पार्टी से किसी भी महिला का कान-सा लाभ हाता हे, विचारणीय विपय हे। काश । एसी महिलाए समाज म सामाजिक सास्कृतिक एव धामिक चतना जगाने के लिए अपने समय का उपयाग करती ता उन्ह अतिरिक्त आत्मताप मिलता आर महिलाआ की सृजनात्मक क्षमताआ स समाज लाभान्वित होता।

उच्चवर्गीय महिलाआ की दखादेखी आज साधारण परिवारा की महिलाए भी इस प्रतिस्पधा म अपनी भागीदारी द रही ह। आधुनिक कहलान की हाड म घर आर वच्चा की उपक्षा कर इस नइ सस्कृति का पोत्साहन देने वाली महिलाए क्या अपन हाथा अपने ही पाता पर कुल्हाडी नही चला रही ह? उनका यह निरुद्देश्य उन्मुक्त आचरण उनकी वहू-वेटियो का कहा तक ल जाएगा ? क्या इस प्रश्न पर कभी उनका ध्यान केन्द्रित हाता ह? समय की गति वहुत तीव्र ह। महिलाए एक वार तटस्थ भाव से एसी प्रवृत्तिया की समीक्षा कर। पारिवारिक चरित्र को उदात्त वनाए रखन क लिए अपनी वृत्तिया का परिष्कार कर। समय आर शक्ति का सम्यक् नियाजन करन के लिए परिवार और समाज के लिए साथक गतिविधिया पर ध्यान दे, यह आवश्यक ह।

५६. प्रशिक्षण अहिसा का

युगीन समस्याओ म एक अहम समस्या हे हिसा। हिसा अतीत मे होती थी, वर्तमान मे हो रही हे ओर भविष्य मे नही होगी, ऐसा कहा नही जा सकता। जहा जीवन ह, जीविका के साधना की खोज हे, वहा हिसा भी हे। पर वह हिसा कभी समस्या नही वनती। उसके साथ समस्या का सूत्र तव जुड़ता हे, जव सवेगो पर नियन्त्रण नही रह पाता। पशु-पक्षिया की बात एक वार छोड दी जाए तो मानना होगा कि हिसा के बीज मनुष्य के नाडी-तत्र और ग्रथितत्र मे ह। इनको सुनियन्त्रित किए विना हिसा की समस्या का हल खोज पाना असभव हे।

मनुष्य सत्य, शिव और सान्दय का उपासक हे। सत्य क्या हे? ससार का हर प्राणी अपने ढग से जीना चाहता हे, यह एक सचाई हे। उसके जीने मे किसी प्रकार की बाधा उपस्थित करना हिसा हे। हिसा का मूल स्रोत हे पदार्थ के प्रति आसक्ति। आसक्ति जितनी सघन होगी, हिसा उतनी ही भयकर होगी। अनासक्त व्यक्ति के जीवन मे हिसा का पसग उपस्थित ही नही होता। इसलिए हिसा के वृक्ष पर आए पत्तो, फूला और फला तक ही सीमित न रहकर उसकी जडो तक ध्यान देने की अपेक्षा हे। जब तक हिसा की जडे नही खोदी जाएगी, उसके दुष्परिणामा को रोकना कठिन हे।

हिसा के तीन रूप मुख्य ह—आरम्भजा, विरोधजा ओर सकल्पजा। एक सामाजिक प्राणी आरम्भजा ओर विरोधजा हिसा से वच नही सकता। वह खेती करता ह, व्यवसाय करता हे, जीविका के लिए साधन जुटाता हे। इसमे होन वाली हिसा अपरिहार्य हे। सामाजिक जीवन म वेर-विराध क प्रसग भी आते हे। विरोधी के आक्रमण का विफल करने के लिए अथवा उसकी ओर से सभावित हमले को टालने के लिए व्यक्ति हिसा का सहारा लता हे। इसे

अपरिहार्यता न भी माना जाए, पर विवशता तो मानना ही होगा। जब तक व्यक्ति में जिजीविषा रहती है, वह अपने बचाव के लिए हर संभव उपाय काम में लेता है।

हिंसा का तीसरा रूप है संकल्पजा। न कोई यान्त्रिक उद्देश्य, न कोई विवशता और न कोई अपेक्षा। फिर भी मनुष्य हिंसा करता है। निरपराध मनुष्य को मारता है। क्यों? मारने का जनून सवार है उस पर। उसकी सोच का रास्ता बन्द है। बहुत बार व्यक्ति स्वयं नहीं जानता कि वह दूसरों के प्रति आक्रोश से क्यों भरा है? वह संवेगों के ऐसे अश्व पर सवार रहता है जिसकी लगाम उसके हाथ में नहीं है। वह अश्व उसे पतन की कितनी ही गहरी खाई में ले जाकर गिरा दे, उसके बचने का कोई उपाय नहीं रहता। आज संसार में यही हो रहा है।

हिंसा की समस्या का समाधान प्रतिहिंसा में नहीं है। यदि ऐसा होता तो अब तक हिंसा का जनाजा निकल गया होता। प्रतिहिंसा से हिंसा भड़कती है। उसका स्थायी समाधान है अहिंसा। हिंसा की तरह अहिंसा के बीज भी मनुष्य के मस्तिष्क में हैं। जब तक मस्तिष्क को प्रशिक्षित नहीं किया जाएगा, हिंसा नए-नए मुखौटों में मनुष्य की शांति का भंग करती रहेगी। हिंसा को रोकने के लिए अहिंसा के प्रशिक्षण की अपेक्षा है। अहिंसा के प्रशिक्षण का अर्थ है—संवेगों को नियन्त्रित रखने का प्रशिक्षण, दृष्टिकोण को बदलने का प्रशिक्षण, हृदय को बदलने का प्रशिक्षण, जीवनशैली को बदलने का प्रशिक्षण और व्यवस्था को बदलने का प्रशिक्षण। जैन विश्वभारती, मान्य विश्वविद्यालय अहिंसा के प्रशिक्षण की योजना को क्रियान्वित करने के लिए कृतसंकल्प है। यदि यह योजना क्रियान्वित हो सकी तो हिंसा के गहराते बादलों को चीरकर शांतिपूर्ण सहअस्तित्व के सूरज का प्रकाश फैलाया जा सकता है।

६० मनोवृत्ति के परिमार्जन की त्रिपदी

लोग कहते ह—'आज का युग साइन्स ओर टक्नालॉजी का युग ह।' मुझे लगता ह कि इस युग म दो बात विशेष रूप स बढ रही ह—एक्सीडट आर अपराध। शायद ही कोइ दिन एसा जाए, जिस दिन दुघटना नहीं होती हो। दुघटना कब और कैसे हो जाती है, किसी को पता ही नहीं चलता। मौत को आना होना ह तो वह कही भी द्वार बना लेती ह। यत्रनिमित परकोटे को पार कर वह अपने गतव्य तक आसानी स पहुच जाती ह। तीथकरो और मनीषियो की यह अनुभवपूत वाणी पग पग पर अपनी सचाइ प्रकट कर रही है। दीपावली का अवसर। फरीदाबाद म बारूद भर पटाको की एक दुकान म आग लगी। आसपास कइ दुकान थी। उनम पटाको की दुकान भी थी। अन्य सामान की दुकाने भी थी। आग की लपट आगे बढी। कइ दुकान उनकी चपट मे आ गइ। एक दुकान म बड ओर बच्च सब मिलाकर पाच व्यक्ति थे। दुकान को आग न पकड ले, इस आशका से उन्होन शटर नीचे गिरा दिया। दुकान बन्द हो गइ। नीचे के हिस्से म थाडी सी सुराक रह गइ। दुकान स बाहर बारूद का धुआ फैला। वह सुराक के रास्ते से अन्दर घुस गया। आग से दुकान को बचाने के प्रयत्न म वहा गस ही गैस हो गइ। दुकान के भीतर बन्द पाचो व्यक्तियो न दम तोड दिया। अंतिम समय म उनकी क्या परिस्थिति या मन स्थिति रही, कोइ साक्षी नहीं बचा।

इस प्रकार के हादसे घटित होते ही रहते ह। कही ट्रेन दुघटना, कही प्लेन दुर्घटना। कहीं बस-कार की टक्कर, कहीं ट्रक-मारुति की भिडत। कहीं ट्रक से कुचल जाना, कही बस के धक्के से गिर जाना। कहीं स्कूटर का उलट जाना आर कहीं बस का नदी या नाले मे गिर पडना। कही

वाढ कहीं भूकम्प, कहीं तूफान कहीं ज्वालामुखी का फटना और भी न जाने कितने रूप हे दुघटनाओ के। और कोइ कारण नहीं मिलता है तो मनुष्य स्वय ही मृत्यु के लिए आमादा हो जाता हे। आत्महत्या के भी नए-नए रूप विकसित हो रहे है। उन्हे देखकर कहना पडता है—यह युग एक्सीडेट का युग हे।

अपराध बढ रहे है, यह चिन्ता का विषय है। इससे भी अधिक चिन्तन इस बात पर हो कि अपराध क्यो बढ रहे है? वह कोन सी प्रेरणा है, जो मनुष्य को अपराधी बनाती हे? हत्या, मारपीट, राहजनी, डाका, बलात्कार, अपहरण आदि प्रवृत्तियो का उत्स क्या हे? मनुष्य इतना क्रूर केसे हो गया? वह आदमी को गाजर-मूली की तरह काटता हे। निरपराध लोगो को सामूहिक रूप मे गोलियो से भून देता है। एसी घटनाए रात के अधेरे मे नहीं दिन मे हो जाती है। एकान्त बीहडो मे ही नहीं, शहर के बीच मे हो जाती है। दर्शक देखते रह जाते है। उनमे इतनी दहशत व्याप जाती हे कि न उनके मुह से शब्द निकलते है ओर न हाथ हरकत मे आते है। अपराध करने वाले बिना डरे बिना सहमे निश्चिन्त होकर अपने गन्तव्य तक पहुच जाते है। उसके बाद फुसफुसाहट शुरू होती हे। यह सब कब तक चलता रहेगा?

दुर्घटना का शिकार होने वाला चला जाता हे। वह अपने पीछे छोड जाता हे शोकसकुल परिवार का क्रन्दन। दुघटनाए इरादतन नहीं होतीं, पर उनके पीछे भी कुछ कारण है। एक बडा कारण है शराब। ड्राइवर शराब पीकर अन्धाधुन्ध बस चलाते हैं, ट्रक चलाते हे, कार चलाते है और हादसे हो जाते हे। अणुव्रत का एक नियम हे— मादक व नशील पदार्थो का सेवन नहीं करना। छोटा सा नियम, बडी बडी दुघटनाओ को टाल सकता है। काश! मनुष्य इसकी महत्ता को समझे। कुछ दुघटनाए प्राकृतिक होती है। कुछ यन्त्रो मे गडबडी होने से होती है। उनको टालना असभव प्रतीत हो सकता है। पर जो सभव हे, उसे असभव क्यो बनाया जाए?

हत्या, अपहरण आदि प्रवृत्तियो के पीछे मनुष्य की जो मनोवृत्ति है, उसको परिमार्जित किए बिना अपराधो के आकडो मे कमी नहीं आ सकती। जब तक मन का मार्जन नहीं होगा, पग गलत रास्तो मे बढते रहेगे। मन

स्वस्थ हो तो व्यक्ति अपना कल्याण कर सकता है और दूसरा की त्रासदी को दूर कर सकता है। मन को स्वस्थ बनाने का छोटा-सा उपक्रम है अणुव्रत की शरण स्वीकार करना। अणुव्रत की चर्चा, अणुव्रत साहित्य का स्वाध्याय और अणुव्रती लोगा का सपर्क—यह त्रिपदी मनोवृत्ति के परिमाजन की त्रिपदी है। इसके सहारे अणुव्रत लोकजीवन मे उतर जाए तो अपराधी लोगा की दिशा बदली जा सकती है।

६१ त्रैकालिक समाधान

मुनष्य म दो प्रकार की वृतिया होती ह– सिहवृत्ति और श्वावृत्ति। सिह पर तीर या गोली का वार होता ह तो वह पीछे मुडकर दखता ह। उसम जिज्ञासा जागती ह कि प्रहार किस दिशा स हुआ? किसने किया ? इससे आग वह प्रहार करन वाल क प्रति आक्रामक रुख अपनाता है और उस समाप्त कर अपने भविष्य का निरापद बना लेना चाहता ह। कुत्त पर कोइ पत्थर फकता ह तो। वह रुकता ह। पर पीछ मुडकर नहीं दखता। प्रहार करन वाल पर उसका ध्यान नहीं जाता। वह उस पत्थर को चाटने लगता हे।

श्वावृत्ति क लोग किसी भी विषय पर चिन्तन करते ह, उसम तात्कालिक समाधान का लक्ष्य रहता ह। समस्या का तात्कालिक समाधान भी काम का ह। पर उसस समस्या का अत नही होता। वह पतरा बदलकर दूसर रूप म सामन आ जाती ह। कुछ लोग किसी समस्या क बारे म तब तक नहीं सोचत, जब तक उसस वे स्वय प्रभावित नही हो जाते। यह भी सकीर्ण चिन्तन की प्ररणा हे। उस समस्या को सार्वभौम और सार्वजनीन रूप म दखा जाता ह तो किसी भी देश का कोइ भी व्यक्ति उससे आखमिचौनी नहीं कर सकता।

राष्ट्रपति वुडरो विल्सन ने सन् १९१९ में 'लीग ऑफ नशन्स' का घोषणापत्र तैयार किया। उसमे लिखा गया ह–'कोइ भी युद्ध या युद्ध का खतरा चाह उसस लीग का कोइ सदस्य तत्काल प्रभावित हो या नहीं समस्त लीग के लिए चिन्ता का विषय हे।' यह चिंतन सिहवृत्ति का प्रतीक हे। इसमे समस्या क त्रैकालिक स्वरूप को ध्यान मे रखकर विचार किया गया ह। आवश्यकता इस वृत्ति को विकसित करन की ह। अन्यथा मनुष्य की शक्ति तात्कालिक समस्याओ क समाधान म उलझकर रह जाएगी। उससे न तो स्थायी समाधान मिल पाएगा और न भविष्य क खतरो को टाला जा सकेगा।

हिसा, आतक, अलगाववाद, नशे की आदत आदि समस्याए देश के सामन चुनाती बनकर खडी ह। इनक समाधान की चचा बहुत हाती हे। पर समाधान क आसार दिखाइ नहीं द रह ह। कारण साफ हे। समस्या के मूल की खोज नहीं हा रही ह। श्वावृत्ति क आधार पर तात्कालिक समाधान क लिए दाडधूप हा रही ह। किन्तु सिहवृत्ति का अपनाकर समस्या क मूल पर ध्यान कम दिया जा रहा ह। समस्या के मूल तक पहुचने म समय लग सकता ह। पर स्थायी समाधान होगा ता इसी प्रक्रिया से होगा।

अहिसा का प्रशिक्षण हिसा का त्रकालिक समाधान ह, इस चिन्तन क आधार पर हमन अहिसा क प्रशिक्षण का उपक्रम प्रारभ किया ह। इस सन्दभ म हुए अन्तराष्ट्रीय सम्मलन के बाद हमने यह निष्कप निकाला ह कि 'अहिसा प्रशिक्षण' की बात शिक्षा क साथ जुड जाए, विद्यार्थी का प्रारभ से ही अहिसा का प्रशिक्षण दिया जाए, थ्यारीटिकल आर प्रक्टिकल प्रशिक्षण का क्रम चलाया जाए, उसक सामन 'अहिसक जीवन शली' का प्रारूप आर उदाहरण प्रस्तुत किया जाए तो वह दिन दूर नहीं हागा, जब हम सुनगे कि हिसा न अहिसा के सामने घुटन टक दिय ह।

६२ आवश्यक है दो भाइयो का मिलन

महान् वेज्ञानिक अलवर्ट आइन्स्टीन क सामन एक प्रश्न आया-- विज्ञान ने मनुष्य को शारीरिक श्रम से मुक्त किया हे, अनेक प्रकार की सुविधाए दी हे, फिर भी मनुष्य सुखी क्यो नहीं हुआ? आइस्टीन ने उत्तर दिया--'मनुष्य ने विज्ञान का उपयोग अक्लमन्दी स नही किया।

विज्ञान की प्रगति से सारा ससार चकाचोध हो रहा हे। पगति के नए नए आयाम खुलते जा रहे ह। हर नया आयाम मानव जाति के प्रवाह को नई दिशा द रहा ह। फिर भी मनुष्य अशान्त ह, क्लान्त हे व्यथित ह। क्योकि सुख ओर शान्ति का एकमात्र साधन विज्ञान को मान लिया गया। जबकि विज्ञान का सम्बन्ध बौद्धिक विकास से हे। बुद्धि पदार्थ को जानती ह। उसके बारे म खोज करती ह ओर उसके उपयोग की विधि बताती हे। किन्तु मनुष्य जिन दुबलताओ से आक्रान्त हे, उनसे मुक्त होने का उपाय नही सुझाती।

अध्यात्म बहुत ऊचा तत्त्व हे। वह चेतना क तल तक पहुचता ह। आत्मा म छिपी हुइ शक्तियो को जगाने का रास्ता बताता हे। पर उसे रोटी की चिन्ता नहीं ह। वह मनुष्य की देनिक समस्याओ को समाहित नही करता। एक भूखा आदमी, समस्याओ स घिरा हुआ आदमी आत्मा के अज्ञात रहस्यो को खोलन का पयास कसे करेगा? ससार ओर मोक्ष, पुनजन्म ओर पूवजन्म, कम का वन्ध ओर उसक फल का भोग आदि गभीर विषयो पर सोचन की मानसिकता कस बनगी?

विज्ञान ओर अध्यात्म जीवन क दो छोरो को छू रहे ह। एक को कवल बौद्धिक या भौतिक विकास की चिन्ता ह। दूसरा केवल आध्यात्मिक विकास की बात करता ह। य दोनो जब तक निरपक्ष रहगे मनुष्य सुखी नही हो

पाएगा। इसी दृष्टि से हमने योगक्षेम वर्ष में आध्यात्मिक-वैज्ञानिक व्यक्तित्व के निर्माण का सपना देखा था। अध्यात्म-निरपेक्ष विज्ञान और विज्ञान-निरपेक्ष अध्यात्म अधूरा है। इसी दृष्टि से कहा गया है—

कोरी आध्यात्मिकता युग को प्राण नहीं दे पाएगी,
कोरी वैज्ञानिकता युग को त्राण नहीं दे पाएगी,
दोनों की प्रीति जुड़ेगी,
युगधारा तभी मुड़ेगी,
क्या-क्या पाना है, पहले आंक लो।
ओ सन्तो! क्या-क्या पाना है ? गहरे झांक लो॥

अपेक्षा है, अध्यात्म और विज्ञान एक-दूसरे के पूरक बनें। सत्य को जानना एक बात है और उसे जीना एक बात है। जानने मात्र से सत्य जिया नहीं जाता और जीने मात्र से वह जाना नहीं जाता। मनुष्य का प्रस्थान उभयमुखी हो— वह जाने और जिए। जानने का आनन्द जीवन के साथ जुड़कर बहुगुणित हो जाता है। इसी प्रकार जीने के आनन्द को ज्ञानपूर्वक शतगुणित किया जा सकता है।

चिरकाल से बिछुड़े हुए दो भाई सायास या अनायास जब कभी मिलते हैं, उनके विकास की संभावनाओं के नए द्वार खुल जाते हैं। अध्यात्म और विज्ञान - दो ऐसे सहोदर हैं, जो दीर्घकाल से बिछुड़े हुए हैं। दोनों एक-दूसरे के वियोग में रिक्तता का अनुभव कर रहे हैं। युग का तकाजा है कि दोनों भाइयों का मिलन हो, शान्त सहवास हो। ऐसा होने से ही मनुष्य के जीवन की जटिलताएं कम हो पाएगी। अध्यात्म और विज्ञान का योग ही सुख और शान्ति का पथ प्रशस्त कर पाएगा।

६३ मौत के साये में

विश्व स्वास्थ्य सगठन पूरे विश्व की मानव जाति के स्वास्थ्य की चिन्ता करने वाला सगठन है। वह विगत कुछ अर्से से प्रतिवर्ष ३१ मई को विश्व तम्बाकू निषेध दिवस मनाता है। इस दिन को मनाने का उद्देश्य है तम्बाकू के दुष्परिणामो की ओर जनता का ध्यान आकृष्ट करना। इस विषय मे विचार करने वाले वैज्ञानिको का अभिमत है कि सन् २०२० से २०३० के दशक मे भीषण नरसहार की सभावना है। इस सभावना को आकडो मे प्रस्तुत किया जाए तो करीब तीन करोड़ लोगो को मौत का पैगाम सुनाया गया है। वह सहार किसी आणविक विस्फोट से नही होगा, बाढ या भूकम्प जैसी प्राकृतिक आपदा से नही होगा और किसी महामारी से नहीं होगा। इसका कारण बनेगा तम्बाकू का धुआ। तम्बाकू के सेवन से होने वाली बीमारियो एव अन्य दुष्प्रभावो के शिकार दस करोड लोग हो सकते है।

तम्बाकू से बनने वाले पदार्थो के अनुकूल प्रतिकूल प्रभाव के बारे मे अनुसधान विश्व मे कहा कितने प्रतिशत लोग धूम्रपान करते है इसका सही आकलन, उससे होने वाली बीमारियो की सूचना और सभावित प्रलय की स्पष्ट चेतावनी के बावजूद तम्बाकू पर प्रतिबन्ध नही लगा, इसके क्या कारण हो सकते है? कारणो की मीमासा का कार्य विश्व स्वास्थ्य सगठन अथवा 'कैसर फाउण्डेशन ऑफ इडिया' जैसे सगठन कर सकते है। हमारे पास न तो इतनी सुविधा है और न इस विषय के विशेषज्ञो के साथ कभी कोई चर्चा हो पाई। फिर भी मेरी दृष्टि मे इसका एक ही कारण हो सकता है। वह है आर्थिक लाभ। तम्बाकू के प्रयोग से निर्मित पदार्थो का उत्पादन करने वाली कम्पनियो का अपना व्यामोह है। उनको विज्ञापित करने वाली कम्पनियो या व्यक्तियो का अपना स्वार्थ है। जन स्वास्थ्य के मूल्य पर बढ़ता जा रहा यह

व्यवसाय क्या आर्थिक पागलपन का प्रतीक नहीं ह?

किसी घटना-दुघटना म दस-बीस व्यक्तियो की मृत्यु हो जाती हे, उस ओर अविलम्ब ध्यान चला जाता हे। घटना की जाच के लिए विशेष आदेश दिए जात ह। लोकसभा, राज्यसभा ओर विधानसभाओ म उस प्रसग को उठाया जाता हे। समाचारपत्रो म भी वह सवाद मुखिया म छापा जाता हे। पर जिस घटना मे करोडो लोगो का जीवन मौत के साये म आ रहा ह, उसके बारे मे किसी का कोई चिन्ता नही ह। यह आश्चय नहीं तो क्या ह?

विकसित देशो म तम्बाकू की खपत घट रही ह ओर विकासशील देशो मे बढ रही हे। भारत के लिए यह कहा जाता हे कि वह 'फारन रिटन' विचार ओर वस्तु को महत्त्व देता है। क्या तम्बाकू के बार म भारतीय लोगो की सोच भिन्न प्रकार की हे। विश्व मे शक्ति के रूप मे प्रतिष्ठित देशो म तम्बाकू के प्रति नजरिया बदल रहा ह तो भारत पर उसका प्रभाव क्या नही हुआ?

धूमपान की प्रवृत्ति महिलाओ की अपेक्षा पुरुषो म अधिक देखी जाती हे। विकासशील देशो म तो यह अनुपात ओर भी कम ह। इस अन्तर को पाटन क लिए एक नया षड्यन्त्र हो रहा हे। महिलाओ मे सिगरेट पीने की प्रवृत्ति बढे, इस उद्देश्य से विशेष प्रकार की सिगरेटो का निर्माण किया जा रहा हे। भोली-भाली महिलाए इस षड्यन्त्र म फसे, यह भी चिन्ता का विषय ह। किन्तु षड्यन्त्रकारी इतने दक्ष हे कि सपन्न ओर शिक्षित महिलाओ को अपनी गिरफ्त मे ले रहे ह। महिलाओ म यदि थोडी भी समझ या सजगता होगी तो व इस षड्यन्त्र स बच सकेगी, एसा विश्वास हे। अन्यथा उनके कारण पूरा परिवार विनाश के कगार पर पहुच जाएगा।

६४. विकास का अन्तिम शिखर

मनुष्य विकास की अभिलाषा रखता है। विकास के लिए वह नई-नई खोज करता है। विज्ञान के क्षेत्र में हुई खोजों के आधार पर वह विकास के नए-नए शिखरों पर आरोहण कर रहा है। जलमार्ग, स्थलमार्ग और आकाशमार्ग पर उसकी अबाध गति विकास का एक पैमाना है। विकासयात्रा के एक पड़ाव पर वह विश्व के किसी भी भाग में घटित होने वाली घटना के बारे में उसी समय पूरी जानकारी पा सकता है। उस घटना के श्रव्य भाग को सुन सकता है और दृश्य भाग को देख सकता है। इस प्रक्रिया में वह किसी लिखित संवाद को भी एक क्षण में लाखों किलोमीटर दूर भेज सकता है। अणु और विद्युत् की ऊर्जा के बल पर मनुष्य आज ऐसे कार्य कर रहा है, जिनकी उसके पूर्वजों ने कभी कल्पना भी नहीं की थी।

मनुष्य के मन में विकास की जो अवधारणा है, उसके परिप्रेक्ष्य में वह इसी कोटि के काम कर सकता है, जिनके बारे में संक्षिप्त सी सूचना दी गई है। विकास के इस रूप को नेपथ्य में ले जाना मुझे अभीष्ट नहीं है। पर मैं आगाह करना चाहता हूं कि विकास का अंतिम शिखर इस मार्ग पर नहीं है। विश्व के वैज्ञानिक जिस रास्ते पर चल रहे हैं, हजारों वर्ष की साधना के बाद भी उस शिखर पर नहीं पहुंच पाएंगे। पहुंचना तो बहुत दूर की बात है, उसे छूना या देखना भी संभव नहीं है। ऐसी स्थिति में उस मार्ग को खोजना बहुत आवश्यक है, जहां से विकास के अंतिम शिखर को देखा जा सके।

आप्त पुरुषों ने मोक्ष या निर्वाण को विकास का ऐसा पड़ाव माना है, जहां पहुंचने के बाद सारे रास्ते खो जाते हैं। उसमें आगे कोई मंजिल नहीं है, फिर रास्ते कहां होंगे। आत्मा के अस्तित्व को स्वीकार करने वाले सभी दर्शन मोक्ष की सत्ता को मान्य करते हैं। मोक्ष का एक ही रास्ता है। वह

हे ज्ञान, तप ओर सयम की समन्विति। अकला ज्ञान अहकार पदा करता हे। अकेला तप कष्टो की अधेरी खोह म ल जाकर छाडता हे ओर अकेला सयम भावनाओ का दमन करता ह। अहकार, कष्ट आर दमन के रास्त अवराहण क रास्ते हे। आराहण के लिए तीना के समायाजन की अपक्षा हे।

ज्ञान का काम हे प्रकाश करना। प्रकाश होन पर पता लगता हे कि कहा क्या हे ओर कहा क्या नही हे। कहा उपयोगी चीजे ह ओर कहा कचरा भरा ह। कहा व्यवस्थाए ठीक ह ओर कहा अव्यवस्था हो रही हे। अधेरे म किसी चीज का सम्यक् अवबोध नही हो पाता, इसलिए प्रकाश जरूरी हे।

तप का काम ह शोधन। कचर के ढर का शोधन उसे जलाने से हाता ह। आत्मा कचरे क ढेर से मलिन ह। उसकी शुद्धि के लिए तप की ज्याति को प्रज्वलित करना होगा। जब तक आन्तरिक ओर बाह्य तप की ज्योति नही जलेगी, आत्मा का शोधन नही होगा।

तपस्या से शुद्ध आत्मा पुन मलिन न हो, इसलिए कचरा आने क रास्ता को बन्द करना होगा। यह काम सयम का ह, चारित्र का ह। सयम निरोधक हे। जहा सयम खडा ह, वहा किसी अवाछित या असामाजिक तत्त्व की घुसपेठ नही हो सकती। इस समग्र चर्चा का सार इन चार पक्तिया म आ जाता ह--

णाण पयासग
साहगो तवा सजमो य गुत्तिकरो।
तिण्हंपि समाजोगे,
मोक्खा जिणसासणे भणिओ॥

६५. अणुव्रत का रचनात्मक रूप

किसी भी आन्दोलन के मुख्यत दो रूप होते है— प्रचारात्मक और रचनात्मक। अणुव्रत का कोन सा रूप उजागर हो रहा है? इस प्रश्न पर विचार करते समय उसका प्रचारात्मक रूप उभरकर सामने आता है। जाति, सम्प्रदाय, देश, भाषा वेशभूषा आदि से अप्रतिबद्ध एक जागृत विचारधारा का नाम है अणुव्रत। इसकी प्रतिष्ठा एक असाम्प्रदायिक धर्म के रूप मे हो चुकी है। मानवीय मूल्यो के प्रति आस्थाशील लोगो की आकाक्षा अणुव्रत मे ही पूरी हो सकती है। इसलिए इसके प्रचार प्रसार मे कहीं किसी प्रकार का अवरोध नही है।

प्रचार उपयोगी तत्त्व है, पर आचार का मूल्य सर्वोपरि है। अणुव्रत की विचारधारा व्यक्ति, परिवार और समाज के आचरण मे उतरे, यह उसका रचनात्मक स्वरूप है। अणुव्रत का प्रचारात्मक कार्य ठीक गति से चल रहा है। वह चलना ही है। उसके रचनात्मक रूप को बल मिले, यह अपेक्षा तीव्रता से अनुभव की जा रही है। इस वर्ष अणुव्रत समिति, लाडनू ने यह बीडा उठाया है। उसका लक्ष्य है— लाडनू तहसील मे अणुव्रत आचारसहिता को लोकव्यापी बनाना। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए अणुव्रती कार्यकर्ताओ ने अभियान शुरू कर दिया है। वे लाडनू के विभिन्न मोहल्लो और आसपास के गावो मे जाते है, लोगो से मिलते है अणुव्रत के बारे मे चर्चा करते है लोगो की समस्याए सुनते है और उनका हल निकालने का प्रयास करते है। इससे ग्रामीण लोगो मे अणुव्रत के प्रति आकर्षण पैदा हुआ है। वे कहते है— 'हमारे यहा वोट लेने वाले तो बहुत बार आते है, पर हमारी समस्याओ पर ध्यान देने वाले पहली बार आए है।'

लाडनू के निकट एक गाव है - कासन। अणुव्रत समिति, लाडनू ने उस

आदश गाव वनाने का प्रयास शुरू किया ह। उसकी कल्पना म आदश गाव का स्वरूप यह ह--

- गाव म कहीं शराव का नाम-निशान न रह।
- गाव क सव लाग व्यसन मुक्त वने।
- गाव म कोइ भूखा न रहे। इसके लिए गरीव लोगा को भीख देकर भिखमगा नही वनाना हे। उन्ह अपन परा पर खडे हाने म सहयोग दकर स्वाभिमान क साथ जीना सिखाना ह।
- गाव म कहीं गन्दगी न रह, इसलिए स्वच्छता का अभियान जारी रखना ह।
- गाव म परस्पर प्रम आर साहाद का वातावरण रह। कभी दग-फसाद न हा। छाट-माटे झगड का लेकर काइ काट-कचहरी म न जाए।

आदश गाव क निमाण का काम अच्छ ढग स चल रहा ह। अभी यह प्रयोग एक गाव म हा रहा ह। हर क्षेत्र क अणुव्रती कायकता गाव-गाव म जाकर अलख जगाए आर अणुव्रत गाव वनाए। यह काम वात करने या भापण दन स हान वाला नही ह। इसक लिए खपना जरूरी ह। वतमान की मानसिकता म यही कठिन लगता ह। कवि न वतमान मानसिकता का कितना यथाथ चित्रण किया हे--

> वाता साटे हर मिल ता म्हान ही कहिज्यो।
> माथा साटे हर मिल ता छाना माना रहिज्या॥

मनुष्य आत्मा एव परमात्मा से साक्षात्कार करना चाहता ह, परमात्मा का पाना चाहता हे, पर उसक लिए वलिदान करना नही चाहता। इस दृष्टि से वह कहता ह--'यदि वातो-वाता से भगवान् मिले ता एसा रास्ता हम वताआ। यदि उसके लिए सिर देने की नावत आए ता हमस दूर ही रहना, हमार सामने मत आना।'

इस प्रकार की मन स्थिति को वदलन वाले कार्यक्ता ही अणुव्रत क रचनात्मक रूप को प्रतिष्ठित करने मे सफल हो सकते ह। इसके लिए केवल लाडनू तहसील या कासन गाव पर ही ध्यान देना पर्याप्न नहीं ह। जहा-जहा अणुव्रत समितिया ह, उनम थोडी भी सक्रियता हो ता इस अभियान का दश भर म अच्छे ढग से चलाया जा सकता ह।

६६ जिज्ञासा समाधान

जिज्ञासा—आज राष्ट्रीय आर अन्तराष्ट्रीय स्तर पर अणुव्रत मानव धम क रूप म प्रतिष्ठित हो रहा है। उसकी यह प्रतिष्ठा वैचारिक स्तर पर अधिक ह। क्या उस व्यावहारिक रूप में प्रतिष्ठित करने की भी काइ याजना ह?

सामधान—कोई भी आदालन वैचारिक रूप म सक्षम हाने क वाद ही व्यवहार म उतरता ह। आचार शास्त्र के मीमासको ने इस तथ्य पर वल दिया है कि आचार व्यवहार म आने स पहले विचारा की धरती पर अकुरित हो। वैचारिक पृष्ठभूमि क विना आचार के पथ पर वढ हुए व्यक्ति कभी भी फिसल सकल है। वचारिक धरातल ठोस हो जा जाए ता फिसलन की सभावनाए कम हा जाती ह। इस दृष्टि स किसी भी कार्यक्रम को लागू करने से पहल वचारिक क्रान्ति की अपेक्षा रहती ह। विचार पक्ष सही होता ह ता किसी भी उपयुक्त समय मे उस प्रायोगिक वनाया जा सकता ह।

यह सच ह कि अणुव्रत का विचार पक्ष वहुत पुप्ट ओर व्यापक वना ह। इसी कारण अणुव्रत आन्दोलन जीवित है। इसके समकक्ष आर समकालीन व्यवहार शुद्धि, सर्वोदय, मोरल रिआमामट आदि आन्दोलना की आज कहीं कोई चर्चा भी नहीं ह, जवकि अणुव्रत के स्वर अव तक वुलन्दी पर ह। यह चिन्तन भी उचित ह कि अव इस व्यवहार के साच मे ढालना चाहिए। किन्तु किसी भी विचार का व्यवहार म ढालना कितना कठिन ह इस वात को सव जानते ह। काड विचार शत पतिशत व्यावहारिक वन जाए, यह सभव भी नही है। पर इसका अथ यह भी नही ह कि विचार आकाशीय उडान भर आर आचार पाताल मे ही दवा रह जाए।

तीथकरा ने अहिसा का दशन दिया। बहुत दृढता ओर स्पप्टता से अहिसा के सिद्धात का प्रतिपादन किया। फिर भी हिसा का अस्तित्व ज्या

का त्या है। हिंसा की सत्ता को चुनाती नही दी जा सकती, पर मनुष्य की हिंसक मनोवृत्ति म थाडी भी दुबलता आती ह ता वह हिंसक के प्रयाग का परिणाम ह। आज की मानसिकता म नि शस्त्रीकरण, शस्त्र परिसीमन आर युद्ध को टालन जसे मनोभाव अहिंसा की व्यावहारिक फलश्रुति नही हे तो क्या ह?

अणुव्रत के क्षेत्र मे कोइ प्रयोग नही हो रहा ह, ऐसी बात भी नही है। अणुव्रत प्रशिक्षण शिविरा म अणुव्रत दशन का जीवनस्पर्शी बनाने का प्रशिक्षण बराबर दिया जा रहा है। अणुव्रत आचारसंहिता केवल उपदेश की वस्तु बनकर न रह जाए, इसी दृष्टि से प्रेक्षाध्यान पद्धति का आविभाव हुआ। जीवनविज्ञान का भी यही उद्देश्य है। सन् १९९० के वष का अणुव्रत वष के रूप म मनाने के पीछे भी यही दृष्टिकोण रहा ह। अणुव्रत का वचारिक पक्ष पूण रूप से व्यावहारिक बन जाएगा, यह अति कल्पना ह। उस जितना व्यावहारिक बनाया जा सकता ह, उसक लिए प्रयास जारी ह।

जिज्ञासा—आर्थिक असदाचार क युग म आम आदमी अणुव्रत की आचारसंहिता को स्वीकार करने म कठिनाइ का अनुभव करता ह। क्या इस सन्दभ म अणुव्रत के पास काइ व्यावहारिक रास्ता ह?

समाधान—जा लोग कठिनाइ का अनुभव करते ह, उन्हाने अणुव्रत की आचारसंहिता को गहराइ स समझन का प्रयास नही किया। प्रत्यक व्रत का उसक सही परिप्रेक्ष्य म समझा जाए ता यह कठिनाइ समाप्त हो सकती ह। हम जानत ह कि आज की परिस्थितिया म कठार व्रता का लेकर चलना सीधा काम नही ह। इस दृष्टि से आचारसंहिता क निधारण मे पूरा ध्यान दिया गया ह। उदाहरण क रूप म रिश्वत लेना आर देना—दाना अपराध ह आर्थिक असदाचार ह। किन्तु वतमान युग म रिश्वत लना जितना सरल है, न देना उतना ही कठिन है। इसलिए अणुव्रत की सीमा ह—'रिश्वत नही लूगा।' रिश्वत देना नैतिकता नही है। फिर भी इसे अणुव्रत की प्रथम भूमिका मे निषिद्ध नही माना गया। क्याकि आम आदमी ऐसा किए बिना सुविधा से जी नही सकता। यही बात प्रामाणिकता की है। उसकी भी अपनी सीमा ह। अणुव्रत के वर्गीय नियमा स उस सीमा का बाध किया जा सकता ह।

कुछ कानून भी ऐसे हैं जो व्यक्ति को आर्थिक असदाचार की दिशा में धकेलते हैं। टेक्सों को लेकर लोग ऐसी ही समस्या का अनुभव करते हैं। अणुव्रत ने प्राथमिक रूप में इस क्षेत्र में भी कोई दखलन्दाजी नहीं की। वास्तव में अणुव्रत किसी ऐसे आदर्श की बात नहीं करता, जिस पर कोई आदमी चल ही न सके। कठिनाई का जहां तक प्रश्न है, कुछ तो त्याग करना ही होगा। जीवन में कठिनाई आए ही नहीं तो व्रती बनने और न बनने में अन्तर क्या रहेगा? जिस युग में ऐसी कोई कठिनाई नहीं होगी, उस युग में अणुव्रती बनने का अर्थ ही क्या होगा? मुझे ऐसा लगता है कि व्रत पालन में आने वाली कठिनाइयों से भी अधिक कठिनाई मानसिक दुर्बलता की है। मनोबल प्रबल हो तो अणुव्रत का मार्ग सीधा राजमार्ग प्रतीत हो सकता है।

जिज्ञासा—क्या अणुव्रत का दर्शन व्यक्ति के अर्थप्रधान दृष्टिकोण को बदलने में सक्षम है? क्योंकि ऐसा हुए बिना प्रगति वस्तुतः प्रतिगति ही होती है?

समाधान—अणुव्रत का दर्शन जीवन के किसी एक ही विकृत दृष्टिकोण के परिमार्जन का लक्ष्य लेकर निर्धारित नहीं हुआ है। आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, शैक्षणिक, पारिवारिक और वैयक्तिक—सभी क्षेत्रों में घुसी हुई विकृतियों का सुधार करना अणुव्रत का लक्ष्य है। आज स्थिति ऐसी बन गयी है कि जीवन का कोई भी पक्ष निर्मल नहीं रहा है। अर्थप्रधान दृष्टिकोण ने सिद्धान्तों और नीतियों को भी ताक पर रख दिया है। स्वार्थ-चेतना का सूरज इतना तेज प्रकाश फेंकता है कि मनुष्य की आंखें चुंधिया गई हैं। अणुव्रत का दर्शन स्पष्ट है, निर्विवाद है। उसका प्रयोग परस्मैपद की भाषा में न होकर आत्मनेपद की भाषा में हो, यह आवश्यक है। अर्थप्रधान दृष्टिकोण को बदलने का सबसे छोटा, सीधा और कारगर प्रयोग यह है कि अर्थ को जीवन का साध्य नहीं, जीवनयापन का साधन मात्र माना जाए।

जिज्ञासा—अध्यात्म और विज्ञान का समन्वय वर्तमान युग की प्रबल अपेक्षा है। अणुव्रत अध्यात्म के हिमालय से प्रवाहित एक स्रोत है। क्या उसकी कोई वैज्ञानिक पृष्ठभूमि भी है?

समाधान—अध्यात्म और विज्ञान के समन्वय का एक छोटा सा उदाहरण है अणुव्रत। भगवान् महावीर महान् वैज्ञानिक थे। उन्होंने प्रयोगशाला में

वठकर काइ प्रयोग भले ही नहीं किया हो, पर उनके अनुभव की प्रयोगशाला बहुत वडी आर बहुत समृद्ध थी। उन्हाने जड आर चेतन—दाना तत्त्वा पर बहुत काम किया। पुद्गल आर जीव के वार मे उन्हाने जितनी सूक्ष्म ओर विशद अवधारणाए दी, कोइ भी वज्ञानिक अव तक भी वहा नही पहुच पाया ह। पुद्गल क अंतिम अविभागी अश परमाणु के वारे मे विज्ञान अव भी मोन है। आत्मा ता उसके यत्रा का विषय वन ही नहीं सकती।

व्रत अपने आप म एक वज्ञानिक अवधारणा ह। पदार्थो की सीमा हे। इच्छाए असीमित हे। ससीम आर असीम की टकराहट के वीच भोगापभोग की सीमा का सिद्धात एक वेज्ञानिक सचाइ स साक्षात्कार कराता ह। पयावरण की सुरक्षा के लिए विज्ञान के स्वर अव मुखर हुए है, जवकि भगवान् महावीर न ढाइ हजार वप पहले ही पृथ्वी, पानी वनस्पति आदि क सयम का सूत्र द दिया था। एक दृष्टि से हम अध्यात्म आर विज्ञान को विभक्त कर ही नहीं सकते। विज्ञान नियमा क आधार पर चलता ह। अध्यात्म के भी अपने नियम हे। विज्ञान न पदाथ क नियम खोज ह ओर अध्यात्म न चेतना के नियम खोज ह। दोनो की खाज अव भी जारी हे।

अणुव्रत काई काल्पनिक तत्त्व नहीं ह। भगवान् महावीर ने धम के वर्गीकरण म अणुव्रत शव्द का प्रयोग किया। हमने वही स इस शव्द का ग्रहण किया ह। इसकी अपनी दार्शनिक पृष्ठभूमि हे। दर्शन के परिप्रेक्ष्य मे ही इसकी वेज्ञानिकता का समझा जा सकता ह। विज्ञान का सम्बन्ध केवल लेवारटरी म होने वाले प्रयोगा से ही हे तो हमे यह स्वीकार करने म भी सकोच नही ह कि अणुव्रत की ऐसी कोइ प्रयोगशाला नही हे। इसकी एक मात्र प्रयोगशाला हे मनुष्य का जीवन।

जिज्ञासा—जितने धम-सम्प्रदाय ह, वे सव अपनी-अपनी सीमा मे काम करते हे। उन सवका स्वतन्त्र अस्तित्व हे। ऐसी स्थिति म सहिष्णुता-असहिष्णुता का प्रश्न ही क्यो उठाया जाता हे?

समाधान—सम्प्रदाय का निमाण किसी विशेष मान्यता पर हाता हे। मनुष्य अपनी मान्यता क परिप्रेक्ष्य मे अधिक सोचता हे। इसीलिए दूसरी मान्यता के प्रति उसके मन मे वोखलाहट पेदा हो जाती ह। वह इस वात को सहन नहीं कर पाता कि अपन विचारा से विरोधी विचार उसके सामने

आए। हर साम्प्रदायिक व्यक्ति का पूर्ण धार्मिक स्वतन्त्रता की बात मान्य है, पर अपने से भिन्न विचारों के प्रति उसकी कोई सहानुभूति नहीं है। दूसरे सम्प्रदाय का व्यक्ति अपने सम्प्रदाय की ओर आकृष्ट होकर धर्म परिवर्तन करता है, उसे उदारचेता, स्वतन्त्र चिन्तन का पक्षपाती, निर्भीक, साहसिक आदि उपाधियों से सम्मानित किया जाता है। किन्तु अपने सम्प्रदाय का कोई व्यक्ति सकारण धर्म परिवर्तन करता है तो भी उसे बुरा माना जाता है। इससे सम्प्रदायवाद का विष फलता है और धर्म जैसा शुद्ध तत्त्व विकृत हो जाता है। इसलिए सम्प्रदायों के प्रति सहिष्णु बने रहने की बात हर व्यक्ति के अपने हित में है। असहिष्णु मनोवृत्ति घृणा, स्पर्धा और ईर्ष्या के मनोभावों का सृजन करती है। जिस समय जो व्यक्ति या सम्प्रदाय शक्तिसम्पन्न होता है, जिसका जन बल-प्रबल होता है, वह विरोधी बात पसन्द नहीं करता और दूसरों के स्वतन्त्र अस्तित्व में बाधा उत्पन्न कर देता है। इसलिए सहिष्णुता का विकास आवश्यक है।

जिज्ञासा–विभिन्न सम्प्रदायों का अस्तित्व सहिष्णुता के लिए कसौटी है। यदि सम्प्रदाय समाप्त हो जाये तो सहिष्णुता किसके प्रति होगी? किन्तु सम्प्रदायवाद के रहते हुए असहिष्णुता का अन्त कैसे सम्भव है?

समाधान–मेरी दृष्टि में सम्प्रदायवाद और असहिष्णुता दो भिन्न स्थितियां नहीं हैं। मेरे सम्प्रदाय द्वारा स्वीकृत सिद्धान्त ही यथार्थ है, यह चिंतन सम्प्रदायवाद है और आगे जाकर यही असहिष्णुता में परिणत हो जाता है। असहिष्णुता का अन्त संभव है। वर्तमान परिस्थिति के सन्दर्भ में इसकी संभावना काफी बढ़ रही है। कोई भी समाज, राज्य या जाति असहिष्णु बनकर अपना हित नहीं साध सकती। असहिष्णुता के भयंकर दुष्परिणामों ने मनुष्य की चेतना को झकझोर डाला है। आज सहिष्णुता का मूल्य आंका जा रहा है और अतीत की अपेक्षा उसका क्षेत्र भी व्यापक बना है।

सहिष्णुता का प्रचार शिष्ट समाज के उच्च चिन्तन की धारा है। सहिष्णुता का स्वर प्रबल होने से व्यक्ति में सिद्धान्त के अनुरूप धारणा का निर्माण हुआ है। भावी पीढ़ी के संस्कार इस विचार सरणि से प्रभावित हैं। अन्य परम्परा सापेक्षता, सम्मान और विचार विनिमय का क्षेत्र खुल रहा है।

विरोधी बात का भी इस दृष्टि से स्वीकार किया जा सकता है कि हर व्यक्ति को स्वतन्त्र चिन्तन का अधिकार ह। किसी विरोधी तथ्य का अस्वीकार भी हा सकता है, पर उसक प्रति असहिष्णुता स व्यक्ति की अपनी स्वतन्त्रता का हनन हो जाता ह।

सहिष्णुता की भी अपनी मयादा ह। सामन वाला व्यक्ति या समाज एक व्यक्ति क सिद्धान्त या विचारा पर सीधा आक्रमण करता है, उस सहना बहुत कठिन है। व्यक्ति की अपनी मान्यता कुछ भी हो सकती है, पर दूसरा की मान्यता क प्रति कीचड उछालना असहिष्णुता है।

असहिष्णुता की यह मनावृत्ति धामिका म अधिक हाती ह। राजनीति या समाजनीति म यह क्रम नहीं ह, ऐसी बात नहीं। किन्तु वहा असहिष्णु होना आश्चय नहीं ह। धम के प्रतिनिधि सहिष्णुता का आदश मानकर चलते है, इसलिए उनकी असहिष्णुता असह्य हा जाती है। असहिष्णुता की निष्पत्ति आती ह तोड़फाड, मार काट और विराधी विचारा वाले व्यक्तियो को समाप्त करने की भावना। क्या धम मनुष्य का यह सब सिखा सकता है? धम मनुष्य का सहिष्णुता का पाठ पढाता ह। सहिष्णुता का विकास हान से ही सम्प्रदायवाद का अन्त हो सकेगा।

जिज्ञासा–सहिष्णुता आर असहिष्णुता की निष्पत्तिया क्या ह?

समाधान–सहिष्णु समाज स्वतन्त्रता प्रिय और उदारता प्रधान हागा और उसम दूसरो को खपाने की याग्यता होगी। जा समाज दूसरो का खपा सकता है, वह समथ और व्यापक बन सकता है। संस्कृति, जाति, भाषा, प्रान्त आदि की भिन्नता हान पर भी परस्पर सौहार्द से रहने वाला समाज कभी विघटित नही हाता। विभिन्न वर्गो म विभाजित शक्ति भी एक अखण्ड मानव-समाज के हितो मे अपना अमूल्य योग दे सकती है। अखण्डता की अनुभूति उस समाज की व्यापकता की प्रतीक है।

असहिष्णुता म पृथक्करण की मनोवृत्ति को बल मिलता ह। हिन्दुस्तान म इस वृत्ति न जातीय सघष क लिए पृष्ठभूमि तेयार कर दी, जाति क नाम पर लडाइया लडी गयी ओर एक अविभाजित मानवजाति विघटित हा गयी। असहिष्णुता की निष्पत्ति कभी अच्छी हो नही सकती। इससे व्यक्ति के मिथ्या अभिनिवेश का पाषण हो सकता है, अन्त नही। मिथ्या अभिनिवेश सामाजिक

पारिवारिक और वैयक्तिक शान्ति के लिए खतरा है। इसलिए अणुव्रत ने सहिष्णुता का व्रत प्रस्तुत किया। धर्म-सम्प्रदायो मे इस व्रत का व्यापक प्रयोग हो, यह वर्तमान की सबसे बडी अपेक्षा है।

जिज्ञासा—हिसात्मक परिस्थिति का अहिसात्मक प्रतिकार करने के लिए व्यक्ति मे किन विशेषताओ का होना अपेक्षित है?

समाधान—अहिसात्मक प्रतिकार के लिए व्यक्ति म सबसे पहले असाधारण साहस होना नितात अपेक्षित है। साधारण साहस हिसा की आग देखकर काप उठता है। जहा मन म कपन होता है, वहा स्थिति का समाधान हिसा म दिखायी पडता है। दर्शन का यह मिथ्यात्व व्यक्ति को हिसा की प्ररणा देता है। हिसा और प्रतिहिसा की यह परम्परा बराबर चलती रहती है। इस परम्परा का अत करने के लिए व्यक्ति को सहिष्णु बनना जरूरी है। सहिष्णुता के अभाव मे मानसिक सतुलन बिगड जाता है। मन सतुलित न हो तो अहिसात्मक प्रतिकार की बात समझ म नही आती इसलिए वैचारिक सहिष्णुता की बहुत अपेक्षा रहती है।

कुछ व्यक्ति विरोधी विचारो को सह सकते है, किन्तु उनम कष्ट-सहिष्णुता नही होती। थोडी-सी शारीरिक यातना से घबराकर वे अपने लक्ष्य से भटक जाते है। यातना की सभावना मात्र से वे विचलित हो जाते है, हिसात्मक परिस्थिति के सामने घुटने टेक देते है। जो व्यक्ति कष्ट-सहिष्णु होते है, वे विषम स्थिति मे भी अन्याय और असत्य के सामने झुकने की बात नही करते। ऐसे व्यक्ति अहिसात्मक प्रतिकार मे अधिक सफल होते है। उनकी कष्ट-सहिष्णुता इतनी बढ जाती है कि वे मृत्यु तक का वरण करने के लिए सदा उद्यत रहते है। जिन व्यक्तियो को मृत्यु का भय नही होता, वे सत्य की सुरक्षा के लिए सब कुछ कर सकते है। प्रतिरोधात्मक अहिसा का प्रयोग इन्हीं व्यक्तियो द्वारा किया गया है।

जिज्ञासा—तोडफोडमूलक विध्वसक प्रवृत्तियो से समाज को बचाने के लिए हिसक व्यक्तियो की माग स्वीकार कर लेनी चाहिए अथवा उनके साथ सघर्ष करते रहना चाहिए?

समाधान—व्यक्ति तोडफोडमूलक प्रवृत्तियो का सहारा लेता है अपनी दुर्बलता छिपाने के लिए। पर उससे उसकी दुर्बलता को अभिव्यक्ति मिलती

है। कोई भी सक्षम व्यक्ति अपनी माग पूरी कराने के लिए हिसा को प्रश्रय नही दे सकता। अहिसक व्यक्ति के लिए एसी स्थिति म ओचित्य, अनोचित्य का निधारण करना बहुत जरूरी हे। यदि माग मे ओचित्य हे तो उसे स्वीकार करन मे कोइ बाधा नही होनी चाहिए अन्यथा हिसा क सामन झुकना सिद्धात की हत्या करना हे। दूरगामी कठिनाइयो की बात सोचकर हिसा क सामने घुटने टेकना कायरता हे। कायरता उतना ही बडा पाप ह, जितना बडा हिसा का पाप। कायर व्यक्ति सहन नही कर सकता आर सहिष्णु कभी कायर नही हो सकता। कायरता आर सहिष्णुता, ये दो भिन्न दिशाए हे। एक व्यक्ति इन दोनो दिशाओ म एक साथ नही गुजर सकता। हिसात्मक स्थितियो से डटकर मुकाबला करने के लिए सहिष्णुता का विकास होना बहुत अपेक्षित हे। कायरता का मनोभाव हिसा के साथ समझोता करता हे अथवा व्यक्ति की वृत्तियो को हिसा की ओर बढने क लिए उत्तेजित करता ह। इसलिए सघर्ष म कायरता का परिचय व्यक्ति की पहली पराजय ह।

कभी-कभी ओचित्य के आधार पर भी तोडफोडमूलक प्रवृत्तिया होती ह। मेरी दृष्टि म यह स्वस्थ पद्धति नही ह। इसे हम विवशता या बाध्यता मानकर छोड सकते हे, करणीय नही मान सकते। हिसा ओर अहिसा का यह द्वन्द्व शात हो सकता ह, किन्तु यह शाति हिसा के सामने झुकने से नही, उसके साथ सघर्ष करने से प्राप्त होती हे। सघर्ष के बाद जो शाति मिलती हे, वह अहिसा की उपादेयता को सिद्ध करती हे। हिसा के साथ समझोता करने से एक बार ऐसा अनुभव होता हे कि वातावरण शात हो रहा हे, पर कुछ समय बाद वह ओर अधिक उग्र हो जाता हे। अत मे यह मानकर चलता हू कि सघर्ष हो या समझोता, उसम ओचित्य का लघन नही होना चाहिए। वस्तुत सेद्धातिक आधार से निर्मित स्थिति ही सघर्ष-मुक्ति का साधन हे।

जिज्ञासा--आज आतकवाद के क्षेत्र मे अपहरण की नइ सस्कृति तेजी क साथ पनप रही हे। आपकी दृष्टि म इसका मूल कारण क्या ह? आर उसका समाधान कैसे किया जा सकता ह?

समाधान--अपहरण की सस्कृति सत्ता ओर सम्पदा की आकाक्षा का फलित ह। सत्ता हथियाने के लिए ओर सम्पदा बटोरने के लिए आतकवाद

अस्तित्व म आया। शस्त्रशक्ति और आतकवाद के सघन प्रशिक्षण स एक वग म क्रूरता पनपी। उस क्रूरता की एक अभिव्यक्ति ह अपहरण। किसी राजनयिक या महत्त्वपूर्ण व्यक्ति का अपहरण कर उसकी फिराती म अनेक आतकवादिया की रिहाइ ओर सम्पन्न व्यक्ति की फिराती म लाखा रुपये वसूलने का मनाभाव अपहरण की मूलभूत प्ररणा ह।

आतकवाद या अपहरण-नीति की पृष्ठभूमि मे कइ कारण हो सकत हे। उनम एक कारण हे आथिक विपमता। कहीं-कहीं वपम्य इतना अधिक ह कि एक ही स्थान पर स्वग और नरक दाना को देखा जा सकता हे। एक व्यक्ति के पास अट्टालिकाए ह, दूसरे व्यक्ति क सिर पर छत भी नही ह। वह अपनी जिन्दगी फुटपाथ पर विताता ह। एक आर भाजन पचान क लिए गोली खानी पडती हे, दूसरी ओर पेट पालन के लिए पूरा भाजन नही मिलता। एक ओर दिन म चार वार ड्रस का परिवतन होता ह तथा तीन सा साठ दिनो के लिए दिनो की सख्या से भी अधिक ड्रेसज हाती ह। दूसरी आर तन ढकने के लिए पूरा वस्त्र नही मिलता। यह विपमता विद्राह का जन्म देती ह।

विद्राही व्यक्ति क्रूर वन जाता ह। क्रूरता सीमा को पार कर जाती हे तो व्यक्ति कुछ भी कर सकता ह। प्राचीन काल मे राहजनी और हत्या जेसे अपराध होते थे। इस दिशा मे मनुष्य नए-नए रास्ते खोजता जा रहा ह। अपहरण मे खतरे कम हे आर लाभ अधिक ह। लागा की दृष्टि म यह एक सोधा सरल व्यवसाय हो गया ह। एक-दो वार की सफलता व्यक्ति का होसला वढा देती ह। इस सस्कृति न मनुष्य की निश्चिन्तता और निभयता समाप्त कर दी।

काइ भी वीमारी वढ जाती हे उग्र रूप धारण कर लेती ह ता उसे मिटाने म जोर पडता हे। समय, श्रम ओर अथ लगान पर भी वीमारी मिटे या नही, कोइ गारटी नहीं देता। अपहरण की सस्कृति भी एक एसी ही असाध्य वीमारी का रूप लती जा रही हे। वीमारी मिटे या नहीं, प्रयत्न करना जरूरी हे। जन दशन म अवसपिणी काल का वणन मिलता ह। उसक अनुसार श्रेष्ठताआ का उत्तरोत्तर ह्रास हाता जाता हे। वह हम प्रत्यक्ष दिखाइ द रहा ह। इस स्थिति मे मनुष्य सादगी, श्रम आर सयम का पाठ पढ।

जन-जन के मन म अहिसा और आत्मसयम क सस्कार जागे, यही इस समस्या का समाधान हो सकता ह।

जिज्ञासा–राजनीति क मच से उभरने वाल आरक्षण क नए प्रकल्प ने छात्रो के आक्राश को अभिव्यक्त होने का एक माका दिया ह। उनका यह कदम निश्चित रूप स बुद्धिमत्तापूण नहीं हे। क्या इसके विकल्प मे उनके सामने काइ नया विचार रखा जा सकता हे?

समाधान–राजनीति के मच स कोई भी बात उठती ह, उस राजनीति के रग से रग दिया जाता हे। आरक्षण के नाम पर छात्रो मे जो आक्रोश उभरा या उभारा गया ह, वह सुचिन्तित कम हे ओर उत्तजनात्मक अधिक ह। मुझे ऐसा लगता हे कि विद्यार्थिया मे नइ साम्प्रदायिकता पदा की जा रही हे। कुछ लोगो की ऐसी मनोवृत्ति हाती ह कि व हर वात को आन्दोलन का रूप दे दते हे। लाभ अलाभ पर विचार किए विना किसी भी आन्दोलन का गति देना अपने पाजा पर कुल्हाडी चलाना हे।

छात्रा को कुछ करना ही हे तो उनके सामने बहुत रचनात्मक काम ह। आवश्यकता एक ही ह कि वे प्रवाहपाती बनकर अपने कीमती जीवन को व्यथ न खोए। उनक सामन एक वडा काम हे नशा-मुक्ति का अभियान। नश की सस्कृति न विद्यार्थिया का कितना अहित किया हे, किसी स अज्ञात नही हे। भ्रष्टाचार पर किसी का अकुश ही नही रहा हे। सामाजिक बुराइया भी नए-नए चहर बनाकर प्रकट हा रही ह। इन सबके विरोध मे युवा शक्ति का सम्यक् नियोजन हा तो एक बडी क्रान्ति घटित हा सकती हे ओर देश का भला हो सकता हे। केवल आन्दोलन की सीढिया के सहारे निमाण के शिखर पर आरोहण नहीं हा सकता।

जिज्ञासा–सामाजिक विकास का गति दन के लिए क्या आप आरक्षण की नीति को उपयोगी मानत हे?

समाधान–जातीयता क आधार पर आरक्षण का सवाल विवादास्पद बन जाता हे। जाति, सम्प्रदाय, अल्पसख्यक आदि मुद्दो से मुक्त होकर कवल दश क कमजार तवक का उठाने के लिए कोइ उपक्रम साचा जाता हे, उसे गलत नहीं कहा जा सकता। राष्ट्र क सब नागरिक ऊचे स्तर का जीवन जी रह हा ओर कोइ वग-विशष सदिया से गरीब हो, अविकसित हो उसक लिए

मुश्किल एक ही हे कि पतिस्पर्धाओ के इस युग म आदमी पीछे रहना नहीं चाहता या रह नहीं सकता। फिर भी कहीं-न-कहीं तो ब्रेक लगाना ही होगा। मनुष्य अपनी इच्छाओ आर आवश्यकताआ को सन्तुलित नहीं करेगा तो शान्ति से जी नहीं सकगा।

जिज्ञासा–दैनिक पत्रा के मुख पृष्ठ अपहरण, हत्या, आगजनी दुघटना आदि सवादो से पटे रहते हे। व्यक्ति के भावनात्मक स्वास्थ्य का योगक्षेम करने के लिए क्या इस शेली म वदलाव जरूरी नहीं हे?

समाधान–भावनात्मक स्वास्थ्य के लिए आर भी अनेक बात आवश्यक ह, पर उनकी आर ध्यान कोन दता ह? मानव के ही नहीं, मानवीय सस्कृति के यागक्षेम का दायित्व भी 'मीडिया' पर ह। किन्तु लगता हे कि इस विपय मे कोइ नीति निधारित नहीं हे। समाचार पत्र हो, रेडियो हो या दूरदशन हो, इनसे सम्वन्धित व्यक्ति गम्भीर चिन्तन के साथ राष्ट्र-निर्माण-मूलक सवादा को प्राथमिकता दे तो यह समस्या सुलझ सकती हे।

मीडिया का काम हे पाठक, श्रोता या दशक को वस्तुस्थिति का ज्ञान कराना। पर पत्रकार क्या करगे, जव पाठक अपहरण, हत्या, दुर्घटना आदि सवादो मे ही रस लेते हा। पाठका की रुचि परिष्कृत हो, वे जीवन-मूल्यो से सम्वन्धित सवादो म विशेप रुचि ले तो पत्रकारा को अपनी शली वदलनी ही पडेगी। अन्यथा जो प्रवाह चल रहा हे, वह इतना तीव्रगामी हे कि छोटे प्रयास से उसमे वदलाव की सभावना नही की जा सकती।

जिज्ञासा–श्रमिक-वग हिसात्मक उपद्रवो और तोडफोडमूलक प्रवृत्तिया मे भाग लेता हे, इसक पीछे कोन-सी प्रेरणा काम करती ह?

समाधान–वतमान ओद्योगिक युग म श्रमिक-वग बहुत वडा वर्ग हे। वह वग दूसरे वर्गो की अपक्षा अधिक सक्षम ओर स्वावलम्वी हे। उसके स्वावलम्वन का आधार ह उसका अपना पुरुपाथ। जो व्यक्ति पुरुपार्थ नही करते, वे प्रमाद ओर हीनभावना से आक्रान्त रहते हे। धनिक वग प्रमादी हाता हे तथा भिखारी हीनता का अनुभव करते ह। श्रमिक स्वावलम्वी हाते हे, अत वे उक्त दोना प्रकार की वुराइयो से मुक्त रहते हे। सामाजिक जीवन पद्धति मे यह पद्धति सवसे अधिक निर्दोप हो सकती ह। फिर भी समाज एक सक्रमणशील सस्था हे। उसमे ऐसी लोह दीवार नही ह, जिससे

एक दूसर क विचारा का सक्रमण न हा। इस सक्रमणशीलता स श्रमिक-वग की निष्ठा आर प्रामाणिकता प्रभावित हाती है। यह प्रभाव दो प्रकार स होता ह—अनुसरणशीलता से और विद्रोह की भावना स। श्रमिक वग म दूसर वर्गों क विचारा का प्रभाव सक्रान्त हाता है, फलस्वरूप कुछ बुराइया सक्रिय हा जाती है। सामाजिक कुरीतिया का जहा तक प्रश्न ह, उनका सक्रमण अनुकरणशीलता स हाता ह। अप्रामाणिकता की वृत्ति चारित्रिक दुवलता स प्रोत्साहित हाती ह आर अपन श्रम के शापण जनित विद्रोह से भी। उस समय उनक मन म यह भाव उत्पन्न हाता ह कि वे श्रम अधिक करते ह पर उसका फल कम प्राप्त होता ह। श्रम नहीं करने वाले अमीरी भोग रह ह और श्रमिका का अभावा स गुजरना हाता ह। इस प्रकार की मनावृत्ति स श्रम-निष्ठा म कमी आती ह। निष्ठा के अभाव में पनपती हुइ अप्रामाणिकता क प्रवाह को राका नही जा सकता। इस दृष्टि स श्रमिका की प्रामाणिकता उनकी अपनी चरित्रनिष्ठा आर सामाजिक सक्रमण, दानो पर निभर है।

जिज्ञासा—श्रमिक-वग की प्रामाणिकता का दायित्व क्या समाज के साथ भी कोई अनुवध रखता ह?

समाधान—श्रमिका क मन का असतोप, उनकी कठिन परिस्थितिया ओर अनुचित प्रात्साहन उन्हें हिसा की प्रेरणा दते हे। इसका मूलभूल कारण हे तामसिक वृत्तिया। वृत्तिया सात्विक हा तो कोइ भी परिस्थिति व्यक्ति को बुराइ के माग पर नही ले जा सकती। तामसिक वृत्तिया से मन का असतोप प्रवल होता ह। आथिक आर सामाजिक कठिनाइया मन को असतुलित बनाती ह। असताप और असतुलन की स्थिति म व्यक्ति अपने करणीय ओर अकरणीय का विवक नही कर सकता। जिस समय व्यक्ति आथिक अभावा से आक्रात होता है, वह हर सम्भव उपाय स उस स्थिति को निरस्त करना चाहता हैं। कुछ व्यक्ति एसे भी होते ह जो अथ की अपेक्षा चरित्र को अधिक मूल्य देते ह। किन्तु ऐसे निष्ठावान् व्यक्ति कम मिलते ह। सामान्यत व्यक्ति अपनी दुवलता से जूझना नही चाहता। उसे समाहित करने का प्रयत्न करता हे। अथ मानव-समाज की एक वडी दुवलता ह। इसके लिए श्रमिक वग का थाडा-सा उकसा दिया जाए, उसे कुछ सुविधाओ और अर्थ-प्राप्ति का प्रलोभन मिल जाए ता वह सव कुछ करन क लिए तेयार हा

जाता है। कुछ व्यक्ति अपने स्वाथ के लिए अभावग्रस्त व्यक्तियो का दुरुपयोग करते हे ओर उन्हे हिसा की आग म धकेल देते ह।

जिज्ञासा–श्रमिक अपन कत्तव्य के प्रति जागरूक केस रह? इसके लिए आपका क्या निर्देश हे?

समाधान–वृत्तिया तीन प्रकार की होती हे–सात्विक, राजसिक आर तामसिक। इनका सम्बन्ध सतोगुण, रजोगुण ओर तमोगुण से हे। इनकी उत्पत्ति भोजन, वातावरण ओर स्वभाव–इन सब पर निभर करती ह। जिस व्यक्ति को उत्तेजित खाद्य पदाथ ओर उत्तेजक वातावरण उपलब्ध होता हे, उसके स्वभाव मे मादकता आती हे, उग्रता आती हे ओर वह अपनी कोमलता खो देता हे। श्रमिक-वर्ग मद्यपान ओर धूम्रपान जसी गलत आदता का निर्माण कर अपनी वृत्तिया म तामसिकता आने का द्वार खोलता ह।

आज एक धारणा सक्रान्त हो रही हे कि श्रमिक-वग को मनोरजन के लिए या चिन्ताओ से मुक्त रहने कि लिए मादक द्रव्या का सेवन करना चाहिए। यह धारणा कल्याणकर नही हे। जो व्यक्ति ऐसा तक प्रस्तुत करते हे या इसके आधार पर मादक पदार्थो का सेवन करते ह, वे श्रमिक-वग का हित नही करते। मनारजन के साधनो की अपेक्षा हर व्यक्ति को हो सकती ह। चिन्ता-मुक्ति के लिए प्रयत्न करना भी आवश्यक हे। किन्तु वे प्रत्यन्न ऐसे हो जिनका आथिक ओर चारित्रिक दृष्टि से दुष्प्रभाव न हो।

सरस, सुन्दर आर ललित वस्तु के दशन, उपयोग आदि से कायजा क्षमता वढती ह। नीरस वातावरण मे क्षमता क्षीण होती ह। यह एक मनोवेज्ञानिक सिद्धात हे। हम इस सिद्धान्त को स्वीकार करते ह, पर हम इस बात को भी मानत ह कि सरसता, सोन्दय ओर लालित्य वहीं हो सकते हे, जहा असरसता, असान्दर्य ओर कठोरता निष्पन्न न हो। मादक पदार्थो के सवन स होन वाली क्षणिक सुखानुभूति या विश्रामानुभूति परिणामकाल म जीवन का ऊवड-खाबड वना दती हे, इसलिए उसकी उपयागिता को स्वीकार नहीं किया जा सकता। मादक पदाथ जीवन के लिए अहितकर ह। भारतीय परपरा म मनोरजन और चित्त की प्रसन्नता या निश्चिन्तता क जो सात्विक साधन थ, उन्ह भुला दिया गया। सात्विकता की विस्मृति ने तामसिक साधना को महत्त्व देने की मनोवृत्ति का निमाण किया आर वृतिया मे तामसिकता

रा स्वाद मिल गया।

जिज्ञासा–सात्विक वृत्तियों की उन्नति के सम्बन्ध में आपका क्या अभिमत है?

समाधान–प्राचीनकाल में मानसिक आनन्द और चिन्तामुक्ति के सबसे बड़े साधन थे भक्ति और समर्पण। भक्ति रस में आकण्ठ निमग्न व्यक्ति इतना तन्मय होता है कि सारी समस्याओं की विस्मृति हो जाती है। समर्पण के दो रूप हैं–अपने उपास्य के प्रति और प्रकृति के प्रति। जो व्यक्ति समर्पित होता जाता है, वह चिन्ताओं के भार से आक्रान्त नहीं होता, स्वयं को वासित पाता जाता।

मद्यपान के द्वारा भी एक बार चिंताओं की विस्मृति होती है, पर उसके साथ आत्मविस्मृति भी हो जाती है और व्यक्ति गलत कार्य में प्रवृत्त होता है। भक्ति और समर्पण में वास्तविकता सामने रहती है। जिस व्यक्ति का चिंतन सार्वभौम सत्य की धाराओं पर केन्द्रित रहता है, उसका समर्पण ही उसे आनन्दानुभूति दे सकता है।

वर्तमान में जो व्यक्ति आदिवासी मनुष्य जैसा जीवन जीता है, जो सामाजिक सम्पर्क में नहीं आया है, वह भक्ति और समर्पण से अपने जीवन को आनन्द से आप्लावित रखता है। किन्तु वही व्यक्ति जब समाज के संपर्क में आता है, अपनी वृत्तियों को रूढि और अन्धविश्वास के साथ जोड़ता है, सात्विकता के प्रति उसकी आस्था कम हो जाती है। सात्विकता का ह्रास और चिंताओं का विकास उसे मादक पदार्थों के निकट ले जाता है, फलतः तामसिकता बढ़ने लगती है। तामसिकता की वृद्धि से हिंसा, तोड़-फोड़, प्रमाद, कर्त्तव्य पालन में आलस्य आदि दुष्प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन मिलता है। अतः श्रमिक-वर्ग के लिए व्यसनमुक्ति अत्यन्त आवश्यक तत्त्व है।

जिज्ञासा–उन सात्विक साधनों की चर्चा आप करें, जो भारतीय परम्परा में स्वीकृत थे।

समाधान–श्रमिक का सही रूप है उसकी निष्ठा और जागरूकता। जिस व्यक्ति की कर्तव्य पालन में निष्ठा है, वह प्रमाद, अन्याय या मुफ्तखोरी जैसा कोई काम नहीं कर सकता। कर्त्तव्य-भावना की कमी का एक कारण राष्ट्रीय प्रेम की न्यूनता भी है। अपने राष्ट्र के प्रति उदात्त प्रेम होगा तो

प्रमाद जसी स्थिति को पनपने का अवकाश ही नही मिलेगा। परिवार ओर अपने चरित्र-वल के लिए भी व्यक्ति के कुछ कत्तव्य होत ह। श्रमिक अणुव्रत के नियम कत्तव्य के प्रति जागरूक रहने के लिए ही ह। जिस श्रमिक का जीवन सस्कारी होता हे, जिसमे किसी प्रकार का दुव्यसन नही होता, जो जुआ नही खेलता, वाल-विवाह, मृत्युभोज जसी सामाजिक कुरीतिया को प्रश्रय नही देता, अपने अजित अथ का सुरा, सिनमा, सिगरेट आदि आदता की पूर्ति के लिए अपव्यय नही करता, श्रम से जी नहीं चुराता ओर अपन दायित्व के प्रति जागरूक रहता ह, वह श्रमिक कभी कर्त्तव्य-च्युत नही हो सकता। श्रमिक जीवन एक प्रशस्त जीवन-पद्धति ही नही, दश की वहुत वडी शक्ति ह। श्रमिक अणुव्रत की धाराए इस शक्ति को चारित्रिक सपदा से परिमडित कर कत्तव्य-पालन की अपूव क्षमता दे सकती ह।

जिज्ञासा—जेन धम का विशिष्ट पर्व सवत्सरी भगवान् महावीर की देन हे अथवा उससे पूव भी यह पव मनाया जाता रहा ह? प्राचीन काल मे उसका स्वरूप क्या था?

समाधान—पयुपण की परम्परा अहत् पाश्व के समय म भी थी। अन्तर इतना ही हे कि भगवान् महावीर के समय मे पयुपण कल्प अनिवाय हा गया आर अहत् पाश्व के समय मे वह ऐच्छिक कल्प के रूप म मान्य था। उस समय के साधु आवश्यकता समझते तो पयुपणा करत। आवश्यकता प्रतीत नहीं होती तो नहीं भी करत।

पयुपणा का मूल आधार चातुमासिक प्रवास हे। चातुमास म वपा होती हे। वपा क दिनो म हरियाली वढ जाती हे। अनेक प्रकार के जीव जन्तु उत्पन्न हो जाते ह। माग चलने याग्य नही रहता। इस स्थिति म मुनि के लिए एक स्थान म रहन की व्यवस्था हे। इसके आधार पर ही पयुपणा की कल्पना की गइ। उसके साथ तपस्या, विगय का प्रत्याख्यान, प्रतिसलीनता, स्वाध्याय, ध्यान आदि कुछ व्यस्वस्थाए योजित की गइ।

अहन् पाश्व के समय पयुपण की व्यवस्था किस रूप म चलती थी, उसका कोइ स्वतत्र उल्लख प्राप्त नहीं ह। भगवान् महावीर के समय म भी उसका क्या स्वरूप था कहना कठिन ह। छेद सूत्रा मे पयुपण विपयक कुछेक निर्देश मिलते ह। इनका विशद वणन 'पयुपण कल्प म उपलब्ध हे। वह

महावीर-निर्वाण के बाद की रचना है। इसलिए उसमें उत्तरवर्ती व्यवस्थाएं जुड़ी हुई हैं। सामान्यत इतना कहा जा सकता है कि पर्युषण का सम्बन्ध चातुर्मास की स्थापना से है। भाद्रपद शुक्ला पचमी का दिन उस दृष्टि से आखिरी दिन है। उसका अतिक्रमण नहीं हो सकता। उस दिन सावत्सरिक उपवास किया जाता था। विगय वर्जन आदि के सकल्प भी चलते थे। इनका विकास उत्तरकाल में हुआ प्रतीत होता है।

जिज्ञासा—एक ही परम्परा में एक सर्वोत्कृष्ट पर्व भिन्न भिन्न समय में मनाने की प्रथा कब और क्यों प्रचलित हुई?

समाधान—जैन शासन में दो मुख्य परम्पराएं हैं—श्वेताम्बर और दिगम्बर। दिगम्बर परम्परा में आगम सूत्रों का अस्वीकार कर दिया गया। फलत अनेक परम्पराएं छूट गई। आश्चर्य है कि उस परम्परा में पर्युषण जैसे पर्व का कोई विवरण उपलब्ध नहीं है। दिगम्बर लोग 'दस लक्षण' मनाते हैं। उसका प्रारम्भिक दिन पचमी है। श्वेताम्बर परम्परा में प्राचीन काल से ही पर्युषण या सवत्सरी के लिए भाद्रपद शुक्ला पचमी का दिन निर्धारित रहा है।

कालकाचार्य ने विशेष परिस्थितिवश भाद्रपद शुक्ला चतुर्थी को सवत्सरी का पर्व मनाया था। इतिहास बताता है कि प्रतिष्ठानपुर का राजा शातवाहन कालकाचार्य के सम्पर्क में आया, उनसे प्रभावित हुआ। कालकाचार्य ने सवत्सरी पर्व का महत्त्व समझाया। शातवाहन ने प्रार्थना की—'गुरुदेव ! मैं सवत्सरी पर्व की आराधना करना चाहता हूं। पर मेरे सामने एक समस्या है। पचमी के दिन हमारे नगर में इन्द्र महोत्सव का आयोजन है। उसमें मेरी उपस्थिति अनिवार्य है। इस कारण मैं सवत्सरी पर्व की आराधना में भाग नहीं ले सकूंगा। आप इस पर्व को छठ के दिन मना लें तो मैं वहा से निवृत्त होकर यहा पहुच जाऊंगा।'

कालकाचार्य ने कहा—'यह असभव है। हमारे आगम पचमी का दिन अतिक्रान्त करने की अनुमति नहीं देते।' राजा ने निवेदन किया—'सभव हो तो इस पर्व का आयोजन एक दिन पहले चतुर्थी को कर लें।' इस प्रस्ताव को उन्होंने मान्य कर लिया और चतुर्थी को सवत्सरी मना ली। विशेष परिस्थिति में किया गया प्रयोग स्थायी बन गया। इस प्रकार श्वेताम्बर परम्परा में सवत्सरी मनाने के दो दिन हो गए—पचमी और चतुर्थी। चतुर्थी का

सवन्सरी मनाने वाले भी स्वीकार करने ह कि आगम की दृष्टि से पचमी का दिन ही ह। पर कालकाचाय ने चतुर्थी को सवन्सरी की, इसलिए हम भी उसी का मानने ह। कालकाचाय का समय विक्रम पूव प्रथम शताब्दी हे।

जिज्ञासा–अनेकान्त के उपासक सभी जनाचाय तीव्र प्रयत्न के वावजूद सावत्सरिक एकता क सम्वन्ध मे अव तक एक मत क्या नही हो सके? क्या निकट भविष्य म उनके एकमत होने की कोइ सभावना ह?

समाधान–अनेकान्त दर्शन हे, एक सिद्धान्त हे। उसका व्यवहार म प्रयोग हो रहा हे, एसा नही माना जा सकता। वास्तविकता तो यह ह कि अधिकाश जन अनेकान्त को समझत ही नही ह। जो थोडा-वहुत जानते ह, उन पर भी परम्परा आर साम्प्रदायिकता की छाया रहती ह। जो प्रश्न उपस्थित किया गया ह, अनेकान्तवादियो के सामने वहुत वडा प्रश्न हे। आज के वज्ञानिक और वोद्धिक युग मे इसे उत्तरित नहीं किया गया तो प्रश्नचिह्न आर वडा हो जायेगा।

इस सन्दभ म हमार मन म एक कल्पना ह। उसके अनुसार जेनशासन के प्रभावशाली आचार्यो, मुनिया, श्रावका आर विद्वाना की एक सगीति आवश्यक ह। उसके लिए विलम्व न हो। निकट समय म उसकी सम्यक् आयोजना हा। हम इसम उक्त समस्या का समाधान दिखाई द रहा हे। सव लाग एक साथ वठकर चिन्तन करे, समीक्षा कर आर पयालोचन कर तो अवश्य ही एकता का पथ प्रशस्त हो सकता हे। केवल 'सवत्सरी का ही नही, आर भी अनक प्रश्नो का समाधान हा सकता ह।

सगीति कव हो? कहा हो? ओर केस हो? इसका निधारण सम्प्रदायो के कुछ प्रतिनिधि मिलकर कर। हमन इस दिशा म पहल की हे। कुछ विद्वाना, साहित्यकारा, पत्रकारा आर मुनिवरो से इस विपय म चचा भी प्रारम्भ की हे। यह चचा आगे वढ, सामूहिक रूप ले आर इसक वाछित परिणाम सामने आए, यह आवश्यक हे।

जिज्ञासा–क्या जन मतावलम्वी अपने इस महापव की आराधना मे पास पडास के लागो का सम्मिलित करने का प्रयत्न करन ह?

समाधान–पयुपण पव जितना महान् ह, आध्यात्मिक, सामाजिक एव पारिवारिक दृष्टि स जितना उपयागी हे उस अनुपात म उसे मनान का

व्यापक प्रयत्न कहा होना है कुछ व्यक्ति थोडा बहुत प्रयत्न करते है। पर इसका समुचित मूल्यांकन होना इसके प्रचार प्रसार में जन लोग शक्ति लगाने तो यह एक सार्वजनिक पर्व का रूप ले लेता। एक पर्युषण पर्व का क्या, अन्य किसी विषय में भी अपेक्षित प्रचार प्रसार कहा होता है ? जन लोग इस अपेक्षा को समझ नही है अथवा उनका ध्यान इधर गया नहीं है।

पर्युषण पर्व का आध्यात्मिक मूल्य स्पष्ट है। इसका सामाजिक और पारिवारिक मूल्य भी कम नहीं है। समाज और परिवार में सौहार्द की स्थापना में इसकी मूल्यवान् भूमिका हो सकती है। इस दृष्टि से इसको सौहार्द या मैत्री का पर्व कहा जा सकता है। यदि बडे पैमाने पर सामाजिक एवं पारिवारिक वातावरण में व्यापक मैत्री पर्व की समायोजना हो तो भीतर ही भीतर घुलती अनेक गांठे खुल सकती है। आपसी वैर विरोध का शमन हो सकता है। अदालत का दरवाजा खटखटाने से छुट्टी हो सकती है। घर की देहलीज के भीतर पांव रख परिवार में जहर घोलने वाली अन्य अनेक समस्याओ का समाधान खोजा जा सकता है।

मैत्री का यह पर्व विश्व के इतिहास का एक महत्त्वपूर्ण दस्तावेज है। इसे किसी भी सम्प्रदाय की सीमा में आबद्ध करने का कोई औचित्य नहीं है। यह शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व का पर्व है। सौहार्द का पर्व है। सहिष्णुता का पर्व है। जीवन के प्रति जागरूक बनाने वाला पर्व है। सामूहिकता का पर्व है। इसमे सबकी सभागिता हो, यह आवश्यक है।

जिज्ञासा—हजारो वर्षो से चले आ रहे इस महापर्व से भारत वर्ष का लोक जीवन कहा तक प्रभावित हुआ है ? क्या इस दिन के उपलक्ष्य में देश भर में अहिंसा दर्शन के सक्रिय प्रशिक्षण की कोई व्यवस्थित रूपरेखा बनाई जा सकती है ?

समाधान—इस पर्व का जितना प्रसार हुआ है, उतनी सीमा में जन जीवन प्रभावित भी हुआ है। बहुत प्रसार भी नहीं हुआ, इसलिए व्यापक प्रभाव की बात भी कैसे सोची जा सकती है ? विगत कुछ वर्षो से सवत्सरी पर्व के दिन को अहिंसा दिवस के रूप में मनाने की बात चर्चा में है। भारत सरकार के सामने भी यह प्रस्ताव रखा गया कि सवत्सरी पर्व को अहिंसा दिवस के रूप में घोषित किया जाय। किन्तु जब तक सब जैन एक दिन को स्वीकार नही

कर लेत, यह बात आगे नहीं बढ सकती।

यदि सब जेना का एक दिन मान्य हो जाए ता अहिसा दिवस की कल्पना साकार हो सकती हे। उसके साथ अहिसा के प्रशिक्षण की बात भी जोडी जा सकती हे, एसा स्पष्ट आभासित हा रहा ह। अहिसा युग की माग हे। आज की अनेक समस्याआ का समाधान हे। अहिसा दिवस के परिप्रेक्ष्य म अहिसा प्रशिक्षण की याजना का बहुत व्यापक रूप दिया जा सकता हे। अब भी इस विपय म कोइ ठोस काम नहीं हुआ तो समय हाथ से निकल जाएगा। विश्व की सस्कृति क लिए मूल्यवान् हमारा यह महापव कब तक सब सहमति की पतीक्षा करता रहेगा?

जिज्ञासा—भगवान् महावीर क दशन म विश्व दशन बनन की क्षमता ह, यह बात कइ लोगा के मुह से सुनी ह। फिर भी एसा लगता नहीं कि वह विश्व दशन बनने जा रहा ह। इस सन्दभ म आपका क्या चिन्तन ह?

समाधान—जन दशन मे विश्व दशन बनने की क्षमता ह, यह तथ्य निर्विवाद ह। एसा व्यापक, उदार ओर वज्ञानिक दशन दुलभतम होता ह। कुछ बात व्यापक होती ह, पर वज्ञानिक नही हाती। कही वेज्ञानिकता होती हे, किन्तु व्यापकता नहीं हाती। जेन दशन मे एक साथ सारी बाते मिल जाती हे। पश्न हे वह विश्व दशन क्या नहीं बना? क्या नही बन रहा? ऐसी जिज्ञासा अस्वाभाविक नही हे, क्याकि जन धम या दशन के मच स एसा कुछ भी नही हा पाया ह। किन्तु जेन दशन के मालिक सिद्धातो —सापेक्षता, समन्वय सहअस्तित्व आदि की गूज पूर विश्व म हे। विश्व के लोग जन नहीं बन, यह सचाइ हे। फिर भी जहा कही सापक्षता, समन्वय आदि जीवनशली के साथ जुडग, वहा महावीर का दशन स्वत फलित हा जाएगा।

इस सन्दभ म जाधुपर राटरी क्लब का एक प्रसग उद्धृत करना चाहता हू। वहा एक पबुद्ध व्यक्ति न प्रश्न पूछा—'जन लोगा की सख्या इतनी कम क्या ह?' मन कहा—'सख्या की दृष्टि स जितन आकडे सामन आय ह, व सही नहीं ह। क्याकि इन आकडा म उन सब लोगा का सम्मिलित किया गया ह जा जन परिवार म जनम ह। जना म बहुत लोग ऐसे हो सकत ह, जिनको न ता जन सिद्धाता की जानकारी ह आर न वे उन सिद्धाता का पालन करत ह। ऐस लागा का गणना म सम्मिलित न कर तो जना की

सख्या ओर कम हो जाएगी। किन्तु इसके साथ एक दूसरा दृष्टिकोण भी है—'जो लोग जन नहीं है, फिर भी अहिसा म आस्था रखत है, उन्हे कमणा जन क्या नही माना जाए?

जिज्ञासा—भगवान् महावीर जातिवाद को अतात्त्विक मानत थे। फिर भी उनके द्वारा प्रवर्तित धम—जन धम आज एक जाति विशेष के कटघर म आवद्ध क्या हो गया?

समाधान—भगवान् महावीर ने जिस धम का प्रवतन किया वह उनके अनुयायियो द्वारा इतना धूमिल कर दिया गया कि स्वय महावीर आकर देख तो सोचगे कि क्या यह वही धम है, जो मेरे द्वारा प्रवर्तित है? उनका धम आत्मशुद्धि या आत्मशान्ति के लिए था। धम के आचरण से जीवन पवित्र बनना था। इस नितान्त शुद्ध धर्म मे ऐसे तत्त्वो की घुसपैठ हो गई जो उसे क्रियाकाण्डो तक ही सीमित रखने है। लोकरजन के लिए या रूढता के सहारे चलने वाला धम अपने स्वरूप की सुरक्षा कैसे कर पाएगा? कब थी धम म छुआछूत की भावना? कब थी धर्म पर जातिवाद की प्रतिबद्धता? कब था धर्म म द्रव्य पूजा का प्रचलन? कब था धम म परिग्रह का प्रचलन? कब था धर्म म परिग्रह का प्रवेश? स्वय भगवान् महावीर को कितने आडम्बर और परिग्रह से जोड दिया गया है।

मेरा यह स्पष्ट अभिमत है कि भगवान् महावीर का धम जातिवाद, वर्गवाद और वर्णवाद के शिकजो म कभी बन्दी नही हो सकता। इस अवधारणा के आधार पर ही आचाय भिक्षु ने सार्वभौम धम की घोषणा की। उनकी घोषणा के आधार पर ही हमने अणुव्रत और कमणा जन का अभिक्रम प्रारभ किया। इस अभिक्रम के माध्यम से अन्य जाति के लोग जन धम से जुडकर अपने जीवन को नइ दिशा देने के के लिए कृतसकल्प हो रहे है। कुछ और आचार्यो ने भी इस दृष्टि से काम किया है। अब हमारे सामने समय भी अनुकूल है। सभी जन सम्प्रदायो के चिन्तनशील लोग पुरुषार्थ कर तो जेन धर्म को बहुत व्यापक बनाया जा सकता हे।

जिज्ञासा—महावीर ने जिस भूमि पर अहिसा की अमृत वृष्टि की, उस भूमि पर हिसा का खुला रूप देखकर कुछ लोग पूछ रहे है कि वहा महावीर की अहिसा का वचस्व क्या नहीं है? साम्प्रदायिक उन्माद या उग्रवाद के रूप

म पनप रही हिंसा को निरस्त करने का कोई सरल उपाय है क्या ?

समाधान—जिस भूमि में महापुरुष या वीतराग पुरुष उत्पन्न हुए, वह भूमि वीतरागभूमि बन जाए, यह जरूरी नहीं है। जहां महावीर ने अहिंसा का उपदेश दिया, वहां कभी हिंसा के बादल मंडराए ही नहीं यह अति कल्पना है। समस्याएं हर युग में होती हैं। किसी भी समस्या का समाधान उस क्षेत्र के अतीत में झांकने मात्र से नहीं हो सकता। आज युगीन सन्दर्भो में सही पुरुषार्थ की अपेक्षा है।

बिहार भगवान् महावीर की जन्मभूमि और कर्मभूमि रहा है। वहां व्यापक दृष्टि से काम किया जाए तो परिस्थितियों में बदलाव संभव है। अणुव्रत और प्रेक्षाध्यान के माध्यम से कुछ क्षेत्रों में रचनात्मक काम शुरू हुआ है। वहां हिंसा की समस्या लोक जीवन से भी अधिक राजनीति से प्रेरित है। व्यवस्थित और सही दिशा-दर्शन की अपेक्षा को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। हिंसा में उलझने वाले लोगों का चिन्तन सकारात्मक हो जाए तो वहां पुनः महावीर की अहिंसा को प्रतिष्ठापित किया जा सकता है। इसका सबसे सरल उपाय है पूर्वाग्रह मुक्त होकर पारस्परिक संवाद की स्थापना।

जिज्ञासा—क्या जैन विश्वभारती के माध्यम से जैन धर्म की वैज्ञानिकता को जगजाहिर करने की कोई योजना बनी है?

समाधान—जैन विश्वभारती की गतिविधियों से यह आशा बंधी है कि जैन धर्म को जगजाहिर करने में इस संस्थान की अच्छी भूमिका रह सकती है। जैन विश्वभारती में इस दृष्टि से मुख्यतः दो काम हो रहे हैं। पहला काम है—जैन विश्वभारती, मान्य विश्वविद्यालय में जैनोलॉजी का अध्ययन और रिसर्च। दूसरा काम है अहिंसा प्रशिक्षण की दृष्टि से अन्तर्राष्ट्रीय सेमिनार का आयोजन। सेमिनार में जिन लोगों की सभागिता थी, उनमें अनेक व्यक्ति वैज्ञानिक दृष्टि से सम्पन्न थे। उन लोगों का चिन्तन रहा कि अहिंसा के सिद्धांत को व्यावहारिक बनाने के लिए कोई ऐसी प्रक्रिया अपनाई जाए, जो जन जीवन को नया मोड़ दे। इसके लिए कुछ क्षेत्रों को सघन क्षेत्र बनाकर काम करने की अपेक्षा है।

जिज्ञासा—तत्कालीन परिस्थिति में नारी को समानता का अधिकार देकर

भगवान् महावीर ने एक क्रान्ति की। क्या वर्तमान मे उस क्रान्ति की मशाल का अधिक प्रदीप्त करने की अपेक्षा है?

समाधान--समानता का दर्जा या अधिकार की बात के साथ मेरी सहमति नहीं है। मै कहता हू कि नारी को अपना अधिकार मिले। अपनी स्वतन्त्रता मिले। भगवान् महावीर ने यही काम किया था। जहा बराबरी का प्रश्न आता है, वहा टकराव की स्थिति बनती है। नारी और पुरुष--दोनो ही अपनी सीमाओ को समझे और अपने अधिकारो का उपयोग करे।

वर्तमान परिस्थितियो मे महिला जागरण का दावा किया जा रहा है, पर मुझे ऐसा अनुभव होता है कि अभी सर्वांगीण जागरण की दिशाए उन्मुक्त नहीं हुई है। उनके लिए महिलाओ को अपनी पहचान बनानी होगी। वे अपने अस्तित्व के प्रति जागरूक रहे, प्रवाहपाती न बने, दायित्व को समझे और विवेक के साथ आगे बढे। पुरुष स्वय उनका सहयोग करेगे। अभी तक अस्तित्व-बोध वाली महिलाए कम है, दायित्व-बोध वाली तो और भी कम है। जब तक महिलाए स्वय नहीं जागेगी, उनका सहयोग कौन करेगा? युग के साथ जो कुछ होना है होता रहेगा। गभीर चिन्तन के साथ करणीय कामो को प्राथमिकता दी जाए तो महिलाओ की शक्ति और अधिकार को अधिक सार्थक बनाया जा सकता है।

जिज्ञासा--जैनधर्म मे जन धर्म या विश्व धर्म बनने की क्षमता है, ऐसा आपने बताया। वह कौन सा अभिक्रम है, जिसके द्वारा यह कथन क्रियात्मक रूप ले सकता है

समाधान--जैन धर्म मे जनधर्म बनने के पर्याप्त तत्त्व है। यहा कुछ तत्त्वो का उल्लेख किया जा रहा है--

१ जैन धर्म मानवतावादी है। जाति और रग के आधार पर मनुष्य को विभक्त नहीं करता। एक्का मणुस्सजाई--मनुष्य जाति एक है। इस सिद्धात मे उसका विश्वास है।

२ जैन धर्म ने धर्म के सार्वभौम सिद्धान्तो का प्रतिपादन किया है। अपने सम्प्रदाय से बाहर जो है, उनके लिए भी मोक्ष अथवा परमात्मा बनने का दरवाजा बन्द नहीं किया।

३ जेन धम अनकान्तवादी ह। उसन प्रत्यक धम ओर व्यक्ति क विचारा म सत्य की खाजन की दृष्टि दी हे।

४ जेनधम समन्वयवादी हे। उसने विराधी प्रतीत हाने वाले विचारा म सापेक्ष दृष्टि स समन्वय स्थापित करन का प्रयत्न किया ह। उसका फलित हे—विरोधी विचारो, सामाजिक ओर राजनीतिक प्रणालिया म सहअस्तित्व।

५ जेनधम ने विश्व-मैत्री और विश्व-शाति के लिए अहिसा आर अपरिग्रह के सिद्धान्त का विकास किया। उसम स्वस्थ समाज के निमाण की क्षमता ह।

जातिवाद, साम्प्रदायिक अभिनिवेश, मिथ्याग्रह निरपेक्ष दृष्टि ओर सहअस्तित्व विराधी अवधारणा—ये धम का सकुचित वनात ह। जनधम इन अवधारणाआ स पर रहा हे। उसम विश्व धम वनने की क्षमता हे। किन्तु उसका सम्यक् प्रचार नही हो सका, उसक सिद्धान्त जन जन तक नही पहुचाए जा सक, इसलिए वह विश्वव्यापी अथवा विश्व धम नही बन सका। यदि जेन धम क सिद्धान्त सही रूप म जनता तक पहुच सक तो उनकी व्यापकता म सन्दह नही किया जा सकता।

जिज्ञासा—एक समय म जन धम का प्रभुत्व जनसाधारण से लकर राजा महाराजाआ तक था। आज वह एक वग विशेष म ही सिमटकर क्या रह गया हे?

समाधान—धम के पणता आर नता जितने प्रभावशाली होत हे, धम का प्रभाव उतना ही अधिक बढता ह। उनके साथ कुछ तान्त्रिक ओर मान्त्रिक शक्तिया का भी महत्त्व हाता हे। प्राचीन काल म कुछ प्रभावशाली आचार्यो न चामत्कारिक शक्तिया का उपयोग कर राजाआ पर प्रभाव छाडा। एक राजा जेन वना तो उसके साथ लाखा लाग अनायास ही जन वन गए। राजाओं का युग समाप्त हुआ। नेतृत्व का प्रभाव क्षीण हुआ। वसी स्थिति म किसी व्यक्ति विशेप के नाम स धामिकता का प्रवाह वनने की प्रक्रिया म अवराध आ गया।

उस समय जन लागा के पास, विशेप रूप स दाक्षिणात्य जना क पास

सेवा के कार्यक्रम थे। वे अपने-अपने गांवों कस्बों में सबके लिए भोजन की व्यवस्था रखते थे। औषधियां सुलभ करवाते थे। शिक्षा की सुविधा देते थे, और जैन धर्म स्वीकार करने वालों को सब तरह से अभय बना देते थे। इन चारों कार्यक्रमों का व्यापक प्रभाव था। इस कारण जनता सहज ही जैन धर्म से आकृष्ट हो जाती थी। किसी भी धर्म के सिद्धान्त कितने ही ऊंचे क्यों न हों, जन सेवा के अभाव में वे ग्राह्य नहीं बनते। जब तक देश में जैन लोगों का वर्चस्व स्थापित नहीं होगा और उनके द्वारा जन सेवा के प्रभावी कार्यक्रम नहीं किए जाएंगे, जैनधर्म को आम आदमी तक पहुंचने में कठिनाइयां रहेंगी।

जातिवाद, छुआछूत, साम्प्रदायिकता आदि संकीर्णताएं जैनधर्म में नहीं थीं। युग के प्रवाह में बहकर जैन लोगों ने अपने परिवेश में इनको पोषण का अवसर दिया। जैन धर्म के वर्ग विशेष में सिमटने का यह भी एक प्रमुख कारण है।

जिज्ञासा—ईसाई, इस्लाम आदि धर्मों के अनुयायी एक न्यूनतम आचार-संहिता का पालन करते हैं। क्या जैनों की भी ऐसी कोई आचार संहिता है? नहीं तो आपकी दृष्टि में उसका क्या प्रारूप हो सकता है?

समाधान—सामान्यतः प्रत्येक धर्म की आचार संहिता होती है। जिस धर्म के अनुयायी परम्परागत आचार संहिता में पूरे प्रतिबद्ध रहते हैं, वह पीढ़ी दर-पीढ़ी आगे संक्रांत होकर जीवित रह जाती है। जिस धर्म के अनुयायी उसके प्रति उपेक्षा रखते हैं, वह आचार-संहिता धीरे-धीरे लुप्त होने लगती है। जैन धर्म की भी अपनी न्यूनतम आचार संहिता है। उसके प्रति प्रतिबद्धता का भाव कम होने से आज जैन लोगों की धार्मिक चर्या में एकरूपता नहीं रह पाई है। सलक्ष्य प्रयत्न किया जाए तो उसका एक रूप स्थिर हो सकता है। युगीन परिस्थितियों के सन्दर्भ में उसका संभावित प्रारूप यह हो सकता है—

- दिन में कम से-कम तीन बार नमुक्कार महामंत्र की पांच-पांच आवृत्ति।
- सांवत्सरिक महापर्व की एकता। उस दिन पूरा उपवास सब प्रकार के कारोबार बन्द और सांवत्सरिक 'खमतखामणा' का प्रयोग।

- महावीर जयन्ती (भगवान् महावीर का जन्म दिन), दीपावली (भगवान् महावीर का निवाण दिन), अक्षय तृतीया (भगवान् ऋषभ की तपस्या के पारणा का दिन) आदि जन पर्वो को एक निश्चित आर व्यवस्थित पद्धति से मनाना।
- खान-पान की शुद्धि--जेन शाकाहारी हाता ह। उसके लिए मद्य-मास का सेवन निपिद्ध रहे।
- व्यसन-मुक्त जीवन जीना।
- निरपराध प्राणी की हत्या, आत्महत्या ओर भ्रूण-हत्या नहीं करना।
- क्रूर हिसा-जनित किसी भी वस्तु का उपयाग नहीं करना।
- जातिवाद, छुआछूत जेसी अमानवीय प्रवृत्तियो को प्रश्रय नही दना।

जिज्ञासा--आमतोर पर कहा जाता हे कि जेन धम के अनुसार शरीर को कप्ट दना धम हे। यह वास्तविकता हे या इस सम्बन्ध म आपकी अवधारणा भिन्न हे?

समाधान--शरीर को कप्ट देना धम हे, यह धारणा सही नही हे। जेनधम म अज्ञान-कप्ट का कभी स्वीकृति नही मिली। साधना करत समय किसी प्रकार का कप्ट उपस्थित हो, उसे समभाव के साथ सहन करने का विधान ह। धामिक व्यक्ति धर्म की आराधना करन के लिए कोइ-न-कोइ व्रत स्वीकार करता हे। वह उपवास करे, रात्रिभोजन का परिहार करे, रात्रि म पानी पीने का परित्याग करे या अन्य काई सकल्प ले, उसकी परिपालना म कप्ट की सभावना को अस्वीकार नही किया जा सकता। पर वह कप्ट शरीर को कप्ट देने के लिए नही झेला जाता। मुख्य उद्दश्य हे साधना। साधना काल मे कप्ट आए, उन्हे सहन नही करना, लक्ष्य से विमुख होना ह।

जिज्ञासा--शताब्दी बीत जाने के बाद जयाचाय द्वारा रचित 'चाबीसी' (तीथकर स्तवना) को सावजनीन व्यापकना देन की बात आपके मानस मे क्यो उभरी?

समाधान--चोबीसी तरापथ समाज म काफी व्यापक रही ह। मने अपने युग मे इसको जन-जन के मुह पर थिरकते हुए देखा ह। इसकी सहज-सरल रचनाशली, भक्तिप्रवणता, रागो की रोचकता शब्द सरचना का साप्ठव,

तात्त्विक विवेचन आदि वाना ने मुझ अत्यधिक प्रभाविन किया। म जव-जव इसका सगान करता हू, आत्मविभोर हो जाता हू। व्याख्यान म चाोवीसी के गीन गाता हू तो श्राता तन्मय हो जाते ह। मन एसा अनुभव किया कि चाेवीसी क गभीर अध्ययन ओर स्वाध्याय स अनक लोग वहुश्रुन वन सकते ह। इसी उद्देश्य से चोवीसी का सावजनीन व्यापकता देने का चिन्तन किया।'साद्ध शताब्दी' एक निमित्त वनी। इससे ध्यान केन्द्रिन हो गया।

जिज्ञासा-तीथकरो की स्तवना का उद्देश्य व्यक्ति को वीतरागता तक पहुचाना ह। पर इस सदर्भ म स्तुतिपरक साहित्य को देखकर लगना हे कि उनके अनुयायिया ने वीतरागता से अधिक दविक वभव, चमत्कार एव भोनिक बाह्याडम्बरा को अधिक मूल्यवत्ता दी हे। जयाचाय कृत 'चोवीसी' भी इससे अछूती नही रही ह। इस सदभ मे आपका क्या चिन्तन ह?

समाधान-वीतरागता जेन धम का आदर्श है। वीतराग-वन्दना या स्तवना का मूल उद्देश्य वीतरागता की दिशा मे अग्रसर होना ही हे। भावक्रिया के साथ वीतराग शब्द क अथ का अनुचिन्तन भी वीतराग वनने का एक उपाय हे। वीतराग के स्तुतिपरक साहित्य म दिव्य वेभव, चमत्कार आदि की वात क पीछे दा दृष्टिया हो सकती हे-- वस्तुस्थिति का प्रकाशन करना ओर वीतराग क प्रति आम आदमी मे आकर्पण जगाना। वीतराग दिव्य आर योगज अतिशया स सम्पन्न हाते हे। सव लोग उन अतिशयो को नही जानत। उनकी वोधयात्रा विशद वनाने क लिए वीतराग चरित्र की विलक्षण वात वताइ जाती ह।

मनुष्य भोजन क्या करता हे? भूख मिटाने क लिए। खाद्य पदाथ कसा ही हो, भूख मिट जाएगी। फिर भी उसे चेष्टापूर्वक सरस वनाया जाता ह। सरस आर सुरुचिपूण भोजन के पति सहज आकर्षण रहता हे। इसी प्रकार वीतराग की स्तुति किसी रूप म की जाए, वह कर्म निजरा का हेतु वनगी। उसक प्रति आम आदमी को आकृष्ट करने क लिए दिव्यता के प्रसग जोडे जात ह ता रचना मे सरसता ही आएगी।

कोरा अध्यात्म रूखा होता ह। उसे सरस वनाने के लिए भोनिक ऋद्धिया की चचा चिन्तनपूवक की गइ ह, एसा प्रतीत हाता ह। सत्य शिव सुन्दर--ये तीन तत्त्व ह। सत्य की खोज मनुष्य का लक्ष्य ह। शिव कल्याणकारी हाता

ह। इनके साथ सौन्दर्य की बात जितनी उपयोगी है, उतनी ही उपयोगिता वीतरागता के साथ दैविक सम्पदा की हो सकती है।

जिज्ञासा—श्रीमद् जयाचार्य जैन परम्परा के वर्चस्वी आचार्य थे। वीतरागता और आत्मकर्तृत्व के प्रति उनकी गहरी निष्ठा थी। फिर भी अपनी रचना 'चौवीसी' में उन्होंने स्थान-स्थान पर शरणागति को अभिव्यक्ति दी है। साधना के क्षेत्र में आत्म-कर्तृत्व एवं शरणागति—दोनों का समन्वय कैसे किया जाये?

समाधान—आत्म-कर्तृत्व और शरणागति में विरोध कहां है? जैन परम्परा में अर्हत्, सिद्ध, साधु और धर्म—इस चतुर्विध शरण का महत्त्व है। इसमें शरणागत को क्या मिलता है? लेना-देना कुछ है ही नहीं। यह तो आन्तरिक समर्पण और श्रद्धा की अभिव्यक्ति है। आराध्य और आराधक का अद्वैत है। आराध्य के प्रति समर्पण है, सौदा नहीं। सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु, आरुग्गबोहिलाभं समाहिवरमुत्तमं दितु आदि वाक्यों का मन्त्राक्षर के रूप में स्मरण किया जाता है। यह प्रक्रिया आत्म कर्तृत्व में कहां बाधक बनती है? समर्पण के अभाव में होने वाला कर्तृत्व अहंकार पैदा कर सकता है। मैं सब कुछ कर सकता हूं, फिर मैं किसी की शरण क्यों स्वीकार करूं? यह चिन्तन अभिमान का सूचक है। इससे जुड़ा हुआ कर्तृत्व जीवन को संवारता नहीं, व्यक्ति को दिग्भ्रान्त बनाता है।

जिज्ञासा—जयाचार्य के शासनकाल में नारी को संघीय दृष्टि से बहुमान देने की परम्परा विकसित होते हुए भी उनकी 'चौवीसी' में नारी के लिए राखसणी, वैतरणी, पुतली अशुचि दुर्गन्ध की, जैसे शब्दों का प्रयोग मिलता है। साधना की भूमिका पर ऐसे शब्दों के प्रयोगों के पीछे जयाचार्य का क्या अभिप्राय रहा होगा?

समाधान—चौवीसी में नारी के लिए जिन विशेषणों का प्रयोग है, वह प्रतीकात्मक शैली का नमूना है। मेरे अभिमत से वहां वासना को नारी में रूपायित किया गया है।

इसका दूसरा कारण हो सकता है पुरुषों के लिए एक सुरक्षा कवच का निर्माण। पुरुष महिला के प्रति आकृष्ट होता है, यह उसकी दुर्बलता है। यह दुर्बलता मिटे, उसके मन में आकर्षण न जागे, इस उद्देश्य से महिला को

भयानक या बीभत्स रूप में चित्रित किया गया है।

तीसरा कारण हो सकता है युग का प्रवाह। उस युग में ऐसे शब्दों या प्रतीकों का प्रयोग मान्य रहा होगा। वर्तमान परिवेश में कोई कवि ऐसे प्रयोग करे तो वह विवादास्पद बन सकता है।

जिज्ञासा—जयाचार्य ने 'चौबीसी' में गुणोत्कीर्तन को प्रधानता दी है। क्या आप अनुभव करते हैं कि तत्कालीन प्रचलित परम्पराओं के विभिन्न भक्तिमार्गों का सीधा प्रभाव उन पर पड़ा है?

समाधान—गुणोत्कीर्तना प्रमोदभावना है। साधना के क्षेत्र में मैत्री, प्रमोद, कारुण्य और माध्यस्थ्य—ये चार भावनाएं बहुत उपयोगी हैं। गुणी व्यक्ति के गुणगान करने से निर्जरा होती है। भावों की प्रबलता में तीर्थंकर गोत्र का बंधन भी संभव है। तत्कालीन परम्पराओं या भक्तिमार्गों के प्रभाव को सर्वथा अस्वीकार क्या करें? पर संभावना यही लगती है कि जयाचार्य की इस क्षेत्र में रुचि थी। गुणोत्कीर्तना की विधा उनके द्वारा सहज स्वीकृत थी।

जिज्ञासा—'विघन मिटे समरण किया'—जयाचार्य की आस्था का सूत्र है। माघ शताब्दी तक इस आस्था से धर्मसंघ जुड़ा हुआ है। जिज्ञासा है कि समय की लम्बी दीर्घा में क्या धर्मसंघ के इतिहास में चौबीसी स्तवना द्वारा दैविक उपसर्ग, रोग एवं विघ्न-बाधाओं का शमन करने वाली जैसी चामत्कारिक घटनाओं का संग्रहणीय एवं उल्लेखनीय प्रेरक संकलन हमारे पास है?

समाधान—कष्ट की स्थिति में इष्ट का स्मरण कष्ट का निवारण करता है और मनोबल पुष्ट करता है। 'विघन मिटे समरण किया'—जयाचार्य का यह आस्था सूत्र आज लाखों लोगों का आस्थासूत्र बन चुका है। इस आस्था-सूत्र से उनको त्राण भी मिल रहा है। घटनाओं के संकलन का जहां तक प्रश्न है, यह तो रोजाना की बात है। कितने घटना-प्रसंग संकलित किए जाएंगे। सैकड़ों घटनाएं संकलित हैं भी। इस वैज्ञानिक युग में कुछ लोग ऐसी घटनाओं को अन्धविश्वास कहकर अस्वीकार कर रहे हैं। करें, पर इससे क्या अन्तर आएगा? वैज्ञानिक रिसर्च पदार्थ पर होती है। आत्मा के बारे में अब तक भी विज्ञान मौन है। जो लोग आत्मा एवं परमात्मा को मानते हैं, जिन लोगों की आस्था प्रबल है, वे चौबीसी का स्वाध्याय कर शारीरिक एवं मानसिक संक्लेश से मुक्ति का अनुभव करते हैं। इस अनुभूत सत्य को

अस्वीकार कैसे किया जाएगा?

जिज्ञासा–जयाचार्य की चोवीसी ठेठ राजस्थानी भाषा में रचित है। जो आम आदमी के लिए सहज सुबोध्य नहीं है। आज के सांस्कृतिक एवं भाषायी परिप्रेक्ष्य में क्या आप स्वयं हिन्दी भाषा में चोवीसी की रचना करने की अपेक्षा अनुभव नहीं करते?

समाधान–जहां भावना प्रधान होती है, वहां भाषा गौण हो जाती है। कवित्व या वदुष्य का सम्बन्ध भाषा से नहीं, सृजनशीलता से है। गोस्वामी तुलसीदास की रामायण किस भाषा में है? उसके प्रति जनता का कितना आकर्षण है। भाषा का प्रयोग देश और काल सापेक्ष हो सकता है। पर हमारे धर्मसंघ में राजस्थानी जितनी व्यवहृत होती है, दूसरी भाषाएं नहीं है। मैं स्वयं राजस्थानी में बोलता हूं और लिखता हूं।

दूसरी बात–हमारे संघ की यह विधि रही है कि जिस विषय और विधा में आचार्यों की रचनाएं उपलब्ध हैं, उस विषय और विधा में नई रचना न की जाए। जयाचार्य ने भगवती की जोड़ लिखी। भगवती के १५वें शतक में गोशालक का वर्णन है। आचार्य भिक्षु गोशालक पर व्याख्यान लिख चुके थे। जयाचार्य ने उस पूरे शतक को छोड़ दिया। फिर साधुओं के आग्रह पर १५वें शतक के केवल दोहे लिखे। जोड़ के अन्य भाग की तरह गीतमय रचना नहीं की।

जिज्ञासा–वर्तमान युग में विभिन्न वाद्य-यंत्रों और फिल्मी धुनों के आकर्षण से बंधी युवापीढ़ी पाश्चात्य संस्कृति एवं आधुनिक संगीत की दुनिया में डूबती जा रही है। ऐसे समय में 'चोवीसी' अपनी गुणवत्ता एवं प्रभावकता कैसे सुरक्षित रख सकेगी? क्या इसके संगान को वाद्य-यंत्रों से परिपूरित कर जनता के समक्ष नहीं रखा जा सकता है?

समाधान–वाद्ययंत्रों और फिल्मी धुनों का आकर्षण युवापीढ़ी को कहां ले जा रहा है सब जानते हैं। फिल्मी गीतों में आई अश्लीलता सांस्कृतिक अस्मिता के लिए खतरा है। संगीत और रचना की गुणवत्ता से परिचित लोगों के बीच चोवीसी की गुणवत्ता और प्रभावकता को कभी खतरा नहीं हो सकता।

यांत्रिक उपकरणों के प्रयोग का जहां तक प्रश्न है, मेरी समझ में ये

गीत इतने सुन्दर ह कि इनक लिए अधिक साजवाज की अपेक्षा नहीं हे। गल का सहारा देन के लिए साधारण यत्र का उपयोग एक सीमा तक स्वीकृत हो सकता हे।

जिज्ञासा—गणाधिपति न 'चावीसी' विशपाक क लिए 'जन भारती' मासिक पत्रिका का चुना। महासभा के अधिकारी एव जेन भारती के सम्पादक सभी हर्षोन्फुल्ल ह। हम जानना चाहग कि गुरुदव इस विशेपाक क माध्यम स 'चावीसी क कान स पक्ष का लाकजीवन म उजागर दखना चाहते ह?

समाधान—चावीसी क किसी एक पक्ष विशप को उजागर करना मरा लक्ष्य नहीं ह। म चाहता हू कि इसका समग्रता स पढा जाए आर इसक प्रत्येक तत्त्व का गभीरता स समझा जाए। जेन भारती हमार धमसघ की पत्रिका ह। इसने जन पत्रिकाआ म गरिमापूण स्थान बनाया ह। म चाहता हू कि यह आग अधिक ऊचाई तक पहुचे इसक लिए नए-नए आयाम खालन आवश्यक ह।

जिज्ञासा—क्या वतमान समस्याआ का समाहित करन के लिए इस लघु ग्रन्थ का स्वाध्याय उपयोगी हो सकता ह? एसे कान-स आध्यात्मिक तत्त्व इसम ह, जो व्यक्ति का समष्टि के साथ जोड सके और स्वाथ को परमाथ म बदलन क सहयोगी बन सके।

समाधान—चोवीसी क गीता म एस अनक तत्त्व हे जो वयक्तिक, पारिवारिक ओर सामाजिक समस्याआ को निरस्त कर सकत हे। उनम सहिष्णुता समता, एकाग्रता, समपण, भदविज्ञान अपाय चिन्तन, इन्द्रिय विजय ससार की अनित्यता, प्रमोद भावना आदि तत्त्व उल्लखनीय ह। इन गीता मे यत्र-तत्र ध्यान तत्त्व की चर्चा बहुत ह। यह एक एसा तत्त्व ह जा तनाव, असन्तुलन आदि व्यापक स्तर की समस्याआ का समाधान ह।

जिज्ञासा—यह कृति आपक पूवज आचाय की ह। क्या इसालिए आप इसको इतना महत्त्व दते ह या गुणवत्ता आदि अन्य किसी कारण से? सुना जाता ह कि आनन्दघनजी की 'चोवीसी अध्यात्मरस स आतपात हे। दाना क सबध म आपका क्या विचार हे?

समाधान—जयाचाय हमारे पूवज आचार्य ह। चावीसी उनकी कृति ह। इस कारण इसके प्रति मन मे आकपण ह। पर यही एकमात्र कारण नही ह। जयाचाय की ओर भी अनेक कृतिया ह। प्रत्येक कृति एक-एक से वढकर ह। फिर भी चोवीसी जितनी लोकप्रियता उन्हे नही मिल पाई हे। मेरी दृष्टि से इसम श्रद्धा-भक्ति की प्रधानता आर इसके सगान से हान वाली तन्मयता इसकी सवसे वडी गुणवत्ता ह।

आनन्दघनजी आध्यात्मिक पुरुष थे। उनकी चोवीसी म अध्यात्म की गहराइ हे, यह वात सही हे। पर उतनी गहराइ म हर काइ उतर नहीं सकता। उसे समझना ही टढी खीर हे। मे उस किसी दृष्टि से कम नही मानता। दोनो ग्रन्था की तुलना हम क्या करे? दाना का अपने-अपन स्थान पर महत्त्व ह। जयाचाय की चावीसी मे जा सहज सरलता या सादगी ह वह किसी भी भावुक व्यक्ति को वहुत जल्दी प्रभावित कर सकती ह।

जिज्ञासा—आपन अपने जीवनकाल म ही आचायपद का विसजन कर एक आदश परपरा का सूत्रपात किया ह। अव आप आचायपद के दायित्व स मुक्त ह, आपका कसा महसूस हो रहा ह? आपके नए कायक्रम क्या हाग?

समाधान—मन अपने जीवनकाल म आचायपद का विसजन कर किसी परपरा का सूत्रपात नही किया हे। इस सवध म मे अनक वार कह चुका हू कि यह मरा अपना प्रयोग हे। इसे परपरा न वनाया जाए। आचाय पद का विसजन करने के वाद म अपने आपका हल्का अनुभव कर रहा हू। शासन नियन्ता होने क कारण धमसघ की प्रत्यक गतिविधि पर मरी नजर अवश्य रहती ह। किन्तु मुझ पर जा दायित्व था, उससे मे सवथा मुक्त हू।

मेरे नए कायक्रम की नाभिकीय प्रेरणा हे अध्यात्म। म स्वय अध्यात्म के गभीर प्रयोग करना चाहता हू आर उस व्यापक वनाने के प्रयास मे अपनी शक्ति का नियोजन करना चाहता हू। अध्यात्म ओर विज्ञान एक-दूसरे से अलग रहकर दोनो अपूर्ण हे। मरा प्रयत्न रहेगा कि इनमे सामजस्य स्थापित हा। इस दृष्टि से कही से भी काई कायक्रम चलगा, उसम मरा सक्रिय यागदान रहेगा। मानव-सेवा की वात इससे वढकर ओर क्या हो सकती हे।

अध्ययन अध्यापन मे मेरी सहज रुचि ह। साहित्य सृजन भी मरी रुचि का विषय हे। इस दृष्टि से शेक्षिक एव साहित्यिक प्रवृत्तिया म स्वय सक्रिय

रहता हुआ म साधु-साध्विया को भी इस दिशा मे प्रेरित करता रहूगा।

जिज्ञासा—जैसा कि आपने आचाय पद का विसजन किया है, क्या 'अणुव्रत अनुशास्ता' पद को लेकर भी आपका कोई चितन ह?

समाधान—अणुव्रत अनुशास्ता कोइ पद नहीं ह। न ता किसी न मुझे यह पद दिया ओर न मने इस सबोधन को पद की दृष्टि स स्वीकार ही किया। यह ता एक विशेषण हे। पहल मुझे अणुव्रत आदोलन का प्रवर्तक कहा जाता था। इन वर्षो में अणुव्रत अनुशास्ता शब्द अधिक प्रचलित हा गया। अनुशास्ता का अर्थ ह प्रशिक्षक। अणुव्रत का प्रशिक्षण दना मेरे कायक्रमो का एक अग हे। इसलिए इस शब्द-प्रयाग पर मुझे कोइ आपत्ति नही ह। यदि इसे पद माना जाता हे तो म इसस मुक्त हाने की बात भी साेच सकता हू।

जिज्ञासा—आपने अपने युग मे सप्रदाय की परिभाषा बदल दी आर धम को नए परिवेश म प्रस्तुति दी। आपके नए विचारा स प्रभावित होकर नास्तिक कहलाने वाले लाग भी धम को मानने लगे। क्या आपके अनुयायी यानी तेरापथी श्रावक धम एव सम्प्रदाय के बारे म आपके विचारा स सहमत ह? क्या व मानव धम के अनुयायी होने म गारव का अनुभव करत ह?

समाधान—म इस बात को तेरापथी या गेर तेरापथी के साथ नहीं जोडता। कोइ व्यक्ति तेरापथी हो या नहीं, चितनशील प्रबुद्ध आर अनाग्रही हे तो वह मेरे विचारा स असहमत हा नहीं पाएगा। जहा चितन की खिडकिया बद ह, परपराओ का आग्रह ह और धम के उपासना पक्ष का ही महत्त्व प्राप्त हे वहा धम का असाम्प्रदायिक रूप मान्य नहीं हा पाता। इसलिए जा लाग जन्मजात तेरापथी ह पर धम की अवधारणा म अपने विवेक आर ज्ञान का उपयाग नहीं करत ह उनके बारे म काइ निश्चित राय नहीं दी जा सकती।

इस सदभ म मेरा अभिमत यह ह कि जन्मना धार्मिक व्यक्ति अनुयायी हा सकता ह पर उसके धार्मिक हाने की गारण्टी नहीं ह। किसी धार्मिक कुल म पैदा हाना किसी के हाथ की बात नहीं ह, पर सहज प्राप्त सस्कारा अथवा धार्मिक वातावरण के कारण क्रमश धार्मिक बनन म सुविधा हा सकती ह। मानव धम का जहा तक प्रश्न ह, मेरी दृष्टि म तेरापथ धम अपने आप म मानव धम ही ह। पर इसने सम्प्रदाय का रूप ले लिया या इसे द

दिया गया, कठिनाइ की शुरुआत यहीं से हाती ह। मानव धम के अनुयायी हाने का गोरव सब लोगा को होता ही हे, कहना कठिन ह। पर हाना अवश्य चाहिए।

जिज्ञासा—आपके आचायत्व काल मे तरापथ धमसघ का मानव धम के रूप मे व्यापक क्षितिज मिला। क्या इसकी शक्ति भविष्य में भी नतिक मूल्या क उत्थान एव मानव कल्याण के कायक्रमा म खपती रहगी?

समाधान—निस्सदेह, अणुव्रत मिशन के साथ मरा नाम जुड़ा हुआ हे। इसे दशव्यापी बनान मे तरापथ समाज न पूरी शक्ति और श्रम का नियोजन किया ह। इन वर्षों मे अतराष्ट्रीय जगत् म भी इसक स्वर मुखर हुए ह। भविष्य मे इस काय म समाज की शक्ति नही लगने का कोइ प्रश्न ही नही हे। जिस समाज का प्रबुद्ध वग आर युवा वग अपन दायित्व के प्रति सचेत रहता हे, उसका कोइ काम अधर म नहीं झूल सकता। मुझ ता एसी प्रतीति होती ह कि आने वाले वर्षों म मानव धर्म का क्षितिज ओर अधिक खुलेगा ओर उसस मानव जाति का उपकार होगा।

जिज्ञासा—अणुव्रत आदोलन का भविष्य क्या हागा? इस मिशन क सुदृढ भविष्य के लिए आपन क्या कदम उठाए ह ओर कान-से नए कदम उठान जा रहे ह?

समाधान—मुझे नही लगता कि अणुव्रत आदालन का भविष्य कभी धुधला होगा। यह एक एसा कायक्रम हे, जिस कोई नही चलाएगा तो भी चलेगा। यदि मनुष्यत्ता को जीवित रहना हे तो अणुव्रत जेसे नेतिक अभियान को चलना ही होगा। उसका नाम बदल सकता हे, स्वरूप बदल सकता हे, पर प्राणतत्त्व नहीं बदल सकता।

अणुव्रत का शाब्दिक अथ हे छोटे-छोटे व्रत। इसका तात्पर्याथ हे मानव धम, असाम्प्रदायिक धर्म, मानवीय मूल्य अथवा स्वस्थ जीवन की न्यूनतम आचारसहिता। यदि अणुव्रत जेसा कोई उपक्रम सामने नही रहेगा तो पारलोकिक हित या मोक्ष की बात तो दूर, वतमान जीवन भी जटिल हो जाएगा।

अणुव्रत क भविष्य को सुदृढ बनाने की दृष्टि स एक नइ योजना सामन आइ ह—अणुव्रत परिवार योजना। व्यक्ति तक सीमित अणुव्रत की आस्थाआ

को पूरे परिवार मे सप्रेपित करने की यह एक सरल प्रक्रिया हे। पारिवारिक सस्कारो की तरह अणुव्रत की आस्थाओ को पीढी-दर-पीढी सक्रान्त करने का यह एक साथक उपक्रम हे। परिवार के सब सदस्य एक साथ बेठकर अणुव्रत के बारे मे चचा करग और अणुव्रत परिवार की सदस्यता का अपना सोभाग्य समझगे तो इस याजना के माध्यम स चुपचाप एक क्रांति घटित हो सकेगी।

धमसघ म विकास की नइ दिशाए खोलने की दृष्टि से एक विकास परिषद् गठित की गइ ह। उसकी सात इकाइया हे। उनम एक इकाई अणुव्रत, प्रेक्षाध्यान ओर जीवन विज्ञान की हे। इसके माध्यम से अणुव्रत की भावी योजनाओ का प्रारूप निधारित होगा। अणुव्रत म रुचि रखन वाले कायकर्ता उन योजनाओ की क्रियान्विति के लिए जागरूक रहगे।

जिज्ञासा—आपने अणुव्रत आदोलन का सूत्रपात किया। यह एक ही कायक्रम इतना व्यापक ह कि इसमे शिक्षा, साधना, सेवा एव शाध की अनेक गतिविधियो को जाडा जा सकता था। फिर आपने प्रेक्षाध्यान, जीवन-विज्ञान तथा इन जसी ही अन्य गतिविधियो को प्रारभ क्या किया? इस विकद्रित शक्ति को सलक्ष्य अणुव्रत आदोलन मे ही खपाया जाता तो क्या किसी विशिष्ट उपलब्धि की सभावना नही होती?

समाधान—अणुव्रत एक व्यापक कायक्रम हे, इसमे कोइ दो मत नही ह। इसका सबध मानव मात्र के साथ हे। जाति, सम्प्रदाय, दश, रग ओर लिग के घेरे इसे कभी अपनी सीमा मे घेर नही सके। इसे कद्र म रखकर कोइ भी मानव हितकारी प्रवृत्ति चलाइ जा सकती ह। इस दृष्टि से इसे ही प्रमुखता मिलनी चाहिए थी, पर समसामयिक अपक्षाओ के आधार पर अन्य प्रवृत्तियो को भी गोण नही किया जा सकता। प्रेक्षाध्यान आर जीवन विज्ञान का जहा तक प्रश्न ह, ये दोना तत्त्व अणुव्रत के ही पृष्ठपोपक हे। अणुव्रत एक मानवीय आचार-सहिता हे। पर आचार सहिता का उपदेश देने मात्र स वह आत्मसात् नही हो पाती।

उसे आत्मसात् करने के लिए प्रयोग जरूरी ह। प्रेक्षाध्यान ऐसी प्रायागिक प्रक्रिया हे, जिसक द्वारा मनुष्य को मनुष्यता के साचे म ढाला जा सकता हे। अणुव्रत एक मॉडल ह ओर प्रेक्षाध्यान मनुष्य को उसके अनुरूप

इतने समय तक आपने जिन कामों में अपनी शक्ति लगाई, क्या वह व्यर्थ नहीं जाएगी? जब आप आचार्य पद से मुक्त हो ही चुके हैं तो क्या यह उचित नहीं होता कि आप राजधानी में ही रहकर इन कार्यों को सतत गतिमान रख पाते?

समाधान—हमारे इस बार के दिल्ली प्रवास में दो कार्यों पर ध्यान केंद्रित रहा—लोकतंत्र-शुद्धि और शिक्षा में परिवर्तन। दोनों क्षेत्रों में सोद्देश्य काम किया गया। उसके परिणाम भी सामने आए। लोकतंत्र-शुद्धि कार्यक्रम को गतिशील बनाए रखने के लिए 'अणुव्रत संसदीय मंच' की स्थापना एक आशा जगाती है। वैसे हमारे पास कोई जादू का डंडा तो है नहीं, जो चुटकी बजाते ही काम पूरा करवा दे। कार्य का प्रारंभ एक बात है, उसे निष्पत्ति तक पहुंचने में समय लगता है।

शिक्षा के क्षेत्र में 'जीवन-विज्ञान' के बारे में जिज्ञासा ही नहीं आस्था जाग रही है। सरकारी स्तर पर और व्यक्तिगत स्तर पर भी शिक्षाधिकारियों ने यह निर्णय लिया है कि अध्यापकों को प्रशिक्षित कर जीवन विज्ञान पाठ्यक्रम के अनुसार अध्ययन कराया जाएगा। इस दृष्टि से अध्यापकों के अनेक शिविर आयोजित हुए और कार्य आगे बढ़ने की संभावना बढ़ी है।

कार्य को अधूरा छोड़कर जाने की बात ध्यान देने योग्य अवश्य है, पर कोई भी काम कभी पूरा होता है क्या? भारतीय संस्कृति के आदर्श पुरुषों में राम, कृष्ण, महावीर, बुद्ध, गांधी आदि न जाने कितने विशिष्ट पुरुष हो गए। अपने-अपने युग में सबने काम किया। क्या उनके बाद उस काम की अपेक्षा नहीं रही? जब तक संसार है, काम करने वाले आते रहेंगे, जाते रहेंगे और काम होता रहेगा। आज तक कोई भी महापुरुष ऐसे नहीं हुए, जिन्होंने करणीय कामों को निःशेष कर दिया हो। फिर हमारी क्या औकात है कि हम प्रारंभ किए गए हर कार्य को पूरा कर ही देंगे। फिर भी हमारा लक्ष्य है कि हम देश की राजधानी में रहें या राजस्थान में रहें, काम करते रहेंगे। इस सन्दर्भ में आचार्य हेमचंद्र की विचार-सरणी हमारा मार्गदर्शन कर रही है। उन्होंने लिखा है—

स्तुतावशक्तिस्तव योगिना न किं,
गुणानुरागस्तु ममापि निश्चलः ।
इदं विनिश्चित्य तव स्तवं वदन्,
न बालिशो-ऽप्येष जनोऽपराध्यति॥

प्रभो! आपकी स्तवना कर सके, इतना सामर्थ्य योगियो मे भी नही था। फिर भी आपके प्रति होने वाले गुणानुराग से प्रेरित होकर उन्होने आपकी स्तुति की। वह गुणानुराग मेरे मन मे भी है। यही सोचकर अबोध होने पर भी मै आपकी स्तवना कर रहा हू। ऐसा करके मै अपराध का भागी नही बनूगा।

कलिकाल सर्वज्ञ आचार्य हेमचंद्र का अनुकरण करता हुआ मै यही मानता हू कि जब हमारे विशिष्ट शक्तिसम्पन्न पूर्वज भी अपने शुरू किए हुए काम पूरे नही कर सके तो मै अपने कार्यो की सपूर्ति का मिथ्या अह क्यो करु?

जिज्ञासा—आज देश की जैसी स्थिति है, मूल्य एव आदर्श टूट रहे है, राजनीति दूषित हो रही है, पाश्चात्य मूल्यो का प्रसार सस्कृति को नुकसान पहुचा रहा है, आर्थिक विसगतिया पनप रही है, ऐसे समय मे आप देश को क्या सदेश देना चाहेगे? क्या उजालो का सिमटना जारी रहेगा?

समाधान—अधेरे के बाद उजाला और उजाले के बाद अधेरा, यह प्रकृति का नियम है। कभी कभी उजाले मे अधेरा हो जाता है। सघन कुहासा और मेघघटाए उजाले को लील लेती है। अधेरे मे उजाले की बात भी अज्ञात नही है। विद्युत बल्बो और डेलाइटो का चमत्कार सबके सामने है। इस दृष्टि से विचार करे तो देश की क्या, विश्व की स्थिति भी बहुत अच्छी नही है। आज मानवीय मूल्यो की प्रतिष्ठा कम हुई है। आदर्श खूटी पर टग गए है। राजनीति क्या नीति मात्र दूषित हो गई है। न प्रशासन के पास शुद्ध नीति है, न व्यवसायियो के पास शुद्ध नीति है। और तो क्या धार्मिको की नीति पर भी प्रश्नचिह्न लग चुके है। देश की सस्कृति अपाहिज बनती जा रही है। इसका सबसे बडा कारण है शिक्षा नीति की अस्थिरता। पाश्चात्य पेटर्न पर दी जाने वाली शिक्षा देश की जरूरतो का अनदेखा कर रही है। शिक्षा का उद्देश्य जीवन स्तर को उन्नत बनाना नही, आर्थिक स्टैडर्ड को ऊचा करना

है। मनुष्य के सामने मुख्य लक्ष्य दो ही रह गए है—अर्थ और सत्ता। इनकी प्राप्ति के लिए हर उपाय को वैध माना जा रहा है। इस परिस्थिति में कहीं कोई त्राण नजर नहीं आ रहा है।

हम जानते हैं कि इस दुनिया में जबरदस्त उथल-पुथल मचेगी। प्रलय की स्थिति आएगी। पर वह समय बहुत दूर है। आज मनुष्य ने जैसी स्थितिया पैदा की हैं, वह समय नजदीक आता दिखाई दे रहा है। वह समय इतना भयावह होगा, जिसकी कल्पना से ही रोमांच हो जाता है। ऐसी स्थिति में हमारा संदेश यही है कि यदि मनुष्य सुख शांति से जीना चाहता है तो अपनी जीवनशैली बदले। अणुव्रत पर आधारित जीवनशैली उसे संकट से उबार सकती है। अणुव्रत की शैली मानवीय मूल्यों को प्रतिष्ठित करने की शैली है। आज की सबसे बड़ी अपेक्षा भी यही है। 'संयुक्त राष्ट्र संघ' द्वारा अंतराष्ट्रीय वर्ष के रूप में 'सहिष्णुता वर्ष' की घोषणा मानवीय मूल्यों को तरजीह देने की घोषणा है।

हमारे अणुव्रत मिशन को व्यापक और प्रभावी बनाने में पाक्षिक पत्र 'अणुव्रत' की भी अच्छी भूमिका रही है। इसके माध्यम से जन-जन तक मानवीय मूल्यों की चर्चा पहुंच रही है। आज सही बात कहने और उसे जन-जन तक पहुंचाने की दृष्टि से भी अकाल-सा दिखाई दे रहा है। मीडिया अपने दायित्व से सही अर्थों में प्रतिबद्ध नहीं है। यदि उसके साथ यह प्रतिबद्धता हो जाए तो हमारा काम काफी आसान हो सकता है। अन्य समाचार पत्र और दूरदर्शन अपने पाठकों एवं दर्शकों को क्या परोसता है, इस विवाद में उलझे बिना अणुव्रत अपनी छोटी सीमाओं में भी बड़ा काम कर रहा है। विश्व के किसी भी हिस्से में मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा का कोई भी काम होता हो, उसका प्रकाश जन-जन तक पहुंचता रहे तो सिमटते हुए उजालों को विस्तार दिया जा सकता है।

जिज्ञासा—आज राष्ट्र आर्थिक व्यवस्था के व्यापक उतार-चढ़ाव से जूझ रहा है। आर्थिक विषमता की भीषण स्थितियों को कैसे कम किया जा सकता है?

समाधान—समाज एवं राष्ट्र में आर्थिक विषमताएं कब नहीं थीं? कोई भी समय हो और कोई भी देश, छोटे-बड़े और अमीर गरीब की असमानताएं

प्राय सदा रही है। इसका कारण हे भीतरी आकांक्षाओ का उभार ओर पदार्थो की कमी। आर्थिक विषमताओ को दूर करने के लिए आकाक्षाओ का अल्पीकरण ओर पदार्थो की पर्याप्त उपलब्धि आवश्यक हे। प्रत्येक व्यक्ति आकाक्षाओ के सयम का सिद्धान्त स्वीकार करे तो आर्थिक समानता लायी जा सकती हे।

जिज्ञासा—कश्मीर, पजाब ओर असम को आतकवाद से मुक्त कराने के लिए अहिसक समाधान क्या हो सकता हे?

समाधान—आतकवाद का जहा तक सवाल हे वह पजाब, असम, कश्मीर तक या एक प्रदेश तक सीमित नही हे। पूरे विश्व मे यत्र-तत्र वह सिर उठा रहा हे। उसके प्रतिरोध मे व्यापक अभियान की जरूरत हे। एक लक्ष्यबद्ध कार्यक्रम चलाना होगा। इसके लिए बलिदानी मनोवृत्ति वाले उत्साही लोग हो और उनका नतृत्व महात्मा गाधी जेसे व्यक्ति के हाथ मे हो तो आज भी सभावनाओ का सूरज अस्त नही हुआ हे। एक ओर निष्ठाशील, निष्काम, तटस्थ ओर प्रभावशाली व्यक्ति के नेतृत्व मे अहिसक प्रयोग हो, दूसरी ओर आतकवाद से जुडे लोगो के हृदय-परिवर्तन का प्रयास हो तो यह प्रयोग एक असाधारण प्रयोग हो सकता हे। शर्त एक ही हे कि इस कार्यक्रम से जुडने वाले सब लोगो की अहिसा मे गहरी आस्था हो ओर उनका उचित प्रशिक्षण हो।

जिज्ञासा—हिसा क प्रतिकार के लिए वेचारिक आर भावनात्मक साधन के अलावा क्या किसी अन्य क्रियात्मक साधन का उपयोग किया जा सकता हे? आपके पास अहिसक सेनिको की बडी सेना ह, क्या इसका उपयोग इस दिशा म नही किया जा सकता ?

समाधान—हिसा का काइ निश्चित चेहरा नही हे। वह अनेक रूपो मे राष्ट्र के लिए चुनोती बन रही हे। हमने व्यक्तिश अनक लोगा को समझाने और उनका हृदय परिवतन करने के प्रयाग किय ह। अनेक डाकुओ ने अपनी जीवन की दिशा बदली हे। जेल के सींखचा मे बन्द अपराधिया का मन बदला हे। हजारो लोग व्यसन मुक्त हुए हे। इस काम के लिए हमने स्वय कष्ट सहकर भी अनवरत पदयात्राओ का प्रयाग किया हे। आज के अत्यधिक सुविधावादी युग मे ऐसा किया जा रहा हे। इससे आगे कोई प्रयोग

नहीं हो सकते, यह बात नहीं है।

आतंकवाद की समस्या कोई छोटी समस्या नहीं है। इस समस्या का मूलभूत उद्देश्य जब तक पकड़ में नहीं आता है, तब तक समाधान की गहराई में उतरने की बात नहीं बन सकती। पंजाब समस्या का मूल ध्यान में आया तो सन्त लोंगोवाल से समझौता हुआ। उलझी हुई गुत्थियों के बीच एक रास्ता बना। यदि लोंगोवाल रहते तो वह रास्ता और अधिक प्रशस्त हो सकता था। पर उनकी हत्या ने एक नयी समस्या खड़ी कर दी।

हर एक समस्या का समाधान हो ही जाएगा, ऐसी गर्वोक्ति कोई नहीं कर सकता। प्रयास करना हमारा काम है। पंजाब जैसे अशान्त प्रदेश में आज भी हमारे साधु-साध्वियों के अनेक वर्ग विहार कर रहे हैं, वहां के लोगों में अहिंसा एवं शांति का प्रचार कर रहे हैं, प्रेक्षाध्यान के द्वारा हृदय-परिवर्तन की दिशा में भी प्रयोग चल रहे हैं।

जिज्ञासा—आपने प्रेक्षाध्यान द्वारा हृदय-परिवर्तन की बात कही। आतंकवाद जैसी जटिल समस्या का हल क्या हृदय परिवर्तन हो पाएगा?

समाधान—किसी भी समस्या को अन्तहीन या असाध्य मानकर हाथ पर हाथ धर बैठे रहना अच्छी बात नहीं है। जहां तक आतंकवादियों के हृदय-परिवर्तन का प्रश्न है, यह एक उपाय है। हृदय परिवर्तन का प्रयोग भी तभी सफल हो पाता है जब सामने वाला व्यक्ति स्वयं बदलना चाहे। बदलाव में व्यक्ति आस्था हो और प्रयोग करने वाले की संकल्पशक्ति भी दृढ़ हो तो सफलता असंदिग्ध है। पर दोनों में से एक पक्ष भी दुर्बल हो जाए तो सफलता दूर खिसक जाती है। हृदय परिवर्तन की बात करने वाले के पास कोई ऐसा जादू नहीं होता जो हाथोंहाथ व्यक्ति को बदल दे।

जिज्ञासा—वर्तमान परिस्थितियों में आपको भारत का भविष्य कैसा लगता है? लोगों की लोकतंत्र से आस्था डिगने लगी है। वैकल्पिक समाधान क्या हो सकता है?

समाधान—मैं न तो भविष्यवक्ता हूं और न बनना चाहता हूं। किन्तु वस्तुस्थिति का व्याख्याता बनने में कोई कठिनाई नहीं है। लोगों की लोकतंत्र से आस्था उठ गई है। इस वाक्य को मैं एकांगी मानता हूं। जो चल रहा है, वह सही लोकतंत्र है क्या? यदि नहीं तो उस पर आस्था टिकेगी कैसे? व्यक्ति

जिस विचारधारा या सिद्धान्त मे आस्था रखकर चलता है, वह सही न हो तो आस्था कब तक टिकेगी। लोकतन्त्र के प्रति अनास्था का स्वर उठा है, इसमे गलती लोगो की नहीं, लोकतन्त्र को चलाने वालो की है। मेरे अभिमत से लोकतन्त्र का विकल्प लोकतन्त्र ही है, यदि वह सही और सक्षम है।

जिज्ञासा–आज राष्ट्र जिन विषम परिस्थितियो का सामना कर रहा है, उनमे अणुव्रत की क्या भूमिका हो सकती है?

समाधान–नैतिकता, चरित्र और अध्यात्म को भुला देने से राष्ट्र को विकट परिस्थितियो का सामना करना पडता है। राष्ट्र की जनता नैतिक मूल्यो के प्रति आस्थाशील रहे तो उलझने बढ नही सकती। अणुव्रत जन जन के हृदय मे निष्ठा का दीप जलाना चाहता है। किसी समस्या का तात्कालिक समाधान खोजने मे वह विश्वास नहीं करता। उसका विश्वास मूल को पकडने मे है। वह देश मे एक मात्र ऐसा आन्दोलन है, जो व्यापक रूप से मानवीय मूल्यो पर बल देता है और उनके प्रति निष्ठा पैदा करता है।

जिज्ञासा–धर्म का राजनीतिकरण करके राजनीतिज्ञ सत्ता प्राप्ति के लिए आम जनता की धर्मभावना का जिस तरह उपयोग कर रहे है, उससे जनता को कैसे बचाया जाए?

समाधान–इस प्रसग मे केवल राजनेता ही नहीं, धर्मनेता भी दोषी है। वे धर्म का राजनीतिकरण होने क्यो देते है? राजनेताओ के अपने स्वार्थ हो सकते है। धर्मनेता तो स्वार्थी मनोवृत्ति से ऊपर उठे। वे इस प्रवाह मे क्यो बहे? धर्मनेताओ का यह दायित्व है कि वे राजनेताओ को धर्म पर हावी न होने दे। वे राजनीति का एक सीमा तक उपयोग भले ही करे, किन्तु राजनीतिमय क्यो बने? आश्चर्य तो तब होता है जब धर्मनेता भी राजनीति खेलने लगते है। राजनीति पर धर्म का अकुश रहे, यह बात समझ मे आने जैसी है। पर धर्म राजनीति के इशारे पर चले, यह विडबना है।

जिज्ञासा–किसी समय सोने की चिडिया कहलाने वाला हमारा देश आजादी मिलने के चार दशक बाद भी बदहाली भोग रहा है, दुनिया के कगाल देशो मे गिना जाता है। क्या बचाव का कोई रास्ता नहीं है?

समाधान–किसी समय भारत समृद्ध था, इसका अर्थ यह तो नही कि

यहा की मुगिया सोन क अडे दती थीं। मेरी अपनी धारणा यह ह कि उस समय देश की जनता सीधा-सादा जीवन जीती थी। मोटा खाना, मोटा पहनना, श्रम, सयम और सादगी का जीवन, कृत्रिम आवश्यकताओ की कमी, चरित्र के प्रति निष्ठा, भाइचार की भावना ओर मन का सतोप—ये सब एसी वृत्तिया ह, जो व्यक्ति या राष्ट्र को समृद्धि के शिखर तक ले जा सकती ह।

दूसरी वात, समृद्धि या असमृद्धि कोइ स्थाई स्थितिया नहीं ह। इनमे वदलाव आता रहता है। जनसख्या की वृद्धि, सस्कृति की विस्मृति विलासिता, सुविधाभोगी मनोवृत्ति, इमानदारी का अभाव, कृत्रिम आवश्यकताओ का विस्तार आदि कुछ एसे तत्त्व ह, जो समृद्धि के प्रत्यक्ष शत्रु हे। नेतृत्व, सभा प्रणाली, व्यापारिक स्थितिया ओर टेक्नोलॉजी आदि का भी इसमें हाथ रहता हे।

हम तो इस सवध म इतना ही कह सकते ह कि साइन्स ओर टेक्नालॉजी के साथ-साथ नीति, चरित्र, सयम और प्रामाणिकता के सस्कार पुष्ट हाते रहे तो वदहाली भोगने की नोवत नही आएगी।

जिज्ञासा—हमारे यहा जो भीपण आर्थिक विपमता ह, उसे केसे कम किया जाए?

समाधान—समाज म आर्थिक विपमताए कव कहा नही थी? काइ भी समय हो ओर कोई भी देश, छाटे-वडे, अमीर-गरीव आदि वर्गो का अस्तित्व प्राय सदा रहा हे। इसका कारण हे भीतरी आकाक्षाओ का उभार और पदार्थो की कमी। आकाक्षाए कम हो ओर पदार्थ पर्याप्त हो तो व्यवस्था म समता का प्रयोग किया जा सकता ह। किन्तु सामाजिक परिवेश मे यह वहुत कठिन ह। समाज का प्रत्येक व्यक्ति आकाक्षाओ के सयम का सिद्धात स्वीकार करे तो एक सीमा तक विपमताओ को कम किया जा सकता हे।

जिज्ञासा—वर्तमान शिक्षा-व्यवस्था की कमजोरिया एव नइ पीढी की भूमिका के वारे म आपका क्या मत हे?

समाधान—प्रचलित शिक्षा पद्धति को गलत मानकर उसके परिवर्तन या सुधार पर अव तक वल दिया जाता रहा हे। पर हमारे अभिमत म शिक्षा पद्धति गलत नही वल्कि अधूरी हे। जव तक सयम अहिसा, सहिष्णुता और भावनात्मक विकास की वात शिक्षा के साथ नही जुडेगी, तव तक वौद्धिकता

बढती रहेगी, पर मानवीय मूल्यो का विकास नही होगा।

नइ पीढी यान्त्रिक बने, यह युग की अपेक्षा ह। पर वह सस्कारी बने, यह सबसे पहली अपेक्षा ह। इसके लिए अध्यापका ओर अभिभावको को भी जागरूक रहना होगा। इस पीढी को सतुलित विकास का अवसर देने के लिए 'जीवन विज्ञान' का पाठ्यक्रम तेयार किया गया हे। इसमे सेद्धातिक आर प्रायोगिक दोनो दृष्टियो से विद्यार्थी को मानवीय मूल्या का प्रशिक्षण देने की व्यवस्था हे। इस पाठ्यक्रम स निकलने वाले विद्यार्थी शिक्षा के क्षेत्र मे उदाहरण वन सकते ह।

जिज्ञासा–स्त्रियो को पिछडेपन के अधकार से निकालने का क्या रास्ता हे ?

समाधान–इसके लिए स्वय स्त्रियो को आगे आना होगा। पुरुष भला क्या चाहेगा कि स्त्रिया आगे आए? स्त्रिया स्वय सोचे, समझे, योजना बनाए आर पुरुषार्थ करे। जहा स्त्रिया जागी हे, उन्हे कोई भी शक्ति रोक नही पाई हे। हमारे समाज मे साध्वियो का, स्त्रियो का जागरण एक मिसाल के रूप मे हे। पर यह भी तभी सभव हुआ हे, जब उन्हाने स्वय अगडाइ ली। उनका कर्तृव्य आर हमारा प्रोत्साहन–दाना के योग से एक अच्छा क्रम बन गया।

स्त्रिया उन्नति करे, यह अभीष्ट हे। पर वे पिछडेपन क अधकूप से निकलकर फशनपरस्ती की खाइ मे न गिर पडे, इसके लिए भी उन्हे सतत जागरूक रहना होगा। अन्यथा उनका जागरण खतरो से खाली नही रह पाएगा।

जिज्ञासा–आदमी आज इतना क्रूर ओर हिसक क्यो हो गया हे? क्या उसके स्वभाव को बदला नहीं जा सकता?

समाधान–बदलाव की सभावना न हा ता उपदेश, प्रशिक्षण ओर प्रयोग का कोई अथ ही नही रहे। आदमी को बदला जा सकता हे, इसी विश्वास के आधार पर तो चाग आर प्रयत्न हो रहे ह। इन प्रयत्नो का काइ प्रभाव नहीं हे, यह बात भी नही हे।

रही क्रूरता ओर हिसा की बात। लोगा को लगता हे कि य वतमान युग की दन हे। अतीत पर नजर डाल ओर देखे कि किस युग का

आदमी क्रूर नहीं था ? हिंसक नहीं था? मात्रा में कमी बेशी होती रहती है। अहिंसा की तरह हिंसा और क्रूरता भी एक सचाई है, शाश्वत सचाई है। जब इस वृत्ति को उत्तेजना अधिक मिलती है, वह उभर जाती है, नये-नये रूप धारण कर लेती है। आज पूरा वातावरण ही ऐसा हो रहा है। समाचार पत्र, रेडियो, टी वी आदि संचार-साधन दिन-रात इसी के समाचार देते हैं।

एक बार के लिए ही सही, ऐसे समाचारों पर पूरी तरह से प्रतिबंध लगाकर देखा जाए कि उसका क्या परिणाम आता है। जब तक मनुष्य का केवल बौद्धिक विकास होता रहेगा और उसे संयम, सहिष्णुता आदि मूल्यों को जीने का रास्ता नहीं मिलेगा, समस्या का समाधान नहीं हो पाएगा।

जिज्ञासा–कहा जा रहा है कि न्याय न मिलने पर जगह-जगह लोग बन्दूक की भाषा में बात करने लगे हैं। लोगों को समय पर न्याय दिलवाने की क्या व्यवस्था हो?

समाधान–न्याय न मिलना समस्या का एक पक्ष हो सकता है। पर देखना यह है कि न्याय का अर्थ क्या है? इतने बड़े देश में सबकी मनोकामनाएं पूर्ण हो जाएं यह संभव नहीं लगता। फिर किसे कितना न्याय मिला, इसका निर्णय कौन करेगा?

एक आदमी ने खुदा से न्याय की मांग की। मूसा आया और बोला–न्याय नहीं, खुदा की बंदगी मांगो।' वह नहीं माना और कहता रहा–'मुझे तो न्याय चाहिए।' इस पर मूसा बोला–'देखो तुम शिला के ऊपर बैठे हो और शिला तुम्हारे नीचे है। न्याय चाहते हो तो तुम नीचे हो जाओ और शिला तुम्हारे ऊपर आ जाएगी।' यह बात सुन वह घबरा गया और उसने मूसा की मिन्नत करते हुए कहा–'मुझे कुछ नहीं चाहिए। मैं जहां हूं वहीं रहने दें।'

न्याय के लिए न्यायालय के द्वार पर दस्तक दी जा सकती है। पर बंदूक की भाषा बोलने वाले क्या स्वयं अन्याय के पथ पर नहीं बढ़ते हैं? न्याय की मांग से पहले उसके सभी पहलुओं पर चिंतन अपेक्षित है।

जिज्ञासा–पूर्ण जीवन किस तरह जिया जाता हे?

समाधान–शायद आप यह सवाल सामाजिक व्यक्ति के बार म पूछ रहे ह। समाज म रहने वाला व्यक्ति अगर अणुव्रती जीवन जीए तो वह अपने आप मे पूर्ण जीवन हो सकता हे। अणुव्रती जीवन दो अतिया के बीच का जीवन ह। एक आर अध्यात्म की पराकाष्ठा–सपूण अहिसा ओर सपूर्ण अपरिग्रह का जीवन। दूसरी ओर भागवाद की पराकाष्ठा–बिना प्रयोजन हिसा ओर आवश्यकता से अधिक सग्रह। प्रथम काटि का जीवन निश्चय ही सब लाग जी नही सकते। दूसरी कोटि का जीवन किसी क लिए भी काम्य नही हो सकता। अणुव्रती न तो पूण रूप स अहिसक होता ह आर न क्रूर हत्यारा। सद्‌गृहस्थ का जसा जीवन होना चाहिए वेसे आदश जीवन का मॉडल होता हे अणुव्रती जीवन। ऐसा जीवन जीया जा सकता ह आर यह सबके लिए अच्छा हे।

जिज्ञासा–राष्ट्रीय एकता परिषद म आपका मनोनीत किया गया ह। राष्ट्रीय एकता आपकी राय मे केस सधेगी?

समाधान–राष्ट्रीय एकता सापक्ष शब्द हे। अनक राज्या, शहरा, गावो म बटा हुआ राष्ट्र किसी अपक्षा से ही एक हो सकता ह। जब राष्ट्र म भेद हे ओर उनकी उपयोगिना हे ता निरपेक्ष एकता न तो सध सकती हे ओर न वह उपयोगी होगी। सापेक्ष एकता का पहला बिदु ह देश के नागरिको की कत्तव्यनिष्ठा। वे अपने विचारो, कार्यो ओर व्यवहारो से किसी का अहित न कर। किसी का हित हो सके या नही कम-से-कम अहितकारी प्रवृत्तियो को हतात्साह कर दिया जाए, यह भी एक बडा काम हे।

राष्ट्रीय एकता के विघटन का बीज देश क विभाजन के साथ ही बा दिया गया था। विगत कुछ दशका से वह अधिक जोर पकड रहा हे। सत्ता लिप्सा, स्वार्थी मनोभाव अप्रामाणिकता, एकागी चितन आदि कुछ एसी प्रवृत्तिया ह, जो राष्ट्रीय एकता के प्रासाद की बुनियाद का हिलाने वाली ह। साप्रदायिकता, जातिवाद, भाषावाद, अलगाववाद आदि की मानसिकता भी एकता म बाधक हे।

जा लाग एकता मे रस लेते ह, उनका दायित्व हे कि वे विघटनकारी प्रवृत्तिया स स्वय बचे तथा आरा को बचाए। अन्यथा उनकी आकाक्षा मात्र

शाब्दिक बनकर रह जाएगी। आश्चय तो इस बात का है कि राष्ट्रीय एकता के प्रश्न पर भी पार्टी पॉलिटिक्स सामने आ रही हे। पर यह प्रश्न न तो राजनीति का ह ओर न धर्मनीति का है। सभी नीतियो के लोग एक साथ बेठे, व्यक्तिगत स्वार्थ से ऊपर उठकर चितन कर ओर उसकी क्रियान्विति मे विलब न करे तो ही कोइ परिणाम आ सकता हे।

जिज्ञासा–पजाब, कश्मीर ओर असम के मुद्दा पर राष्ट्रीय एकता परिषद की कोई बेठक नही हुई, पर राम मन्दिर ओर बाबरी मस्जिद विवाद पर उसकी बेठक आयोजित की गई। क्या वही देश की सबसे महत्त्वपूर्ण समस्या हे?

समाधान–समस्याए सभी महत्त्वपूर्ण हाती हे। पर कोइ तात्कालिक समस्या उभरकर सामने आ जाए तो उस पर तत्काल चितन करना अनिवाय हो जाता हे। अन्यथा उसकी जड ओर गहरी हा जाती ह। समय पर चितन हुआ, बढता विप्लव विराम पा गया। किसी एक समस्या के बारे म सोचा जाता हे, इसका अर्थ यह नही हाता कि वही सबसे महत्त्वपूर्ण ह। प्रत्यक समस्या चितन मागती हे। द्रव्य, क्षेत्र, समय आर परिस्थिति के अनुरूप उस पर चितन होना ही चाहिए।

जिज्ञासा–आने वाला कल हमारे देश क लिए ओर पृथ्वी के लिए केसा हागा?

समाधान–हम भविष्यवक्ता नही हे। भविष्यवाणिया मे हमारा विश्वास भी नही हे। फिर भी हम इतना कह सकते हे कि 'नीति के पीछे बरकत होती हे' यह कहावत असत्य नहीं हे। मनुष्य का लक्ष्य सही हा, लक्ष्य प्राप्ति के साधन सही हा, उन साधनो के प्रति गहरी निष्ठा हो ओर हो प्रगाढ पुरुषार्थ। भारत हो या विश्व का कोई भी अन्य देश, यदि उसम इस चतुष्टयी की सम्यक् आराधना हो तो भविष्य के लिए उसे चितित हाने की आवश्यकता नही हे। यदि उसकी सम्यक् आराधना नही होती हे तो चितित होन मात्र से काइ निष्पत्ति आने वाली नही हे।